कृष्णदास संस्कृत सीरीज २५८

पुण्यार्क-
वनस्पतितन्त्रम्

लेखक
कमलेश पुण्यार्क

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
२५८
***

पुण्यार्कवनस्पतितन्त्रम्

लेखक
कमलेश पुण्यार्क

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी
वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि०सं० २०७३, सन् २०१६

ISBN : 978-81-218-0377-9

सूचना—तान्त्रिक अनुष्ठानों के प्रयोग हेतु सुयोग्य गुरु की अत्यन्त आवश्यकता होती है। अत: पाठकों के लिए ध्यातव्य है कि केवल पुस्तक के आधार पर किये गये तान्त्रिक अनुष्ठानों के विपरीत परिणाम हेतु लेखक, प्रकाशक एवं तत्सम्बन्धी कोई भी व्यक्ति किसी भी प्रकार से जिम्मेदार नहीं होगा।

© चौखम्बा कृष्णदास अकादमी
के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० ११२८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : (०५४२) २३३३४५८ P.P. & २३३५०२०

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
(आफिस) (०५४२) २३३३४५८
(आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice01@gmail.com
web-site : www.chowkhambasanskritseries.com

ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान
हरिद्वार

पुण्यार्कवनस्पतितन्त्रम्

श्रीयोगेश्वरआश्रम का षष्टम् पुष्प

सादर समर्पण

अध्यात्मनीय
विभाग

—५१/८०५

श्री धनवन्तर्यैनमः

वनस्पतितन्त्रम्

वि षय प्र वे श

तन्त्र और आयुर्वेद का आपसी सम्बन्ध बड़ा गहन है।वैसे आयुर्वेदज्ञ होने के लिए तान्त्रिक होना आवश्यक नहीं,किन्तु तान्त्रिक होने के लिए आयुर्वेदज्ञ होना जरूरी सा है । विशेष नहीं तो कम से कम आयुर्वेदिक द्रव्य की सम्यक् पहचान और तत् द्रव्यगुणों का किंचित ज्ञान । द्रव्य,गुण,कर्म, प्रभाव,विपाक,और आमयिक प्रयोगों का भी ज्ञान हो जाय,फिर क्या कहना । आयुर्वेद के पदार्थ-विज्ञान और इसके गूढ़ रहस्यों को भी यदि आत्मसात कर लिया जाय,तो सोने में सुगन्ध आ जाय। प्रकृति में प्राप्त प्रत्येक पदार्थ का गुण वैशिष्ट्य है । ध्यातव्य है कि त्रिगुणात्मक सृष्टि में दृश्य-अदृश्य जो भी है- सब पंचभूतात्मक है,भले ही मात्रा वैशम्य हो।क्यों कि ये मात्रा-वैशम्य ही पदार्थ के रूप-गुण वैशम्य का मूल कारण है ।

आधि वा व्याधि(मानसिक और शारीरिक) यानी उभय प्रकार की विकृति का मूल कारण है- निर्धारित पंचभूतों में यत्किंचित कारणों से व्यवधान वा विपर्यय की उपस्थिति; और इससे मुक्ति का एक मात्र उपाय है- व्यवधान वा विपर्यय का विपरीतिकरण।सीधे तौर पर कहें, तो कह सकते हैं कि तत्वों के असंतुलन को येन-केन-प्रकारेण पूर्व रूप में ला देना ही निवारण,अथवा रोग-मुक्ति है।

आयुर्वेद में स्वस्थ की परिभाषा है- *समदोषः समाग्निश्च, समधातुमलक्रियः। प्रसन्नात्मेन्द्रिय मनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते।।* (सू.सू.१/२/४४) (त्रिदोष,पंचमाग्नि,सप्तधातु,मलादि उत्सर्जन का संतुलन तथा आत्मा,इन्द्रिय और मन की प्रसन्नता ही पूर्ण स्वास्थ्य का लक्षण है।)

४०७/४८

मात्र शरीर के स्वस्थ रहने से ही हमारा काम नहीं चल सकता।जैसा कि कहा गया है- आदि सुख निरोगी काया, दूजा सुख घर होवे माया,तीजा सुख सुशीला नारी,चौथा सुख सुत आज्ञाकारी...।

उक्त सुखों की प्राप्ति और मनोनुकूलता के लिए हमारे शुभेच्छु दूरदर्शी मनीषियों ने अनेक कल्याणकारी उपाय सुझायें हैं।उन्हीं में एक है- आयुर्वेदीय द्रव्यों(स्थावर-जांगम) का तन्त्रात्मक प्रयोग। वस्तुतः ये चमत्कारिक प्रयोग हैं।किन्तु सदा इस बात का ध्यान रखना है कि संतों के इस कृपा-प्रसाद का हम सिर्फ लोक कल्याणकारी प्रयोग ही करें। लोभ,मोह, काम,क्रोध,स्वार्थ से अन्धे होकर अकल्याणकारी प्रयोग न कर बैठें।क्यों कि अन्ततः यह तन्त्र है,जो अतिशय शक्ति शाली है।सुपरिणाम हैं, तो दुष्परिणाम भी पीछे छिपा हुआ है। अपने इस लघुसंग्रह में कुछ ऐसे ही विशिष्ट लोक-कल्याणकारी प्रयोगों की चर्चा करेगें। इनमें कुछ स्वानुभूत हैं,कुछ गुरू प्रसाद,कुछ परानुभूत-स्वदृश्य मात्र।

इनका प्रयोग आपके लिए उपयोगी और कल्याणकारी हो तो मैं अपना सौभाग्य समझूँ।प्रयोग विधि यथासम्भव स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।शास्त्र की मर्यादा का विचार रखते हुए कुछ बातें इशारे में कही गयी हैं।हमारे विद्वान बन्धु सहजता से उन गुत्थियों को खोल लेंगे- ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।मेरी कुछ बातें उन्हें बचकानी भी लगेंगी। किन्तु विलकुल नये लोगों को इससे थोड़ी आपत्ति और परेशानी भी हो सकती है।वे चाहें तो निसंकोच मुझसे सम्पर्क कर सकते हैं।किंचित पात्रता का विचार तो करना ही पड़ेगा। वैसे भी बच्चे के हाथ तोपखाने की चाभी सौंपना न बुद्धि-सम्मत है और न न्याय-संगत।

प्रसंगवश,यह भी स्पष्ट कर दूँ कि मैं तन्त्र–गुरू होने की क्षमता नहीं रखता। गुरू बनने की लालसा भी नहीं है।आदर और स्नेहवश लोगों ने गुरूजी कहना प्रारम्भ कर दिया, और अब तो यह उपनाम सा हो गया है।फिर भी एक वरिष्ठ मित्र के नाते स्नेहासिक्त होकर जिज्ञासुओं का यथोचित मार्गदर्शन करने को अहर्निश प्रस्तुत और तत्पर हूँ।

और अन्त में- औषधीश सुधान्शु से प्रार्थना करता हूँ कि वे हम पर, और इस संग्रह के प्रयोग कर्ताओं पर अपनी कृपा सदा बनाये रखें।माँ वागीश्वरी और विघ्नेश्वर गणपति से प्रार्थी हूँ कि वे सदा सद्बुद्धि प्रदान करें।

मार्गशीर्ष,शुक्ल,प्रतिपदा,

भौमे,विक्रमाब्द२०७०

निवेदक/संग्राहक – कमलेश पुण्यार्क

विषयानुक्रममिका

पृ. सं. ९. प्रथम परिच्छेद- आवश्यक सुझाव-संकेत-निर्देश

पृ.सं. ११. द्वितीय परिच्छेद- प्रयोग-पूर्व की तैयारी

पृ. सं.१९. तृतीय परिच्छेद- विविध वनस्पतियों का तन्त्रात्मक प्रयोग—

१. श्वेतार्क(मन्दार)— (क) स्वर्ण निर्माण

(ख) श्वेतार्क के अन्य प्रयोग

२.वाँदाःएक परजीवी वनस्पति –पृ.३२

३.विभिन्न बाँदाओं के प्रयोगः- पृ.३३

[वदरी,वहुआर,शिरीष,वरगद,पीपल,गूलर,हरसिंगार,थूहर,आम,कुश,अनार, कपित्थ,सम्भालू,विदारी,कपास, रोहित, शाखोट,वच,विल्व,अशोक, निम्ब, आंवला,मुलहठी]

४.बाँदा तिलकःएक विशिष्ट प्रयोग -पृ.६६

५.रुद्राक्ष

६.हाथाजोड़ी

७.अंकोल

८.एकाक्षी नारियल

९.हरिद्रा

१०.नागकेशर

११.कमल

१२.लवंग

१३.कपूर

१४.नागदमनी

१५.विजया

१६.सहदेई

१७.अपामार्ग

१८.गोरखमुण्डी

१९.बहेरा,

२०.लक्ष्मणा

२१.शिवलिंगी

पृ.सं. १४२. चतुर्थ परिच्छेद- अन्य- स्थावर-जांगम द्रव्यों का तान्त्रिक प्रयोगः-

१.शंख २.गोरोचन .३.श्रृगालश्रृंगी ४. कस्तूरी
५. मयूरपिच्छ, ६.साहीकंटक ७. हरताल
८. फिटकिरी(कांक्षी) ९. सिन्दूर

पृ. सं. १७६. पञ्चम् परिच्छेद --नक्षत्र-राश्यादि वनस्पति-सारणी

पृ. सं.१८१. षष्ठम् परिच्छेद --- सप्तौषधि-सर्वौषधि-शतौषधि सूची

पृ. सं.१८८. सप्तम् परिच्छेद ----सर्वाभावे शतावरी

पृ. सं.१९०. अष्टम् परिच्छेद ----उपसंहार

—चं९१८०५

प्रथम परिच्छेद–आवश्यक निर्देश

तन्त्र के प्रयोगकर्ता को कुछ अत्यावश्यक बातों का ध्यान रखना चाहिए—

Ψ १.तन्त्र पराम्बा की बिभूति है,अतः परमश्रद्धेय है।

Ψ २.श्रद्धा,विश्वास और लगन ही किसी भी साधना के अथ और इति हैं।

Ψ ३.तन्त्र का प्रयोग आत्मकल्याण और लोककल्याण की भावना से ही किया जाय।

Ψ ४.उतावलेपन में,आवेश में,और "प्रयोग करने के लिए" प्रयोग न करें।

Ψ ५.साधना और प्रयोग में सम्यक् यम,नियम,शौचाचार का ध्यान रखा जाय।

Ψ ६.सभी औषधियों पर औषधीश यानी चन्द्रमा का आधिपत्य है।चन्द्रमा मानव मन के नियामक भी हैं।नक्षत्रों को चन्द्रमा की पत्नी कहा गया है।पति को अनुकूल करने के लिए पत्नी का अनुकूल होना बड़ा महत्वपूर्ण है। अतः यथानिर्दिष्ट नक्षत्रों का सम्यक् पालन होना अनिवार्य शर्त है।

Ψ ७.तन्त्र अपने आप में स्वतन्त्र अस्तित्त्व रखता है,यानी परिपूर्ण है,फिर भी मन्त्र और यन्त्र से अंगागीभाव सम्बन्ध है।तात्पर्य यह कि तन्त्र-प्रयोग में यथोचित मन्त्र और यन्त्र का प्रयोग होता है।इसे यूँ कहा जा सकता है कि तन्त्र रूपी पक्षी को सम्यक् उड़ान भरने के लिए मन्त्र और यन्त्र रूपी पंख की आवश्यकता पड़ती है।वैसे यह सर्वथा निरंकुश है।स्वयं सहाय भी।

Ψ ८.यहाँ निर्दिष्ट प्रयोगों की सिद्धि के पश्चात् उनका व्यावसायिक उपयोग कदापि न करें। क्योंकि इससे प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ भले ही नजर आए,परोक्ष में आपका अहित ही अहित है।श्रद्धा-प्रेम वश कोई इसके बदले यदि कुछ दे ही दे,तो कम से कम तीसरा हिस्सा(३३%) दान अवश्य कर दें।इससे आपकी सिद्दि में जरा भी शक्तिहीनता नहीं आयेगी।पराम्बा की कृपा सदा बरसती रहेगी।

----)()(---

द्वितीय परिच्छेद- प्रयोग पूर्व की तैयारी

वर्तमान समय में भागदौड़ के जटिल जीवन में मनुष्य की लालसायें और जरुरतें तो दिनानुदिन विकराल होती जा रही हैं;किन्तु दूसरी ओर उन लालसाओं और जरुरतों को पूरा करने हेतु समुचित समय,प्रयास और श्रम के प्रति उदासीनता,लापरवाही और जल्दवाजी भी देखी जा रही है।विद्यार्थी टेक्टबुक के वजाय,गेसपेपर का शॉर्टकट पसन्द करता है। धनार्थी रातों रात लखपति-करोड़पति बनना चाहता है।"कम मेहनत,ज्यादा आमदनी "या कहें विना श्रम किए धन वरसने का ख्वाव देखना आम वात है।धर्मार्थी-मोक्षार्थी-साधक भी वैसे ही शॉर्टकट की तलाश में रहता है। दीर्घकालिक अनुष्ठान-क्रिया-जप-पुरश्चरण,योग-याग आदि से यथासम्भव कतराता है।एक तरफ ईश्वर,स्वर्ग और मोक्ष जैसी अनमोल निधि चाहिए और दूसरी ओर क्षुद्र "वैश्य" जैसा व्यवहार- वात-बात में हानि-लाभ का हिसाब-किताव।

साधना व्यापार नहीं है।यहाँ वैश्य बुद्धि से काम नहीं चलने को है।साधना करने के लिए "व्राह्मण" होना सर्वाधिक अनिवार्य शर्त है।मेरी बात पर ध्यान देंगे।यहाँ व्राह्मण पुत्र व्राह्मण की बात मैं नहीं कर रहा हूँ।मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि एक डोम का वेटा भी व्राह्मण हो सकता है,और इसके विपरीत व्राह्मण का वेटा भी चाण्डाल हो सकता है।वात यहाँ "व्रह्मणत्त्व" की हो रही है,जाति की नहीं। "**जन्मना जायते शूद्रः, संस्कार द्विज उच्यते।** " वचन है- शास्त्र का।हम सभी शूद्र ही पैदा होते हैं।या और स्पष्ट कहें कि ईश्वर का अंश

ईश्वर ही पैदा होता है। मनुष्य या राक्षस तो वह जन्म के बाद बनता है।कोई हिन्दु, ईसाई, मुसलमान,बौद्ध,जैन,पारसी पैदा नहीं होता। एक बालक सर्वदा-सर्वथा निर्मल-निर्विकार ही इस पावन धरती पर आता है।ये धर्म,जाति,सम्प्रदाय,संकीर्णता और,कूपमण्डूकता के परिणाम हैं। सारी लड़ाई परिधि पर है।सारी दूरियाँ परिधि पर ही हैं।केन्द्र निर्विकार और अक्षुण्ण है।

साधक को **सर्वेभवन्तु सुखिनः,सर्वेसन्तु निरामयाः।सर्वे भद्राणि पश्यन्तु,मा कश्चित् दुःखभाग्भवेत्** ।। - की भावना से ओतप्रोत होना चाहिए। क्योंकि उसका लक्ष्य केन्द्र है । उसका हर कदम निरन्तर केन्द्र की ओर अग्रसर है। वह परिधि पर भटकता पथिक नहीं,बल्कि केन्द्र की ओर सरकता प्रबुद्ध यात्री है। आगे के चित्र में इसी तथ्य को दर्शाने का प्रयास है मेरा। हम पाते हैं कि ज्यों-ज्यों परिधि से केन्द्र की ओर बढ़ते हैं,आसपास के अर्द्धव्यासों के बीच की दूरियाँ सिमटती जाती हैं;और एक समय ऐसा आता है कि सब कुछ विलीन हो जाता है। भेद की समस्त भित्तियाँ ढह जाती हैं,और एक मात्र ब्रह्म की सत्ता ही शेष रहती है,और फिर कुछ काल बाद वह भी निर्गुण-निराकार हो जाता है। चित्र में दिखाये गये क्रमांक विविध सम्प्रदायों के सूचक हैं,जो अपनी-अपनी गति से परिधि पर भ्रमण कर रहे हैं,प्रायः। इन्हें ' **धर्म** ' समझने की भूल कदापि न करें।जिसे आमतौर पर धर्म कहा,और समझा जाता ,वो और कुछ नहीं सिर्फ सम्प्रदाय है।

कहने का यह अर्थ नहीं कि प्रयोग से पूर्व प्रयोग-कर्ता की यह स्थिति अनिवार्य है। प्रसंगवश तन्त्र के परिपाक फल को मैंनें लक्षित किया है यहाँ। तन्त्र–मार्ग से पुरूपार्थ चतुष्टय (धर्म,अर्थ,काम,मोक्ष)को पाया जा सकता है- इशारा इस ओर है। सांसारिक जीवन का सही रूप में उपयोग (उपभोग नहीं) करते हुए,लोककल्याण की भावना और कामना सहित "आत्मलाभ" की ओर अग्रसर होना है।

तन्त्र में चमत्कार तो पग-पग पर है। यहाँ बताये जा रहे विभिन्न प्रयोग किसी न किसी चमत्कार को ही ईंगित करते हैं। किन्तु एक साधक को इन पगडंडियों में भटक नहीं जाना चाहिए। प्रत्युत अपने मूल लक्ष्य की ओर अग्रसर होना चाहिए।

अब, सीधे प्रयोगाधिकार की बात करते हैं-

भवन-निर्माण से पूर्व भवन-योजना बनायी जाती है।भवन की ऊँचाई को ध्यान में रखते हुए,उसकी नीव की स्थापना होती है।यदि कोई चाहे कि जमीन के भीतर दब जाने वाले ईंटों को खपाये वगैर ही सपाट जमीन पर दीवार खड़ी

कर ली जाए तो उस दीवार की क्या स्थिति होगी? उसी प्रकार साधना की सफलता के लिए,साधना से पूर्व कुछ क्रियायें अनिवार्य हैं।इसे अन्य उदाहरण से भी स्पष्ट करें- हम आत्मरक्षा के लिए बन्दूक खरीदना चाहते हैं।ऐसा नहीं कि बाजार गए और बन्दूक लेकर आ गये।उचित है कि लाइसेन्स प्राप्त करें।और फिर बन्दूक चलाने की कला भी सीखनी होगी किसी योग्य व्यक्ति से,अन्यथा इन दोनों शर्तों के पालन के बगैर हम अपना भारी अहित कर लेंगे।एक ओर कानून हमें दण्डित करेगा,और दूसरी ओर चलाने की कला न मालूम होने से गोली खुद भी लगने का खतरा है।

तन्त्र साधना और प्रयोग से पूर्व अपने कुल-परम्परानुसार इष्ट साधना करनी चाहिए। द्विजों में यज्ञोपवीत संस्कार की परम्परा है।वस्तुतः यह जमीनी तैयारी का सूत्रपात है। ध्यातव्य है कि जनेऊ देने के साथ ही संध्या-गायत्री की दीक्षा दे दी जाती है।यदि समय पर यह संस्कार हो गया है,और उसके बाद नियमित संध्या-गायत्री जारी है, तो समझिये कि आपका जमीन काफी हद तक दुरूस्त है।अन्यथा किसी कार्यसिद्धि में कठिनाई होगी। आपका बहुत समय और श्रम तो असंस्करिता के दाग-धब्बों को मिटाने में ही खप जायेगा; और आप उबने लगेंगे।निराश और हताश होने लगेंगे।यह सब कह-बतलाकर आपको हताश-निराश करना,या सर्वथा अयोग्य ठहराना मेरा उद्देश्य नहीं है,बल्कि आपको सचेत करना है।

मार्ग-दर्शन और दिशा-निर्देश स्वरूप यहाँ कुछ बातें बतलायी जा रही हैं।इनका पालन अवश्य करें।ईश्वर की कृपा से यशलाभार्जन होगा।यह मैं बिलकुल अनुभूत बात कह रहा हूः—

(क) उत्तरायण सूर्य(चौदह जनवरी से लगभग चौदह जुलाई) के महीनों में- गुरू-शुक्रादि शुभग्रहों की शुद्धि,पंचांग शुद्धि के साथ सर्वार्थ

सिद्धियोग का विचार करते हुए कायगत शुद्धि हेतु मुण्डन,नवीन यज्ञोपवीत, वस्त्रादि धारण करके माता-पिता का आशीष ग्रहण करें।उनसे आदेश लें अपने मन्तव्य प्रयोग हेतु।माता-पिता स्वर्गीय हों तो भावात्मक आशीष-आदेश लेना चाहिए।योग्य गुरू की समस्या हर युग में रही है।वर्तमान आडम्बरी परिवेश में तो यह और भी कठिन हो गया है।किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि गुरू का सर्वथा अभाव हो गया है।और अभाव की बात करते हैं तो, सच पूछें तो सदगुरू के साथ समर्पित शिष्य का भी अभाव है। खैर,इसके लिए बहुत चिन्तित होने की बात नहीं है।मेरे इन संकेतों का पालन कीजिये।अपनी जमीन बनाइये। शिल्पी स्वयमेव उपस्थित होकर भवन निर्माण कर देगा- ऐसा अटूट विश्वास रखें। माता-पिता ही प्रारम्भिक गुरू होते हैं।अतः निर्द्वन्द्व होकर श्रीगणेश यहीं से करें।

(ख) अपने कुल देवता की यथोचित जानकारी करें।आजकल प्रायः इसका लोप हो गया है। आधुनिक जीवन शैली हमें अपने मूल स्थान से विमुख कर दी है।अन्य कई कारणों से भी इस मामले में अज्ञानता का बाहुल्य है।

(ग) नये वस्त्र के साथ नवीन आसन भी अनिवार्य है।सर्वोत्तम होगा सफेद कम्बल का आसन,जो प्रायः सुलभ है,और सर्वकार्यग्राही भी।ध्यान रहे – असनं वसनं चैव,दारा पत्नी कमण्डलु...शास्त्रों का संकेत है- आसन,वस्त्रादि विलकुल व्यक्तिगत होना चाहिए।प्राचीन धर्म नहीं, तो कम से कम आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से ही इसे अनिवार्य समझें।

(घ) अपने कुल देवता के समीप आसन लगा कर पूर्व निर्दिष्ट शुभ समय में एकाग्रचित होकर कम से कम तीन दिन(प्रतिदिन कम से कम २४मिनट) बैठें।सिर्फ बैठें,और कुछ नहीं।।आज के युग में मैं समझता हूँ "सिर्फ बैठना" बहुत

कठिन कार्य है।तीन दिनों के इन चौवीस मिनटों में वस एक ही विचार आपके मन में आए- हमें अपने कुलदेवता का कृपा-प्रसाद प्राप्त हो।यह कार्य तीनों दिन निश्चित समय पर प्रातः-सायं करें।

(ङ) प्रसंगवश पहले भी कह चुका हूँ,पुनः स्मरण दिया दूँ- आहार-विहार का वड़ा महत्व है। सात्विक आहार सदा सत्व की ओर अग्रसर करेगा।मैं यहाँ वामाचार और कौलाचार की वात नहीं कर रहा हूँ।आगे आप पायेंगे कि मुख्य रूप से शिव और शक्ति की आराधना का संकेत है,किन्तु मैं जिस शक्ति-उपासना की वात कर रहा हूँ इसमें तामसी आहार-विहार सर्वथा वर्जित ही समझें।राजसी आहार से भी यथासम्भव बचने का प्रयास करें,फिर भी अपेक्षाकृत क्षम्य है।आहार की व्याख्या श्रीमद्भगवद्गीता के सत्रहवें अध्याय के श्लोक संख्या ८,९,१० के अनुसार तय करें तो अच्छा है।

(च) तीन दिनों के वाद आसपास के किसी शिव मन्दिर(पुराना प्रतिष्ठित स्थान,न कि जमीन दखलाने के लिए सड़क किनारे वनाया गया गंजेड़ियों का अड्डा)में जाकर पंचोपचार पूजन के साथ दही,हल्दी,और दूर्वा समर्पित कर पूरी निष्ठा से,श्रद्धा और समर्पण के साथ गुरू बनने का आग्रह करें।ध्यातव्य है कि तन्त्र-साधना के परमगुरू शिव ही हैं। प्रायः समस्त तान्त्रिक ग्रन्थ शिव-शिवा संवाद में ही हैं।(इस दिन सिर्फ पूजन और निवेदन कर चले आयें)।उस दिन अकेले ही रात्रि शयन करें।रात सोते समय, दिन में किये गये निवेदन का स्मरण बनाये रखें।पचहत्तर प्रतिशत मामलों में देखा गया है कि स्वप्न में कुछ न कुछ शुभ संकेत अवश्य मिल जाता है।शुभ स्वप्न का अर्थ है- भूत भावन भोलेनाथ आशुतोष सहज ही निवेदन स्वीकार कर लिए।यदि ऐसा नहीं होता है तो भी निराश होने की बात नहीं है।सभी प्रतियोगी आई.ए.एस. की प्रतियोगिता एक

ही बार में उतीर्ण नहीं होजाते। ऐसी स्थिति में आगामी ग्यारह दिनों तक पूर्व निर्दिष्ट क्रिया- शिव-पूजन,एकल शयनादि जारी रखें।

(छ) अब,बारहवें दिन से(सामान्य स्थिति में दूसरे ही दिन से)श्री शिव पंचाक्षर मंत्र-जप का संकल्प लें। संकल्प वाक्य में "शिव प्रीत्यर्थं" का भाव रहे,कोई अन्य काम नहीं।क्यों कि इस अनुष्ठान का मूल उद्देश्य है- आत्म शुद्धि सहित अधिकार प्राप्ति।संकल्प सवा लाख का हो तो अति उत्तम।कम से कम चौआलिस हजार तो होना ही चाहिए।घंटे में चार हजार की गति से आसानी से जप किया जा सकता है। घर या मंदिर में बैठ कर,सुविधानुसार निर्धारित संख्या प्रतिदिन,प्रतिबैठक के हिसाब से जप पूरा करें।संकल्प पूरा होजाने के बाद दशांश या कम से कम ग्यारह सौ मंत्राहुति सिर्फ घी अथवा शाकल्य(सवा किलो काला तिल, तदर्ध चावल,तदर्ध जौ,तदर्ध गूड़,तदर्ध घी,धूना,गूगल आदि सुगन्धित द्रव्य अल्पांश)से प्रदान करें।(नियम है- जप का दशांश हवन, तत् दशांश तर्पण,तत् दशांश मार्जन,तत् दशांश ब्राह्मण और दरिद्रनारायण भोजन(यथाशक्ति दक्षिणा सहित)।

(ज) अब,अगले दिन से,या सुविधानुसार थोड़े अन्तराल के बाद(अधिक समय बाद नहीं) अगले अनुष्ठान की तैयारी करनी है।अगला कार्यक्रम है-

शक्ति-आराधना।इस क्रम में पुनः उसी भांति सवालाख अथवा कम से कम छतीश हजार सप्तशती के नवार्ण मन्त्र का जप करना चाहिए।ध्यातव्य है कि श्री दुर्गासप्तशती में दिए गये विधान से जप का न्यास अवश्य करें।जप समाप्ति के पश्चात् तदभांति ही हवन से दक्षिणा तक की क्रियायें सम्पन्न करें।

अब तक इतना कुछ जो करना पड़ा वह सब भावी साधना की नींव स्वरुप व्यय हुआ। नींव की ये ईंटें ही भावी महल की मजबूती की साक्षी होंगी।ये

क्रियायें बारबार करने की आवश्यकता नहीं है।इसे यों समझें कि आपका सामान्य अस्त्र तैयार हो गया।या कहें- कलम की व्यवस्था आपने कर ली।अब इससे जिस रंग में लिखना हो- वैसी स्याही डालने की आवश्यकता होगी।विशेष बात ये है कि अलग-अलग रंगों के लिए सिर्फ स्याही बदलनी है,लेखनी तो वही रहेगी।हाँ,एक बात का ध्यान रखना है- समय-समय पर या विशेष अवसरों (नवरात्र,ग्रहण,आमावश्या,पूर्णिमा,आदि) पर दोनों मन्त्रों का एक-एक हजार जप कर लेना चाहिए ताकि प्रभाव की तीव्रता बनी रहे।आप चाहें तो स्थायी तौर पर अपनी नित्य क्रिया में इसे शामिल कर लें- ये सर्वाधिक अनुकूल होगा।अभ्यास के बाद इतनी क्रिया- एक-एक हजार दोनों मंत्रो का जप- मात्र आधे घंटे का काम है।

एक आवश्यक जानकारीः- शिव पंचाक्षर मंत्र का पूर्ण पुरश्चरण पांच लाख एवं नवार्ण मंत्र का नौ लाख होता है।धैर्य पूर्वक इतना कर लें तो फिर क्या कहना।वैसे साधना में अभिरुचि रखने वालों को अवश्य कर लेना चाहिए।यह कार्य किसी विषय में मास्टर डिग्री हासिल करने जैसा है।

इस प्रकार अब आपकी साधना भूमि पूरे तौर पर तैयार हो गयी।

----)()()()(----

—५१२०५

तृतीय परिच्छेद – भाग १

वनस्पति-तन्त्र-प्रयोग

(१)श्वेतार्क (मदार)

मन्दार एक बहुपरिचित पौधा है।संस्कृत में इसे अर्क भी कहते हैं।अर्क सूर्य की संविधा है।यह शिव का अतिप्रिय पुष्प है।इसकी कई प्रजातियाँ हैं।मुख्य रूप से नीले और सफ़ेद फूलों के भेद से पहचाना जाता है।एक और खास बात ये है कि बनावट के विचार से छोटे और बड़े आकार में मिलने वाले दो पौधे हैं,जो वस्तुतः दो बिलकुल भिन्न जाति के है। एक को अकवन के नाम से जाना जाता है।इसका विकास क्रम मदार से किंचित भिन्न है।प्रायः लोग दोनों को एक ही समझ लेते हैं,जब कि जाति एक और प्रजाति भेद है।गुण-धर्म में भी भेद स्वाभाविक है।अकवन(अर्क)जड़ से ही बहुशाखा वाला होता है,जब कि मदार में शाखायें अपेक्षाकृत कम होती हैं।अकवन साल दो-साल में प्रायः सूख जाता है,किन्तु मदार बहुबर्षायु पौधा है।अक़वन में सिर्फ शाखायें ही शाखायें होती हैं,जब कि मदार तना युक्त होता है।पुराना पड़ने पर काफी मोटा और १०-१५ फीट ऊँचा हो जाता है। गोस्वामी जी ने वर्षाऋतु-वर्णन क्रम में कहा है-

अर्क,जवास पात बिनु भयऊ।जिमि सुराज खल उद्यम गयऊ।।

तात्पर्य यह कि बरसात में सभी पेंड़-पौधे लहलहाने लगते हैं,जब कि अर्क और जवास प्रायः सूख जाते हैं।इनकी पत्तियाँ झड़ जाती हैं।आमतौर पर रेलवे लाईनों के किनारे,या जहाँ-तहाँ किसी पुराने मकानों के ढूह पर पाया जाता है।इसके पत्ते बरगद के पत्ते जैसे आकार के होते हैं।रंग में थोड़ा फर्क होता है।बैंगनी फूलों वाला मदार तो बहुतायत से पाया जाता है,किन्तु सफेद फूल की प्रजाति जरा दुर्लभ है।

यहाँ मेरा विवेच्य वनस्पति श्वेतार्क(मदार) ही है।क्षुप जातिय अकवन या नीले फूलों वाला मदार नहीं।

मदार पुष्प शिव को अतिशय प्रिय है- इसके पीछे एक कारण यह भी है कि इस पौधे में पार्वती नन्दन गणेश का वास है।गीता (विभूतियोग)में श्रीकृष्ण ने स्वयं को अश्वत्थ(पीपल) कहा है। तदभांति मन्दार गणेश की साक्षात् विभूति है।लोककल्याण के लिए विघ्नेश्वर विनायक मन्दार के रूप में अवतरित हुए हैं- ऐसा तन्त्र-ग्रन्थों में वर्णित है। अति चमत्कारिक बात यह है कि मन्दार मूल को आप निर्विघ्नता पूर्वक(विना कटे-टूटे) यदि जमीन से ऊखाड़ कर गौर करें तो पायेंगे कि साक्षात् मंगल मूर्ति की तरह नजर आएगा।

यहाँ हम मन्दार के विभिन्न प्रयोगों की चर्चा करेंगे,जिनमें ज्यादातर श्वेतार्क मूल का ही प्रयोग है।इसके लिए पौधे का बहुत पुराना(मोटा)होना जरुरी नहीं है।हाँ,ये बात अलग है कि पौधा जितना ही पुराना होगा-उसका मूल उतना ही सुदृढ़-सुव्यवस्थित-सुन्दर आकृति वाला होगा।

I. श्वेतार्क गणपति और स्वर्ण-निर्माण

एक सर्वाधिक रोचक और चमत्कारी प्रयोग है- स्वर्ण-निर्माण का।इसमें वृक्ष को नष्ट करने की बात नहीं है।प्रत्युत वृक्ष जितना ही पुराना और मोटा होगा क्रिया में आसानी होगी। दूसरी और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इस क्रिया की व्यावहारिक कठिनाई है-यह एक दीर्घकालिक अनुष्ठान है।साधक के निज साधना बल के अनुसार पांच,सात,दश,या बारह वर्ष लग सकते हैं।सीधे कहें कि इस साधना में तैयारी से लेकर पूर्णता तक पहुंचने में जीवन ही खप जाने जैसी बात है।बहुत धैर्य की आवश्यकता

है।साथ ही यह वहुत गुप्त और रहस्यमयी साधना है।आपकी थोड़ी असावधानी(क्रिया-त्रुटि और गोपनीयता भंग) आपके दीर्घकालिक श्रम पर पानी फेर सकता है। मैं स्वयं इसका भुक्तभोगी हूँ।मेरे गुरुजनों ने भी इसे साधा है।

इस क्रिया के लिए प्रथम अनिवार्यता है कि कहीं से इसका वीज या गाछ उपल्वध करें,और अपनी गृह-वाटिका में स्थापित करें- इस वात का ध्यान रखते हुए कि इसके पास

वैठ कर लम्वी साधना करनी है।अतः भविष्य-विचार पूर्वक पौधा लगाने का स्थान चयन करें।पांच-सात वर्षों में क्रिया-योग्य पौधा तैयार हो जायेगा।वस्तुतः इस प्रयोग में मोटे तने की आवश्यकता है।तना जितना मोटा होगा,साधक के लिए उतना ही उपयोगी और लाभप्रद होगा।

उचित होगा कि योजना-वद्ध रुप से पौधे की स्थापना कर देखभाल करते रहें,और इस वीच अपने कायिक शुद्धि के साथ अन्यान्य साधना करते रहें,या सामान्य जीवन- क्रिया-कलापों में गुजारें।पुत्र जन्म से लेकर कमाऊ वनने तक की प्रतीक्षा हर कोई करता है- और बड़े शौक और लगन से करता है।फिर इस चमत्कारी क्रिया के लिए प्रतीक्षा में क्या हर्ज ? वैसे सच पूछा जाय तो इस लम्वी साधना का परिणाम सांसारिक भोग साधना वहुल ही है। अतः इसके प्रति साधक को विशेष आकर्षित नहीं होना चाहिए।अन्य अल्पकालिक साधना-प्रयोगों से ही संतोष करना चाहिए।

अस्तु।पौधा कार्य-योग्य हो जाने पर रविपुष्य/गुरूपुष्य योग में प्राण-प्रतिष्ठा-विधि से प्रतिष्ठित कर यथा सम्भव पंचोपचार/षोडशोपचार पूजन करें।भगवान गणपति के वारह प्रसिद्ध मंत्रो में स्वेच्छा से किसी मंत्र का

चुनाव कर लें।उस चयनित मंत्र से ही पूजन करना है। पूजा के बाद एकाग्रचित होकर क्षमा याचना करें,और अपना अभिष्ट उन्हें स्पष्ट करें।

पूजन सामग्री में अन्य सामानों के अतिरिक्त- शुद्ध पारद एक पाव,लाल कपड़ा चौथाई मीटर,कच्चा गोदुग्ध एक पाव,बरगद का एक सुन्दर पत्ता,सौ ग्राम शुद्ध मोम(मधु मक्खी वाला- ये आपको जड़ी-बूटी की दुकान में मिल जायेगा),वृक्ष में छेद करने के औजार- मोटा बरमा,तेज चाकू,रुखानी आदि साथ रखना आवश्यक है।मोटे तने में सर्वप्रथम मोटा बरमा से छेद करें- छेद इतना ही हो कि तने में आर-पार न हो जाय(मोटाई का तीन हिस्सा ही छेदा जाय)।बरमा से निकल रहे कुन्नी (बुरादा) को प्रेम पूर्वक किसी पात्र में एकत्र कर लें,क्योंकि आगे इसका उपयोग करना है। अब किए गये छिद्र को किसी दूसरे औजार से थोड़ा और बड़ा करें।छेद बिलकुल सुडौल हो- इसका ध्यान रखें।अब किए गये छिद्र में सावधानी पूर्वक,साथ लाये गये पारद को भर दें।ध्यान रहे- पारद अति चंचल द्रव्य है।इसे हाथों से पकड़ना कठिन है।अतः बरगद के पत्ते को कुप्पीनुमा बनाकर,छिद्र में पारद भरने का काम करें।छिद्र थोड़ा(एक ईंच) खाली रहे,तभी पारद डालना बन्द कर दें।यदि पारद बचा रह जाय तो कोई हर्ज नहीं।अब, छेद करते समय निकले बुरादे में मधुमक्खी वाला मोम मिलाकर उस शेष छेद में सावधानी पूर्वक भर दें।उपर से लाल कपड़े को चार-पांच बार लपेट कर पट्टीनुमा बन्धन कर दें।हाँ,पौधे के थल में छः ईंच गोल घेरा बना दें,जिसमें आसानी से नित्य जल डाला जा सके।अब,पुनः आसन लगाकर पूर्व साधित- गणपति मन्त्र का ग्यारह माला जप करें।जप के लिए रुद्राक्ष माला सर्वोत्तम है।जप पूरा हो जाने पर किए गये जप-पूजन क्रियादि को ॐ श्री गणपत्यर्पणमस्तु- कह कर पुष्पाञ्जली दे दे।तत्पश्चात गोदुग्ध का अर्घ्य अर्पित करे। इस प्रकार प्रथम दिन की क्रिया सम्पूर्ण हुयी।

अव,नित्य पंचोपचार पूजन,ग्यारह माला पूर्व साधित गणपति मन्त्र-जप,दुग्धार्घ्य, पुष्पाञ्ली,और समर्पण की क्रियां करते रहना है- लम्वे समय तक।

ध्यान रहे- यह एक दीर्घकालिक अनुष्ठान है।आपके भाग्यानुसार और कर्म की सघननतानुसार फल में समय लगेगा।एक वर्ष से बारह बर्ष- कुछ भी लग सकता है।प्रयोग शतानुभूत है,इसमें जरा भी संशय नहीं। आप नियमित रुप से अपनी क्रिया जारी रखें। क्रिया दीर्घकालिक है।सांसारिक जीवन में कई तरह के व्यवधान आयेंगें।परिवार-गोत्रादि में जनना शौच,मरणाशौच भी होंगे ही।रोग-बीमारी भी सतायेगी ही।ऐसी परिस्थिति में अनुष्ठान क्रिया किंचित बाधित होगी।जननाशौच में नौ दिन,एवं मरणाशौच में बारह दिनों तक क्रिया बन्द रहेगी।रोग-बीमारी की विशेष स्थिति में भी बाधित हो सकता है,जो सर्वथा क्षम्य है। वस इतना ही ध्यान रहे कि आलस्य,लापरवाही और नैराश्य का शिकार न हों।

प्रयोग सिद्धि का संकेत- क्रिया करते-करते आप देखेंगे कि मन्दार-वृक्ष की पत्तियाँ जो स्वाभाविक रूप से थोड़ा भूरापन लिए हरे रंग की थी,अव धीरे-धीरे अपना रंग बदलने

लगी हैं।पत्तियाँ पहले बीमार पत्तियों की तरह पीली लगेंगी।फिर उनके झड़ जाने पर,नयी पत्तियाँ नये कलेवर में होंगी- पीतल या सोने जैसी अद्‌भुत चमक वाली।वस,इसी की प्रतीक्षा थी आपको।आपका कार्य सिद्ध हो गया।अब,पुनः रविपुष्य/गुरुपुष्य योग का विचार करके अनुष्ठान समाप्ति का संकल्प करें।पूर्व क्रम से पूजन,जपादि नित्य क्रिया सम्पन्न करके,वृक्ष को सादर दण्डवत करें।लपेटी हुयी लाल पट्टी को खोल दें।किसी औजार से

छिद्र में भरे गये बुरादे को आहिस्ते से अलग करें,और उसके अन्दर पूर्वकाल में भरे गये पारद को वाहर निकालें।आप देख कर चमत्कृत हो जायेंगे- यह पारद नहीं,शतप्रतिशत शुद्ध सुवर्ण है। श्रद्धा पूर्वक उसे माथे से लगायें,और सामने रखे गये किसी पात्र में(स्टील नहीं) रख कर विधिवत षोडषोपचार पूजन करें।उसमें से (कम से कम सवा तोला) किसी गरीव को दान कर दें।और शेप को आदर सहित अपने खजाने में रख दें। एक काम और करना अति आवश्क है- कम से कम पांच ब्राह्मण और पांच भिक्षु को भोजन करायें,और श्रद्धानुमार उन्हें दक्षिणा दें।

नोटः- (१) इस क्रिया का वैज्ञानिक आधार- इस प्रयोग में पारद को तान्त्रिक विधि से स्वर्ण में परिवर्तित कर रहे हैं।लौह आदि अन्यान्य धातुओं को भी तान्त्रिक विधि से परिवर्तित किया जा सकता है।किन्तु पारद का परिवर्तन अपेक्षाकृत आसान है।वैज्ञानिक विवेचन करें तो कहा जा सकता है कि पदार्थों के परिवर्तन के लिए उसके इलेक्ट्रोन-प्रोटोन ही जिम्मेवार होते हैं।पदार्थ और ऊर्जा का ही खेल है यह वहुआयामी व्रह्मांड।प्राकृतिक रूप से यह परिवर्तन(Transmutation) नित्य-निरंतर जारी है। सामान्य जन के लिए यह महद् आश्चर्य की बात हो सकती है,किन्तु एक वैज्ञानिक जानता है कि वृक्ष(लकड़ी) ही भूगर्भ में दव कर कोयला बनता है, और फिर कोयला ही हीरे में वदलता है।कोयले और हीरे में वैज्ञानिक दृष्टि से वहुत साम्य है- दोनों कार्वन ही हैं। पारद और सोना भी एक दूसरे के बहुत करीव हैं।इनके इलेक्ट्रोन-प्रोटोन काफी करीब हैं।सोने के परमाणु में ७९ इलेक्ट्रोन, ७९ प्रोटोन,और ११८ न्यूट्रोन होते है,जब कि पारद के परमाणु में ८० इलेक्ट्रोन, ८० प्रोटोन,और १२१ न्यूट्रोन होते हैं। यानी किसी विधि से पारद का परमाण्वांक घटा दिया जाय ,तो वह सोना हो जाय।यही

कारण है कि परिवर्तन आसान है।वैज्ञानिक-प्रयोगशाला में इन क्रियाओं को जाँचा-परखा गया है।इस तरह के रासायनिक और भौतिक परिवर्तन में जरा भी संशय नहीं है।

तन्त्र-मन्त्र भी कुछ ऐसा ही कर रहा है,जो कार्य प्रकृति अपनी नियत गति से निरंतर करती आरही है।तन्त्र-मन्त्र कैसे कार्य करता है- इन सिद्धान्तों का विवेचन आप हमारी पुस्तिका- पुण्यार्कतन्त्रप्रदीपिका में देख सकते हैं।यहाँ सिर्फ इतना ही कह दें कि ऑक्सीजन और हाईड्रोजन के अणु आपस में मिल कर जल का निर्माण करते हैं,उसी भांति पारद मन्दार-दूध से लम्बे समय तक संयोग करते-करते स्वर्ण में बदल जाता है। प्रयोगशाला का विशिष्ट परिवेश और उपकरण जैसे कार्य संयोग करते हैं, वैसे ही यहाँ मन्त्र क्रिया और निरंतर मंत्रपूरित गोदुग्ध का सिंचन पारद में रासायनिक परिवर्तन ला देता है। ध्यातव्य है कि वैज्ञानिक सिद्ध है कि गाय के दूध में स्वर्णशक्ति भी मौजूद है।गाय के मेरुदण्ड से कुछ विशिष्ट रसायन निरंतर श्रवित होते रहते हैं,जो सोने के गुण वाले हैं।ओज-वृद्धि के लिए आयुर्वेद स्वर्ण-भस्म खाने का सलाह देता है।सामान्य जन जो इस मंहगी दवा का सेवन नहीं कर सकते,वे नियमित रुप से गोदुग्ध सेवन करके लाभ पा सकते हैं। किन्तु यहाँ भी एक बड़ा शर्त है- देशी नस्ल की गाय,क्यों कि उसके मेरुदण्ड में ही यह गुण है;आजकल की जर्सी (Crossbreed)गायों में नहीं।अस्तु।

(२) तन्त्र-ग्रन्थों में स्वर्ण निर्माण की कई विधियाँ दी गयी हैं।योग साधना से भी ये सब चमत्कारिक सिद्धियाँ सहज ही प्राप्त हो सकती हैं।किन्तु साधक को सदा इनसे परहेज करना चाहिए।सामान्य जीवन यापन हेतु कुछ हल्के-फुल्के प्रयोग भले ही कर ले।

(३) यह प्रयोग पूर्णतया गणपति का है।गणेश साक्षात् कृष्ण ही हैं।कृष्ण यानी विष्णु। मूलतः यह वैष्णवी क्रिया है।इसकी मर्यादा का ध्यान रखते हुए,मांसाहारी लोग इस साधना-प्रयोग को कदापि न करें।उन्हें इसकी सिद्धि कदापि नहीं मिल सकती।उनका श्रम और समय व्यर्थ जायेगा।कुछ अन्य वाधायें झेलनी पड़ेंगी सो अलग।

----(0)----

ii. श्वेतार्क(मन्दार)मूल का विभिन्न प्रयोगः-

सर्वप्रथम मन्दार के पौधे का पता लगा लें।अब रविपुष्य/गुरुपुष्य योग में उसके मूल को घर लाने की योजना बनायें।जिस दिन विहित योग मिल रहा हो,उसके पूर्व संध्या को पूजन सामग्री-जल,अक्षत,मौली,रोली,सिन्दूर,चन्दन,सुपारी,पुष्प,कपूर,धूप,दीप,कुछ नैवेद्य लेकर पौधे के समीप जाकर पूर्व/उत्तर मुख खड़े होकर विधिवत पूजन करें।(यहाँ बैठ कर पूजा करना आवश्यक नहीं है)।ध्यातव्य है कि श्वेतार्क में साक्षात् गणपति का वास है।अतः पूजन गणपति-मंत्र से ही होगा- चयन किए गये किसी गणपति मंत्र से- जिसकी आप पहले भी साधना कर चुके हैं। पूजन के पश्चात् अक्षत-पुष्प-सुपारी लेकर(जल नहीं)प्रार्थना करेः- "हे गणपति! हे श्वेतार्क देव! मैं अपने कार्य की सिद्धि के लिए कल प्रातः आपको अपने साथ अपने घर ले चलूँगा।आप कृपापूर्वक मेरे साथ चल कर मेरे अभीष्ट की सिद्धि करें।" प्रार्थना में शब्दों का हेर-फेर हो सकता है,भावों का नहीं।वस्तुतः आप गणपति देव को अभीष्ट सिद्धि हेतु आमन्त्रित करने गये हैं।प्रार्थना करके प्रेम पूर्वक हाथ में लिए हुए अक्षत-पुष्प-सुपारी को वहीं वृक्ष-तल में छोड़कर वापस घर आ जायें।रात्रि में

एकान्त शयन करें।स्वप्न संकेत- शुभाशुभ मिल सकते हैं,नहीं भी।कोई वात नहीं।

अगली सुवह(मुंह अन्धेरे ही) नित्य कृत्य से निवृत्त होकर एक मीटर लाल या पीले नवीन वस्त्र और खोदने-काटने के औजार के साथ पुनः वहाँ जाकर वृक्ष को सादर प्रणाम करें,और गणपति के ध्यान सहित पूर्व चयनित मन्त्र का उच्चारण करते हुए पूर्व या उत्तर मुख करके सावधानी पूर्वक जड़ की खुदाई करें।खुदाई काफी गहराई तक करनी चाहिए। प्रयास करें कि पूरा का पूरा जड़ (मुशला सहित) निकल सके। पूरा कार्य मौन जप के साथ सम्पन्न करना है।यूँ तो यह कार्य विलकुल अकेले का है,किन्तु विशेष परिस्थिति में किसी सदव्यक्ति का सहयोग लिया जा सकता है,जो शुचिता और गोपनीयता में आपका साथ दे सके।क्यों कि तान्त्रिक प्रयोग ढिंढोरा पीटकर करने की चीज नहीं है।दूसरी बात यह कि प्रयास हो कि जड़ टूटने न पावे। जितना अच्छा जड़ होगा उतना ही उपयोगी होगा।इस प्रकार ग्रहण किए गये टूटे-कटे जड़ का भी उपयोग है,और सम्पूर्ण विग्रह का भी।अतः सबको सहेज लें- साथ ले गये नवीन वस्त्र में।ध्यान रहे- वहाँ से वापस आते समय भी किसी से बातचित न करें।दिन चढ़ चुका रहेगा।रास्ते में लोग मिलेंगे ही।पर आप मौन रहें।

घर आकर जड़ की विधिवत सफाई करें।पुनः,गंगाजल से सिंचित करने के वाद लाल वस्त्र का आसन देकर छोटी चौकी वगैरह पर स्थायी तौर पर स्थापित कर विधिवत पंचो/षोडशोपचार पूजन करने के बाद ग्यारह माला गणपति मन्त्र का जप करें।तत्पश्चात् दशांश हवन,तत्दशांश तर्पण,तत्दशांश मार्जन करने के वाद एक ब्राह्मण और एक दरिद्रनारायण भोजन एवं यथाशक्ति दक्षिणा प्रदान करें।इस प्रकार आपके घर में साक्षात् गणपति का

आविर्भाव हो गया।आगे नित्य यथोपचार पूजन एवं क़म से कम एक माला मंत्र जप अवश्य करते रहना चाहिए।

जड़ उखाड़ते समय कुछ टुकड़े(थोड़े मोटे से) यदि हों तो उनका भी विभिन्न तरह से उपयोग हो सकता है।किसी शिल्पी से उन टकड़ों को उत्कीर्ण कराकर गणपति की छोटी सी प्रतिमा(तीन-चार ईंच की) बनवा कर उसे भी उक्त विधि से स्थापित कर वही लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

श्वेतार्क गणपति स्थापन का फलः- जो व्यक्ति इस प्रकार गणपति की नित्य साधना करता है उसके सभी मनोरथ पूरे होते हैं।ज्ञान,विद्या,धन-सम्पत्ति,सुरक्षा,विघ्नशान्ति सब कुछ स्वयमेव होता रहता है।उसके घर-रिवार पर किसी प्रकार के जादू-टोटके का प्रभाव नहीं पड़ता।भवन के वास्तु दोषों का भी अद्भुत रुप से निवारण हो जाता है।

श्वेतार्क मूल के अन्यान्य प्रयोग(पूर्व विधि से प्राप्त)--

- १. स्वास्थ्य लाभः- जड़ को सुखाकर चूर्ण कर लें।आधा चम्मच चूर्ण नित्य प्रातः-सायं गोदुग्ध के साथ लेने से बल-वीर्य,ओज-तेज की वृद्धि होती है।औषध सेवन का प्रारम्भ रविपुष्य योग में ही करना चाहिए।
- २. सुरक्षा- तांबे के तावीज में भर कर पुरुष दायीं बांह या गले में,तथा स्त्री बायीं बांह या गले में धारण करें।इससे हर प्रकार के टोने-टोटके का निवारण होकर पूर्ण सुरक्षा प्राप्त होगी।यह कार्य भी रविपुष्य योग में ही करें।
- ३. सौभाग्य वृद्धि- क्रमांक दो की विधि से ही धारण करने पर यह लाभ भी प्राप्त होता है,किन्तु इसमें एक कार्य और करना पड़ता है- उसी तरह के तावीज में कमल के पत्ते को डाल कर

स्त्रियों को अपने कमर में बांधना चाहिए।खास कर उन्हें जिनकी कुण्डली में सप्तम भाव(सौभाग्य स्थान) दुर्वल हो।

४. वशीकरण-सम्मोहन –(क) श्वेतार्क मूल को रविपुष्य योग में घी और गोरोचन के साथ घिस कर माथे पर तिलक लगाने से इस कार्य की सिद्धि होती है।(ध्यान रखें- प्रयोग का दुरुपयोग न करें,अन्यथा आपकी इस सम्वन्धी अन्य प्रयोग भी निस्फल हो जायेंगे।प्राणसंकट या ऐसी ही विशेष परिस्थिति में सिर्फ प्रयोग करें।

(ख) बकरी के दूध में घिसकर भी उक्त लाभ प्राप्त होता है।

(ग)विवाहार्थ(व्यभिचार नहीं) किसी स्त्री को सम्मोहित करने के लिए अपने वीर्य के साथ घिस कर,तिलक लगा उसके चेहरे पर दृष्टि डालते हुए थोड़ी बातचित करने मात्र से प्रबल सम्मोहन होता है।(ध्यान रहे- तिलक लगाकर प्रथम दृष्टि उसी पर जाए,भूल से भी किसी दूसरे पर नहीं)।एक महोदय ने यह प्रयोग करने का प्रयास किया था।संयोग वश ज्यूँ ही अपने कमरे से तिलक धारण कर गन्तव्य की ओर बढ़े,अचानक एक अन्य स्त्री सामने आगयी,और लाख चेष्टा के वावजूद उसने सम्भाषण भी किया।परिणामतः लम्वे समय तक वह उनका पीछा नहीं छोड़ी।बड़ी कठिनाई से पिंड छुड़ाना पड़ा।अतः बहुत सावधानी से यह तामसी प्रयोग करें।सिद्धान्त है कि सत्व जब हठात् तम में रुपान्तरित होता है तो उसकी ऊर्जा बड़ी प्रखर होती है।श्वेतार्क पूर्णतः सात्विक प्रयोग है।अतः तामसिक प्रयोग से परहेज करना चाहिए।

- ५. स्तम्भन- यहाँ इस शब्द का व्यापक अर्थों में प्रयोग है।यानी किसी प्रकार का स्तम्भन करने में समर्थ है यह मूल।

  (क) श्वेतार्क मूल को लाल या पीले कपड़ें में बाँध कर कमर में धारण कर सम्भोग करने से रति क्रिया काफी लम्बी हो जती है।इसे कमल पत्र में लपेट कर वांधा जाय तो और शक्तिशाली हो जाता है।

  (ख)श्वेतार्क का दूध और मधु मिलाकर लेप बनायें।इस लेप में श्वेतार्क के फल से प्राप्त रुई की बत्ती बनाकर धी का दीपक जला कर समीप रखें।सम्भोग काल में उसपर दृष्टि डाले रहने से वीर्य-स्तम्भन होता है।कोई यह तर्क दे सकते हैं कि ध्यान दीपक पर रहने के कारण भोग-काल की वृद्धि मनोवैज्ञानिक रुप से हो गयी।जी नहीं,हालाकि ऐसा भी होता है।किन्तु इस दीपक का अपना विलक्षण प्रयोग है।

- (६) राज-कृपादि – साधक को राजकृपा- राजकीय पदाधिकारी की अनुकूलता,सम्मान आदि की आकांक्षा हो तो अपने निवास स्थान से पूर्व दिशा की ओर स्थित श्वेतार्क-मूल ग्रहण कर ताबीज की तरह धारण करना चाहिए।
- (७) रोगनाश,शत्रुपराजय,मानसिक कष्ट,शोक-सन्ताप आदि के निवारण के लिए अपने निवास स्थान से दक्षिण दिशा की ओर स्थित श्वेतार्क-मूल ग्रहण कर तावीज वनाकर धारण करना चाहिए।
- (८)विरोधियों को नीचा दिखाने(दबाने),उनकी क्रिया-स्तम्भन हेतु अपने निवास स्थान से पश्चिम दिशा में स्थित श्वेतार्क-मूल का प्रयोग करना चाहिए।

- (९) गृह-वास्तु रक्षा के उद्देश्य से विहित मुहूर्त में श्वेतार्क का पौधा कहीं से लाकर ऐसी जगह पर स्थापित करे कि प्रवेश-द्वार के सीध में हो।गृह में प्रवेश करते समय और वाहर निकलते समय श्रद्धा पूर्वक दर्शन करे।वैसे श्वेतार्क का पौधा भवनं के किसी भी भाग में होगा तो लाभदायक ही है,क्यों कि साक्षात् गणेश तुल्य है।किन्तु प्रवेश-द्वार के सामने,पूरव दिशा में,ईशान कोण में,उत्तर दिशा में होना विशेष शुभ माना गया है।
- (१०) विष-निवारण- मन्दार-मूल को जल में घिसकर दंशित स्थान पर लेप करने से बर्रे,विच्छु आदि विषों का शमन होना है।
- (११) आकर्षण- मदार(श्वेत)मूल, गोरोचन,कूठ,हरिद्रा आदि को साथ-साथ चन्दन की तरह घिस कर लगाने से लोगों को अपनी ओर आकर्षित(सम्मोहित)करने की क्षमता आ जाती है।
- (१२) अग्नि(ताप) रोधक- श्वोतार्क मूल को बच के साथ पीसकर लेप वना शरीर में लेप करने से अग्नि का प्रभाव शरीर पर नहीं पड़ता।इस प्रयोग की सिद्धि की परीक्षा सिर्फ अंगुली पर लगा कर पहले कर लेनी चाहिए।

श्वेतार्क तन्त्र में इस चमत्कारी वनस्पति- सिद्ध श्वेतार्क के सैकड़ों प्रयोग मिलते हैं।अपनी साधना-

वुद्धि से यथोचित प्रयोग कर लाभान्वित हुआ जा सकता है। श्रद्धा-विश्वास पूर्वक इनका लोककल्याण हेतु प्रयोग किया जाना चाहिए।

-----)()()()(---

तृतीय परिच्छेद भाग- २

बाँदाः एक परजीवी वनस्पति

वस्तुतः बाँदा एक परजीवी वनस्पति है,जो भूमि पर न उग कर,विभिन्न वृक्षों पर अपना स्थान बनाता है।जिस वृक्ष पर उगता है उसके ही रस-तत्वों से अपना पोषण करता है।ध्यातव्य है कि यह रासना और अमर- लता से भिन्न है।वे दोनों सहज-स्वतन्त्र रुप से उद्‌भुत हैं,जब कि बाँदा एक विकृति की तरह है।यही कारण है कि कुछ विद्वान इसे परजीवी स्वतन्त्र वनस्पति न कहकर वृक्ष की बीमारी ही मानते हैं।किन्तु मैं इसे स्वतन्त्र परजीवी इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि स्वतन्त्रता के सारे लक्षण इसमें विद्यमान हैं- इसकी काष्ट-संरचना अपनी है- खुरदरी गांठदार,पत्तियों का आकार लम्बा-गोलाई युक्त, हरे रंग के सुन्दर गुलाबी पुष्पगुच्छ-लौंग जैसा,फल निमौली जैसे गुच्छों में ही पाये जाते हैं।यूं तो यह प्रायः किसी भी वृक्ष पर हो सकता है,किन्तु आम,महुआ, जामुन आदि पर सहजता से देखा जा सकता है।आम के वृक्ष में तो सबसे ज्यादा।इसका प्रभाव क्षयकारी है।जिस वृक्ष पर उग जाता है,या कहें जिस वृक्ष को ग्रस लेता है,उसका विकास अवरूद्ध हो जाता है।यही कारण है कि बागों में किसी वृक्ष पर देखते के साथ ही उसका संरक्षक तत्काल ही काट कर नष्ट कर देता है,ताकि इसका कुप्रभाव अधिक फैलने न पाये।

तन्त्र शास्त्र में बाँदा बहुत ही उपयोगी बतलाया गया है।विभिन्न वृक्षों पर पाये जाने वाले बाँदा का अलग-अलग तान्त्रिक उपयोग है।उन अलग-अलग वृक्षों से ग्रहण का अलग-अलग मुहूर्त भी है।समुचित मुहूर्त में ही निर्दिष्ट विधि से उसे ग्रहण करना चाहिए,तभी समुचित लाभ प्राप्त हो

सकता है।अन्यथा नहीं।वनस्पति तन्त्र-सिद्धि के लिए पहले अध्याय में बतलाये गए सभी निर्देशों का सम्यक् पालन करना भी अति आवश्यक है।तभी अभीष्ट की प्राप्ति हो सकेगी।

----00-----

तृतीय परिच्छेद भाग- ३

विभिन्न बाँदाओं के प्रयोग

बाँदा प्रकरण में यहाँ कुछ खास बाँदाओं का वर्णन किया जा रहा है।*कुछ ऐसे भी पौधे हैं,जिनके मूल-त्वक-काष्ठ आदि का भी तान्त्रिक उपयोग है।अतः उनकी चर्चा भी इसी प्रकरण में खण्ड विभाजन करके कर देना उचित लग रहा है।यथा- कुश,निर्गुण्डी.पीपल,वट,उदुम्बर इत्यादि।*

(१) **वदरी-बाँदा-** वदरी संस्कृत का शब्द है-इसका प्रचलित शब्द है- वेर।यह एक सुस्वादु फल है।इसमें बाँदा सौभाग्य से ही मिल सकता है।यदि कहीं दीख जाये, तो **स्वाती नक्षत्र** में विधिवत निमंत्रण देकर घर लाना चाहिए।विधि वही है जैसा कि पूर्व अध्याय में कहा गया है।एक दिन पहले संध्या समय अक्षत,फूल,जल, सुपारी,पैसा आदि लेकर वृक्ष के समीप जाकर.पूर्व या उत्तर मुख खड़े होकर
प्रार्थना करे- **"हे दिव्य वनस्पति देव। मैं अपने अभीष्ट सिद्धि हेतु कल प्रातः आकर आपको अपने घर ले चलूँगा।आप कृपया मेरे साथ अपने दिव्य विभूतियों सहित चलकर मेरा मनोरथ**

सिद्ध करें। " – कहकर अक्षत,फूल आदि वहीं वृक्ष मूल में छोड़ दें।अगले दिन प्रातः स्नान-पूजनादि से निवृत्त होकर कुछ औजार लेकर पास जायें।वृक्ष को प्रणाम कर, ऊपर चढ़कर, साथ लाये गए औजार से बाँदा को काट लें।अब साथ लाये गए लाल या पीले कपड़े में लपेटकर श्रद्धापूर्वक माथे से लगायें।घर आकर **देव-प्रतिमा-स्थापन** की संक्षिप्त विधि से स्थापन करके पंचोपचार/षोडशोपचार पूजन करें।इसके बाद ग्यारह माला शिव पंचाक्षर एवं ग्यारह माला देवी-नवार्ण मंत्रों का जप,हवन,तर्पण,मार्जन सम्पन्न करके कम से कम एक ब्राह्मण और एक दरिद्रनारायण को भोजन दक्षिणा सहित प्रदान करें।इस प्रकार आपका कार्य पूरा हो गया।अब, जब भी आवश्यकता हो,उस पूजित काष्ठ में से थोड़ा अंश काट कर लाल या पीले कपड़े या तांबे के ताबीज में भरकर प्रयोग कर सकते हैं।कल्याण भावना से (व्यापार नहीं)किसी को दे भी सकते हैं।इस बदरी-बाँदा का एक मात्र कार्य है- मनोनुकूलता प्रदान करना।यानि किसी से कुछ सहयोग लेना हो,कोई कार्य करवाना हो तो विधिवत धारण करके उस व्यक्ति के पास जाकर अपने इष्ट मंत्रों का मानसिक जप करते हुए प्रस्ताव रखना चाहिए।

आपका कार्य अवश्य सिद्ध होगा।यह एक अनुभूत प्रयोग है।

(२) **बहुआर का बाँदा-** बहुआर एक सुपरिचित पौधा है.इसका एक नाम लिसौढ़ा भी है। इसका वृक्ष बहुत बड़ा नहीं होता।अमरूद वगैरह की तरह ही होता है।गोल-गोल छोटे बेर की तरह इसके फल होते हैं।फल लस्सेदार(लार की तरह)

खाने में लगते हैं।यही कारण है कि सुस्वादु फलों की श्रेणी में इसे नहीं रखा जा सकता।हाँ, इसकी लकड़ी बड़ी हल्की और चिकनी होती है।देहातों में जुआठ(हल-जुआठ) के लिए इसका उपयोग होता है।

वहुआर का बाँदा सौभाग्य से कहीं दीख जाये तो पूर्व वर्णित विधि से **मघा नक्षत्र** में घर लाकर पूर्व विधि से ही स्थापन-पूजन करके लाल वा पीले वस्त्र में लपेट कर तिजोरी,कोष,भण्डार,आलमारी,वक्से में यथोचित स्थान देदें।नित्यप्रति पंचोपचार पूजन करके,कम से कम एक-एक माला शिव पंचाक्षर एवं देवी-नवार्ण मंत्रों का जप वहीं बैठकर कर लिया करें। यह वहुआर-बाँदा धन-समृद्धि के लिए अद्भुत् प्रसिद्ध है। जिस घर में इस अभिमंत्रित वहुआर बाँदा की नित्य पूजा होती है,वहाँ साक्षात् लक्ष्मी का वास होता है।अन्नादि भण्डार सदा भरे रहते हैं।

(३) **शिरीष बाँदा-** कवियों का प्रिय शिरीष एक सुपरिचित पौधा है।इसके विशाल पौधे में बड़े सुन्दर-कोमल फूल लगते हैं।आठ-दस ईंच लम्बी डेढ़ ईंच करीब चौड़ी, पतली सी फली में कुछ बीज होते हैं।इनका औषधीय प्रयोग भी होता है।लकड़ियाँ शीशम को भी मात करने वाली होती हैं,किन्तु वास्तु शास्त्र में इसका उपयोग सर्वथा वर्जित है।शिरीष काष्ठ को सद्यः वंश-नाशक कहा गया है।मैं इसका प्रत्यक्ष दर्शी हूँ।एक सज्जन नया मकान वनवाये,जिसमें अपनी वाटिका में सुलभ प्राप्त शिरीष की लकड़ियों का किवाड़ लगवाये।कई अनुभवी-जानकारों ने-

यहाँ तक की बढ़ई ने भी मना किया,किन्तु जाहिल-जिद्दी लोग तो किसी की सुनते नहीं,या कहें भावी होनहार उनकी बुद्धि को ग्रस लेता है।भवन बनने के साल-भीतर ही एक मात्र कुल दीपक का निधन हो गया।आगे लाख प्रयत्न के वावजूद सन्तति-लाभ न कर सके।

यहाँ मेरा अभीष्ट शिरीष का बाँदा है।इसे कहीं संयोग से प्राप्त कर लें तो, **पूर्वा भाद्रपद नक्षत्र** में पहले अन्य प्रयोगों में बतलायी गयी विधि से घर में लाकर स्थापन-पूजन कर रख लें।इसका फल सर्व समृद्धि है।हर प्रकार की चिन्ता-कष्ट का निवारण करने वाला है यह।विशेष अवसर पर इसका थोड़ा अंश चन्दन की तरह घिसकर सिर के ऊपर मध्य भाग में तथा ललाट में तिलक की भांति लगाना चाहिए।

(४) **बरगद का बाँदा- (क)** बरगद(बर,वट) एक सुपरिचित विशालकाय पौधा है।भगवान भोलेनाथ का यह प्रतीक भी है।शिव की तरह यह जटाजूट धारी भी है।वास्तु प्रकरण में इस पौधे का भवन के पूरब दिशा में होना अति शुभद माना गया है,किन्तु पश्चिम दिशा में उतना ही हानिकारक भी कहा गया है।इसका बाँदा यदि सौभाग्य से कहीं दीख जाय तो पूर्व वर्णित विधि से **आर्द्रा नक्षत्र** में, घर लाकर स्थापन-पूजन करके रख लें।श्रम,संघर्ष,युद्ध आदि में सदा विजयदायी है-शिववृक्ष का बाँदा। शारीरिक सुरक्षा और शक्ति-वर्द्धन में इसका जोड़ नहीं।सच पूछें तो यह अद्भुत प्रयोग वाला वनस्पति है।आयुर्वेद में इसके कई औषधीय प्रयोग मिलते हैं।उक्त बाँदा को स्थापन-पूजन के पश्चात् चन्दन की तरह

घिसकर गाय के दूध के साथ पीने से तेज और वल की वृद्धि होती है।वुढ़ापे को दूर भगाने की अद्‌भुत क्षमता है इसमें।

(ख) वट के अन्य प्रयोग-

१. धन-वृद्धि के लिए- यूँ तो वट का बीज ठीक वट-वृक्ष के नीचे नहीं उगता,किन्तु सौभाग्य से कहीं ऐसा पौधा नजर आजाय तो किसी सोमवार या रविपुष्य योग के दिन उसे सम्मान पूर्वक घर ले आयें।किसी अनुकूल जगह पर घर के आसपास लगा दें।पूरबमुखी घर हो तो उसी दिशा में लगायें,और स्थापना विधि से स्थापन-पूजन कर दें।आगे,नित्य उसके समीप खड़े होकर कम से कम एक माला शिव पंचाक्षर मंत्र का जप कर लिया करें।यह पौधा जैसे-जैसे बड़ा होगा,घर में समृद्धि आते जायेगी।

२.वरगद एक अजीब पौधा है- थोड़ा पुराना होने पर हम देखते हैं कि उसके तने से कुछ जड़ें निकल कर नीचे जमीन की ओर आने लगती हैं।कभी-कभी तो ये जमीन में आकर नये वृक्ष का सृजन भी कर देती हैं।इन अवरोही जड़ों को वरोह या वरजटा कहते हैं।किसी रविपुष्य योग में अथवा सोमवार को आदर पूर्वक इसे काट कर घर ले आयें।विधिवत इसका पूजन करें।फिर इसे छोटे-छोटे टुकड़ों में काट कर सुरक्षित रख दें। नित्य इस से दातून करें।वरोह की कूची(व्रश) बड़ी अच्छी होती है।इसके प्रयोग से दांतों की सभी बीमारियाँ दूर होती हैं। वरोह को सुखा कर चूर्ण बनाकर मंजन की तरह भी प्रयोग करने से दंत रोगों में लाभ होता है।ध्यातव्य है कि सभी वनस्पतियों का औषधीय गुण है,किन्तु उनमें तान्त्रिक गुण भी यथाविधि प्रयुक्त कर दिया जाय तो अद्‌भुत लाभ होता है।आये दिन शिकायत होती है कि अमुक आयुर्वेदिक औषधि कारगर नहीं है।इसके पीछे

औषध-निर्माण प्रक्रिया ही मुख्य रुप से जिम्मेवार है।पहले ऋषि-मुनि इन सारी विधियों का प्रयोग करते थे-(वनस्पति ग्रहण से निर्माण तक),किन्तु आज आधुनिक कम्पनियाँ किसी तरह लाकर,कूंट-चूर,पैक कर बाजार में ठेल देती हैं।जड़ी-बूटियों का वैज्ञानिक शोधन भले कर लेते हों ये निर्माता,किन्तु तान्त्रिक गुण कहाँ भर पाते हैं।यही कारण है कि औषधियाँ निर्बीज होती जा रही हैं।वनस्पति के औषधीय गुणों के साथ तान्त्रिक गुणों का संयोग भी किया जाय तो सोने में सुगन्ध आजाय।

(५) अश्वत्थ(पीपल) का बाँदा-

(६) (क) आम,पीपल,वट,पाकर,और गूलर ये पवित्र पंचपल्लव श्रेणी में आते हैं;जिनमें पाकड़,पीपल,और वट क्रमशः सृष्टि के मूल ब्रह्मा-विष्णु-महेश कहे जाते हैं।इन तीनों पौधों को एकत्र(एक ही थल में)लगाने का बड़ा ही शास्त्रीय महत्त्व है- इसे त्रिसंकट कहते हैं।त्रिसंकट-वृक्ष स्थापन,पूजन,दर्शन को बड़ा ही धार्मिक कार्य माना गया है।ये वृक्ष आसानी से प्रायः सभी जगह पाये जाते हैं। इनकी विशेषता यह है कि इनका बीज सामान्य वातावरण में उत्पन्न नहीं होते, यानी आप बीज लगाना चाहें तो अंकुरित नहीं होंगे;किन्तु इनके मीठे सुस्वादु फलों को पक्षी भक्षण करते हैं।उनके उदर की उष्मा से बीजों को अंकुरित होने की क्षमता प्राप्त होती है।इस प्रकार पक्षियों के वीटों(मल) से प्राप्त बीज सहज ही उग आते हैं।

वास्तु शास्त्र में पीपल वृक्ष का स्थान भवन के पश्चिम दिशा में होना लाभकारी कहा गया है,यानी वट के ठीक विपरीत।वहाँ अवस्थित होकर भवन-रक्षा का कार्य करता है पीपल का पौधा।

आयुर्वेद एवं तन्त्र ग्रन्थों में इनके सैकड़ों प्रयोग भरे पड़े हैं।यहाँ हमारा प्रसंग पीपल वृक्ष का बाँदा-विवेचन है।यदि सौभाग्य से पीपल का बाँदा

प्राप्त हो जाय तो पूर्व निर्दिष्ट विधियों से उसे **अश्विनी नक्षत्र** में ग्रहण करें और विधिवत स्थापन- पूजनोंपरान्त किसी इच्छुक स्त्री को लोककल्याणार्थ प्रदान करें।उसे गाय के कच्चे दूध के साथ पीस कर,गाय के ही कच्चे दूध के साथ पिला दें- **रविपुष्य/गुरुपुष्य** योग में तो निश्चित ही वन्ध्या को भी सुन्दर-स्वस्थ संतान की प्राप्ति होगी। ध्यातव्य है कि यह अन्यान्य स्त्री दोषों का भी अमोघ निवारण है।हाँ,यदि पुरुष में भी दोष हो तो उसका निवारण पहले कर लेना चाहिए।तभी स्त्री पर उसकी सफलता प्राप्त होगी।यहाँ एक बात का और भी ध्यान रखना है कि शिव एवं शक्ति मंत्रों के साथ-साथ **संतानगोपालमंत्र** का भी पुरश्चरण(या कम से कम चौआलिस हजार जप)विधिवत दशांश हवन, तर्पण,मार्जन,एवं पांच वटुक भोजन दक्षिणा सहित होना अति आवश्यक है।

(ख)पीपल के अन्य प्रयोग- १. श्रीकृष्ण ने गीता के विभूतियोग में स्वयं को पीपल कहा है।हम ऊपर कह आये हैं कि पीपल साक्षात् विष्णु का स्वरुप है।एक पौराणिक प्रसंग के अनुसार शनिवार को शनिदेव का वास पीपल में होता है।यही कारण है कि शनि की प्रसन्नता हेतु शनिवार को पीपल में गूड़ मिश्रित जल प्रदान करने का विधान है।यह कार्य पश्चिमाभिमुख करना चाहिये।सायं काल पीपल-तल में दीप-दान से भी शनि प्रसन्न होते हैं।

२. देव वर्ग से इतर-प्रेत,वैताल,भैरव,यक्षिणी आदि का भी प्रिय वृक्ष पीपल है।ये क्षुद्र योनियाँ पीपल पर प्रायः वास करती हैं।पीपल के जड़ में नित्य जलार्पण से ये प्रेत योनियाँ प्रसन्न होती हैं।हिन्दु रीति के अनुसार दशगात्र तक पीपल के जड़ में यथाविधि जल डालने का विधान है।किसी व्यक्ति को किसी तरह की अन्तरिक्ष बाधा हो तो नित्य,

पीपल की पंचोपचार सेवा से अवश्य लाभ होगा।किसी अनाड़ी ओझा-गुनी-तान्त्रिक के पास भटकने से अच्छा है कि श्रद्धा-विश्वास पूर्वक पीपल की पूजा करे। किसी जटिल रोग-वीमारी की स्थिति में (जहाँ डॉक्टरी निदान और उपचार कारगर न हो रहा हो)पीपल के पत्ते पर सायंकाल में दही और साबूत उड़द रख कर पीपल के जड़ के समीप रख दें,और थोड़ा जल देकर प्रार्थना करे- हे प्रभो! आप मेरा संकट दूर करें।सप्ताह भर के इस प्रयोग से अद्‌भुत लाभ होगा।मैंने हजारों प्रयोग कराकर देखा है,शायद ही कभी निराश होना पड़ा हो।

३. धर्मशास्त्रों में पीपल का गुणगान भरा पड़ा है।वैज्ञानिक दृष्टि से भी पीपल बहुत महत्त्वपूर्ण है।किसी शुभ मुहूर्त(पंचांग में वृक्षारोपण मुहूर्त देखकर) में पीपल का वृक्ष लगाकर उसंकी सेवा करें।जैसे-जैसे वृक्ष बड़ा होगा आपकी यश-कीर्ति,मान-सम्मान,धन-सम्पदा,आरोग्य की वृद्धि होती जायेगी।

४. दरिद्रता निवारण के लिए किसी अनुकूल पीपल वृक्ष-तल में शिवलिंग(आठ अंगुल से अधिक नहीं)स्थापित कर,पंचोपचार पूजनोपरान्त नित्य ग्यारह माला शिव पंचाक्षर मंत्र का जप करें। थोड़े ही दिनों में चमत्कारिक लाभ होगा।

५. हनुमद्दर्शन—सामान्य नियम है कि किसी वृक्ष के नीचे शयन नहीं करना चाहिए, विशेष कर रात्रि में तो बिलकुल ही नहीं;विशेष परिस्थिति में पीपल इसका अपवाद

है।किसी पवित्र वातावरण में लगे पीपल वृक्ष के समीप(नीचे) वैठकर अठारह /इक्कीश दिनों तक हनुमान की पूजा,जप, स्तवन,एवं रात्रि शयन आदि करने से प्रत्यक्ष, या कम से कम स्वप्न में तो निश्चित ही दर्शन हो सकता है।इसके लिए किसी शुभ नक्षत्र-योगादि का विचार करके **कठोर ब्रह्मचर्य पालन** करते हुए सप्तशती के **दूसरे(लक्ष्मी)बीज,आदि प्रणव,अन्त नमः तथा हनुमते रामदूताय-** मन्त्र का ग्यारह माला नित्य के हिसाव से जप करने से अभीष्ट सिद्धि अवश्य होती है।अनुष्ठान समाप्ति पर षोडशोपचार पूजन सहित रोट(सिर्फ दूध में सने हुए गुड़ मिश्रित आटे की मोटी रोटी के आकार का शुद्ध घी में तला हुआ पकवान) का नैवेद्य अर्पण करे,तथा कुल जप का दशांश हवन-तर्पणादि के वाद, दो वटुक और भिक्षुक का दक्षिणा सहित भोजन भी अनिवार्य है।

(७) **उदुम्बर(गूलर) का बाँदा-** यूँ तो ऊपर गिनाये गये पञ्चपल्लवों में आम को छोड़ शेष चारों-(पीपल,वट,पाकर,गूलर)को उदुम्वर कहा जाता है;किन्तु उदुम्वर शव्द रुढ़ हो गया है- गूलर के लिए ही। इसके फल की सब्जी या पकौड़ियाँ भी बनायी जाती है।उदर रोगों के लिए गूलर अमोघ औषधि है।विभिन्न रोगों- खास कर धातुक्षीणता में यह वहुत गुणकारी है।नवग्रहों में यह शुक्र की संविधा है।

उदुम्वर का बाँदा **रोहिणी नक्षत्र** में पूर्व कथित विधि से घर लाकर स्थापन-पूजन करने के बाद तिजोरी,गल्ला,आलमारी में लाल या पीले वस्त्र में लपेट कर

रख दें।यह धन-धान्य की वृद्धि के लिए अद्भुत है।इसे आप रसोई-घर में भी रख सकते हैं।

उदुम्बर के अन्य प्रयोगः-(क) धनागम- रविपुष्य योग में(गुरुपुष्य में हरगिज नहीं) गूलर का जड़ पूर्व विधि से निमंत्रण देकर घर लावें,और विधिवत स्थापन-पूजन करके,कम से कम ग्यारह माला देवी नवार्ण मंत्र का जप,दशांश होमादि सम्पन्न करने के बाद लाल कपड़े में लपेट कर पूजा-स्थल या कहीं और सुरक्षित रख दें।नित्य पंचोपचार पूजन भी करते रहें।ध्यातव्य है कि प्रथम दिन चढाये गए गन्ध-पुष्पादि को यथावत छोड़ दें,हटायें नहीं।अन्य दिनों वाला पूजन-सामग्री अगले दिन हटाते जाएं।जड़ को हो सके तो चाँदी में जड़वा कर भी स्थापित कर सकते हैं,तांवा या अन्य धातु नहीं।इस प्रयोग से अप्रत्याशित रुप से धनागम होते रहता है।यह प्रयोग अपेक्षाकृत आसान और शतानुभूत है।

(ख)सन्तान-सुख- जिन घरों में सन्तान सुख का अभाव हो-(सन्तान न होता हो,हो-होकर मर जाता हो, जीवित होकर भी अयोग्य और उपद्रवी- परिवार के लिए दुःखदायी हो,रोगी हो) किसी कारण से भी,वैसी स्थिति में उदुम्बर-मूल का प्रयोग चमत्कारी लाभ देता है।सारी बातें प्रयोग संख्या- 'क' के समान ही रहेगी। अन्तर मात्र इतना ही कि पूजन के बाद अपना अभिप्राय निवेदन करना न भूलें।नित्य प्रार्थना करें कि हे उदुम्बर देव मुझे सन्तान-सुख प्रदान करें- मेरे सन्तान को सद् बुद्धि दें... इत्यादि।प्रयोग के थोड़े दिनों बाद से ही आप विलक्षण परिवर्तन या लाभ अनुभव करेंगे।

(ग) प्रेम,प्रतिष्ठा और सम्मोहन- प्रायः देखा जाता है कि हर प्रकार से ठीक-ठाक रहने पर भी, किसी-किसी को घर-परिवार-समाज में समुचित प्रेम-सम्मान नहीं मिलता।ऐसी परिस्थिति में उदुम्बर मूल का प्रयोग चमत्कारी लाभ दिखलाता है।(ध्यान रहे-आकांक्षी का कोई दोष न हो,वह अपने आप में ठीक हो,दोष अन्य का ही हो)।रविपुष्ययोग में उदुम्बर-मूल पूर्ववर्णित विधि से घर लाकर स्थापन पूजन करके आकांक्षी को प्रेम-पूर्वक प्रदान करे,और आशीष दें।ध्यातव्य है यह लोककल्याण की भावना से ही किया जाय।किसी अन्य कारण और उद्देश्य से हरगिज नहीं।जड़ की मात्रा विशेष हो, ताकि कम से कम तैंतीस दिनों तक घिसकर चन्दन की तरह माथे में लगाया जा सके।स्त्रियाँ भी विन्दी की तरह उपयोग कर लाभ पा सकती हैं।खासकर स्त्रियों को ही ऐसे मानसिक कष्ट विशेष रुप से झेलने पड़ते हैं।श्रद्धा-विश्वास पूर्वक प्रयोग करने से अवश्य लाभ मिलेगा।

(घ) सामान्य सुख-शान्ति- उक्त विधि से उदुम्बर मूल का ग्रहण-स्थापन और नित्य पूजन घर में सुख और शान्ति प्रदान करता है।यह प्रयोग निरापद और सुविधाजनक है।कोई भी व्यक्ति इसका प्रयोग स्वयं के लिए कर सकता है।

(ङ) दत्तात्रेय-साधना—भगवान दत्तात्रेय को ब्रह्मा-विष्णु-महेश का संयुक्त स्वरुप माना जाता है।इनकी पूजा- अर्चना-उपासना भगवान आशुतोष की तरह शीघ्र फलदायी कही गयी है।दत्तात्रेय तन्त्र में विभिन्न प्रयोगों की चर्चा है।प्रसंगवश यहाँ उदुम्बर-प्रयोग की चर्चा कर रहा हूँ।रविपुष्य योग में प्रारम्भ कर, किसी एकान्त और पवित्र स्थान में गूलर के पेड़ के नीचे बैठकर दत्तात्रेय

पंचाक्षर(ॐ दां युक्त) मंत्र का सोलह माला जप इक्कीश दिनों तक करने से चमत्कारिक लाभ होता है।जप से पूर्व नित्य यथासम्भव पंचोपचार/षोडशोपचार पूजन करना चाहिए;और अनुष्ठान समाप्ति की विधि अन्य विधियों जैसी ही होगी- यानी दशांश हवन,तर्पण,मार्जनादि,तथा दो बटुक एवं भिक्षुक भोजन सदक्षिणा अनिवार्य शर्त है।नित्य पूजा में अन्य सामग्री के साथ-साथ मलयागिरि स्वेत चन्दन,स्वेत पुष्प एवं केवड़ा का इत्र आवश्यक है।साधक को उत्तर या पूर्वमुख बैठना चाहिए।

यही प्रयोग पूर्व विधि से उदुम्बरमूल को घर में लाकर भी किया जा सकता है।

(८) **हरश्रिंगार(हरसिंगार) का बाँदा** – यह भी जाना पहचाना पौधा है। इसके पौधे मध्यम कद-काठी के होते हैं,और कटे किनारों वाले छोटे-छोटे पत्ते।खूबसूरत सफेद(नारंगी डंठल युक्त) फूल- सुबह-सुबह वृक्ष के चारों ओर गोल घेरे में पसरे- भीनी-भीनी सुगन्ध बिखेरते मिलेंगे।यदि आसपास कहीं हरसिंगार का एक भी पौधा है,तो सारा वातावरण रजनीगंधा सा सुवासित हो जाता है।हरसिंगार में बाँदा होना अति दुर्लभ है।संयोग से कहीं प्राप्त हो जाय तो इसे **हस्ता नक्षत्र** में पूर्व निर्दिष्ट विधि से घर लाकर,पूर्व वर्णित विधि से स्थापन-पूजन कर लें और बक्से, तिजोरी,आलमीरे में यथोचित स्थान पर रख छोड़ें।छोटे टुकड़े को तावीज में भर कर भुजा अथवा गले में धारण भी कर सकते हैं।जरुरतमन्द को आशीर्वाद स्वरुप दे भी सकते हैं।अक्षय लक्ष्मी के आमन्त्रण के लिए यह बड़ा ही अद्भुत् है।

(९) **थूहर(सीज) का बाँदा-** थूहर एक जहरीला सा पौधा है।इसके सर्वांग में दूध ही दूध भरा होता है।इसका दूध आंखों के लिए बड़ा ही घातक है।वैसे इसके दूध को सुखा कर, गोलियाँ बनाकर उदरशूल में वैद्य लोग प्रयोग करते हैं।यानी कि प्राणहर नहीं है।इसकी लगभग डेढ़ सौ प्रजातियाँ हैं।सबके गुणधर्म भिन्न हैं।गृहवाटिका में इसके विभिन्न प्रजातियों को खूबसूरती के लिए लगाते हैं।इसका प्रचलित नाम कैक्टस है।मेरा अभीष्ट ये सभी प्रजातियाँ नहीं,बल्कि इसकी एक खास प्रजाति है, जो एक-डेढ़ ईंच गोलाई वाला तना मूलक होता है।पुराना होने पर मध्यम वृक्ष के
आकार का हो जाता है।तब इसके तने की मोटाई भी काफी अधिक हो जाती है।इसकी हरी कोमल पत्तियों को घी में भूंज कर रस निचोड़, खांसी-जुकाम में भी प्रयोग करते हैं।इसका गुण कफ-निस्सारक है।पहले, देहातों में प्रसूतिका गृह के द्वार पर इसे अवश्य स्थापित किया जाता था।मान्यता यह थी कि इसके द्वार-रक्षण से भूत-प्रेतों का प्रभाव सूतिकागृह में नहीं होता।सूर्य जब **हस्ता नक्षत्र** में आते हैं(बरसात के दिनों में) तब इसकी गांठों को सरकंडे के साथ मिलाकर किसान अपने धान के खेतों की रक्षा के लिए मेड़ पर स्थापित करते हैं।आज शहरी सभ्यता में भी प्रायः घरों में इसका छोटा पौधा गमलों में कैद नजर आजाता है।इससे वास्तु दोषों का भी निवारण होता है।विहित समय में थूहर का बाँदा पूर्व निर्दिष्ट विधि से घर लाकर,स्थापित-पूजित कर रख लेना चाहिए। प्रत्युत्पन्न मतित्त्व के लिए यह बड़ा ही अद्भुत है।वाक् पटुता,वाक्

चातुरी, प्रभाव, सम्मोहन,मेघाशक्ति वर्धन, दूर्दर्शिता,चिन्तन शक्ति आदि में इसका यथोचित प्रयोग करना चाहिए।ध्यान रहे- ये सारे अद्भुत गुण तत् वनस्पति की विधिवत मंत्र संयोग और सिद्धि से ही सम्भव है।विना सम्यक् सिद्धि के कोई चमत्कार लक्षित नहीं होगा।

(१०) **आम का बाँदा-** आम का बाँदा अति सुलभ है।प्रायः आम के पेड़ों में यह मिल ही जाता है।इसके प्रयोग भी अपेक्षाकृत सहज हैं।किसी नक्षत्र विशेष का बन्धन भी नहीं है।सिर्फ रविपुष्य योग का विचार करके पूर्व निर्दिष्ट विधि से घर लाकर, स्थापन-पूजन कर किसी पवित्र स्थान में सुरक्षित रख दें।यह बाँदा विजयदायी है।

पुरुषों को दांयी भुजा में एवं स्त्रियों को बांयी भुजा में तावीज में भर कर धारण करना चाहिए।किसी कार्य की सफलता हेतु इसका प्रयोग किया जा सकता है।

(११) **कुश का बाँदा-** कुश दो-तीन फीट ऊंचा क्षुप जातीय घास है,जिसके विना शुभाशुभ कर्मकांड अधूरा माना जाता है।इसका संस्कृत नाम दर्भ है। नवग्रहों में केतु की यह समिधा है।यूँ तो इसमें बाँदा होना आश्चर्य जनक प्रतीत होता है,किन्तु सच्चाई ये है कि कभी-कभी इसके पतले तनों के बीच कुछ गाँठें वन जाती हैं,जो देखने में रुद्राक्ष के छोटे दाने सदृश होती हैं- तन्त्र-शास्त्रों में इसे ही कुश का बाँदा कहा गया है।यह दुर्लभ बाँदा कदाचित प्राप्त हो जाय तो **भरणी नक्षत्र** में पूर्व निर्दिष्ट विधि से घर लाकर स्थापन-पूजन करके पवित्र स्थान में रख दें।इसकी क्षमता की निरंतरता के लिए नित्य श्री महालक्ष्मी

मंत्र का कम से कम सोलह बार जप अवश्य कर लिया करें।इसका मुख्य गुण है- दरिद्रता का नाश करना।इसके सम्बन्ध में एक और बात ध्यान में रखने योग्य है कि बाँदा अपने पूरे रुप में हो- कटा-फटा जरा भी नहीं,अन्यथा कारगर नहीं होगा।

कुश के अन्य प्रयोग- विशेष अवसरों पर कुश की पत्तियों के तीन टुकड़ों की बनी अंगूठी बायें हाथ की अनामिका अंगुली में एवं दो पत्तियों की दायें हाथ की अनामिका में पहन कर कर्मकांड-क्रियाओं का विधान है।सामान्य तौर पर लोग जरुरत के समय ही इसे बना लेते हैं,और काम के बाद विसर्जित कर देते हैं; खास कर श्राद्धादि कार्य के बाद का कुशा तो विसर्जित कर ही देना चाहिए।

कुशा ग्रहण मुहूर्त- किसी कार्य के लिए कुशा ग्रहण का एक खास मुहूर्त है- अन्य दिनों में उखाड़ा गया कुशा मात्र उसी दिन के लिए योग्य होता है।किसी मास की आमावश्या को उखाड़ा गया कुश महीने भर तक कार्ययोग्य होता है।पूर्णिमा को उखाड़ा गया कुश पन्द्रह दिनों तक कार्ययोग्य होता है;किन्तु भाद्रमास के आमावश्या को उखाड़ा गया कुशा पूरे वर्ष भर के लिए कार्ययोग्य माना गया है।इस विशेष आमावश्या को कुशोत्पाटिनी आमावश्या कहा गया है।प्रातः स्नान के बाद कुश लाने के निमित्त अक्षत, फूल,जलादि के साथ खोदने के लिए कोई औजार लेकर पौधे के समीप जाकर, पूजन-प्रार्थना करके- **ॐ हुँ फट् स्वाहा** मंत्रोच्चारण करते हुए श्रद्धापूर्वक कुश उखाड़ना चाहिए।

इस प्रकार घर लाए गए कुश से आसन का निर्माण करें।आसनी तैयार हो जाने के बाद उस पर पूर्वाभिमुख बैठकर श्रीविष्णु के पंचाक्षर मंत्र का एक माला जप कर लें।जप करते समय भाव ये रहे कि आसन की सिद्धि हेतु जप कर रहा हूँ।पौराणिक प्रसंग है कि श्री विष्णु जब पृथ्वी के उद्धार के लिए महावराह का रुप धारण किए तब शरीर झाड़ने के क्रम में उनके महाकाय से झड़ा हुआ रोम ही पृथ्वी पर गिर कर पवित्र कुशा के रुप में अवतरित हुआ।कुशा की पवित्रता का एक और पौराणिक प्रसंग है-

अपनी माता विनीता को विमाता कद्रु की कैद से छुड़ाने के लिए वैनतेय गरुड़जी ने अमृत हरण किया, और शर्त के अनुसार सर्पों के समक्ष कुश पर ही अमृत-कलश को रख कर चले गए।अमृत-कलश के स्पर्श के कारण कुश की पवित्रता और बढ़ गयी।अस्तु।

कुश का आसन- यहाँ मेरा अभीष्ट है कुशासन- इस साधित-पवित्र कुशासन पर बैठकर जो भी क्रिया करेंगे,वह सामान्य की अपेक्षा अधिक फलद होगी।ध्यान रहे- अपना साधित यह आसन किसी अन्य को उपयोग न करने दें।वैसे पहले भी कह आए हैं- आसन,माला,वस्त्रादि किसी प्रयोज्य वस्तु का अन्य के लिए व्यवहार निषिद्ध है।अपना प्रयोज्य वस्तु किसी को कदापि न दें, और दूसरे का प्रयोज्य वस्तु कदापि न लें।साधकों को इन बातों का सख्ती से पालन करना चाहिए।

पवित्री(कुश की अंगूठी)- उक्त भाद्रमास की कुशा को ऐंट-बांटकर (क्रमशः तीन और दो पत्तियों के संयोग मे) दो अंगूठियाँ बना लें।इनमें तीन पत्तियों वाली अंगूठी को बांयीं मुट्ठी में,और दो पत्तियों वाली अंगूठी को दांयी मुट्ठी में बन्द कर सात मिनट तक श्री विष्णु पंचाक्षर मंत्र का जप कर लें।आगे किसी अनुष्ठान में इसे अनामिका अंगुली में धारण कर, क्रिया करेंगे तो वह सामान्य की अपेक्षा अधिक फलद होगी।

कुश मूल की माला- विहित काल में ग्रहण किए गए कुश-मूल की माला(चौवन या एक सौआठ मूल) बनाकर किसी रविपुष्य/गुरुपुष्य योग में श्री विष्णुपंचाक्षर मंत्र का सोलह माला जप कर कर लें।जप से पूर्व माला को षोडशोपचार पूजित अवश्य कर लेना चाहिए।अब इस साधित कुश-मालिका पर नित्य सोलह माला महालक्ष्मी मंत्र का जप पूरे कार्तिक मास में करने से अक्षय लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।अन्य समय में भी लक्ष्मी मंत्र का जपानुष्ठान इस मालिका पर अत्यधिक फलद होता है।

कुशासन,कुश माला,कुश की पवित्री का उपयोग किसी भी अनुष्ठान में एकत्र रुप से करना चाहिए।इस सम्बन्ध में कुछ बातें और स्पष्ट कर दूँ- सधवा स्त्री को कुश का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए। आसन के लिए सफेद कम्बल का आसन,और रुद्राक्ष की माला प्रायः सर्वग्राह्य है।पवित्री की जगह सोने की अंगूठी धारण करना चाहिए।सोना सम्भव न हो तो चांदी-तांबा से भी काम चल सकता है।दूसरी बात यह कि

आजकल बाजार में कुश के नाम पर मिलने वाला आसन कुश है ही नहीं,प्रत्युत वैसा ही दीखने वाला "कास " है।वैसे कुश कोई दुर्लभ पौधा नहीं है।बात है सिर्फ पहचान की।

(१२) **अनार का बाँदा-** (क) अनार एक सुस्वादु फल है।इसका संस्कृत नाम दाडिम है।यह खट्टे और मीठे दो प्रकार का होता है।मेरा अभीष्ट- स्वाद नहीं, बाँदा है।दोनों में किसी भी पौधे का हो,परिणाम समान है।तन्त्र-शास्त्रों में अनार का बहुत महत्त्व है। यन्त्र लिखने के लिए अनार के डंठल से बनायी लेखनी का उपयोग करने का विधान है। जादू-टोना-टोटका आदि में अनार के विशिष्ट प्रयोग मिलते हैं।अनार का बाँदा घर में रहने से इनसब कुप्रभावों से बँचा जा सकता है।ज्येष्ठा नक्षत्र में अनार का बाँदा पूर्व निर्दिष्ट विधि से घर लाकर स्थापन-पूजन करने के बाद नौ हजार देवी नवार्ण से अभिमन्त्रित करके गृह के मुख्य द्वार के ऊपरी चौखट में जड़ देना चाहिए। इस प्रयोग से हर प्रकार की बाहरी बाधाओं का निवारण होता है।वास्तु-रक्षा के अतिरिक्त शरीर-रक्षा में भी इसका उपयोग किया जा सकता है- तांबे के ताबीज में भर कर, पुरुष दांयी भुजा में,एवं स्त्री बांयीं भुजा में धारण करें।सुविधानुसार गले में भी धारण किया जा सकता है।ताबीज का धागा सदा लाल ही रहेगा- इस बात का ध्यान रखें।

(ख) नक्षत्र भेद से अनार के बांदे का दूसरा प्रयोग भी है।शेष पूजा-विधान पहले की तरह ही है।धन-धान्य,वैभव की

कामना से अनार के बाँदा को **पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र** में घर लाकर स्थापन-पूजन करना चाहिए।पूजन के बाद महालक्ष्मी मंत्र का सोलह माला जप दशांश होमादि अंग सहित अवश्य करे।फिर तिजोरी आदि में उसे स्थायी स्थापर कर दे।समय-समय पर उसके वस्त्र बदलते रहना चाहिए।

(१३) **कपित्थ (कैंत,कैथ) का बाँदा-** यह गणेशजी का प्रिय फल है- *कपित्थ जम्बू फल चारु भक्षणम्*....एक अद्भुत गुण है इस फल में- हाथी को साबूत फल खिला दें। अगले दिन उसके मल में सीधे समूचा फल मिल जायेगा,किन्तु फोड़कर देखने पर आप हैरान रह जायेंगे- उसके अन्दर का गूदा गायब रहेगा।खट्टे-मीठे स्वाद वाला कैथ देखने में ठीक बेल जैसा होता है,सिर्फ दोनों के रंग में भेद है।कपित्थ भूरे रंग का होता है।कपित्थ का बाँदा किसी अत्याधुनिक बूलेटप्रूफ जैकेट से जरा भी कम नहीं,बशर्ते कि सही समय सही ढंग से इसे प्राप्त कर विधिवत तैयार किया जाय। **कृत्तिका नक्षत्र** में कपित्थ-बाँदा को यथाविधि घर लाकर पूर्व निर्दिष्ट विधान से स्थापन-पूजन करके पूजा-स्थान में ही सुरक्षित रख दें।जैसा कि अन्यान्य बाँदा प्रयोगों में कहा गया है- शिव-शक्ति मन्त्रों का यथोचित जप-होमादि विधिवत सम्पन्न करना चाहिए।इसके बाद कम से कम एक सौ आठ आवृत्ति देवी कवच का पाठ करना भी इस प्रयोग में आवश्यक है।ध्यातव्य है कि जप-पाठ आदि सभी कार्यों में देव-प्रतिमा की तरह चौकी वगैरह पर ऊँचा स्थान देकर इसे स्थापित कर, अपने सामने ही रखना चाहिए।प्रयोग के समय पुनः एक आवृत्ति कवच और एक-एक

माला पूर्व प्रयुक्त दोनों मन्त्रों का प्रयोग अवश्य कर लें।इसे तावीज के रुप में एक साथ दोनों भुजा और गले में धारण करना चाहिए।

(१४) सम्भालू-(निर्गुण्डी)- सम्भालु चावल की एक प्रजाति है- राजभोग,देहरादून,वासमती आदि की तरह

किन्तु यहाँ मेरा वर्ण्यविषय निर्गुण्डी है।इसका एक संस्कृत नाम शेफालिका भी है।शेफालिका के पौधे मध्यम आकार- दस-पन्द्रह फीट के करीब होते हैं,जिनकी पत्तियाँ अरहर की पत्तियों जैसी होती हैं,किन्तु रहर की पती हरे रंग की होती है,जबकि शेफालिका की पत्तियों पर लगता है कि प्रकृति ने धूल भरे चूने का छिड़काव कर दिया हो।इसके हल्के नीले फूल बड़े ही सुहावने लगते हैं।विहार में इसे सिन्दूवार के नाम से जाना जाता है।इसके और भी कई क्षेत्रीय नाम हैं- मेउडी,भूत केशी,सिन्धुर,अर्थ सिद्धक,इन्द्राणी आदि।इन्द्राणी नाम से भ्रमित नहीं होना चाहिए, क्योंकि इन्द्रायण या इन्द्रवारुण नाम का एक अन्य वनस्पति(लता) भी है।निर्गुण्डी बिहार- झारखंड के जंगलों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।किन्तु इसका बाँदा अति दुर्लभ है।आयर्वेद में निर्गुण्डी के पंचांग(फल,फूल,मूल,त्वक,पत्र) का उपयोग होता है।यह उत्तम कोटि का वेदनाहर है।तन्त्र में इसके मूल और बाँदा ही उपयोगी हैं।

(क) बाँदा- सौभाग्य से कहीं इसका बाँदा दीख पड़ें तो हस्ता नक्षत्र में पूर्व वर्णित विधि से घर लाकर स्थापन-पूजन करके तिजोरी में स्थान देदें।आर्थिक समृद्धि के लिए यह अति

उपयोगी है।अर्थोपार्जन के नये-नये क्षेत्र दीखने लगते हैं,और थोड़े प्रयास में पर्याप्त सफलता भी लब्ध हो जाती है।

(ख)मूल- निर्गुण्डी-मूल के कई प्रयोग हैं।इसके ग्रहण के लिए रविपुष्य/गुरुपुष्य योग का विचार करके पूर्व निर्दिष्ट विधि से घर लाना चाहिए।मूल का स्थापन-पूजन भी पूर्ववत अनिवार्य शर्त है।पूजन के बाद सुरक्षित रख देना चाहिए,ताकि आवश्यकतानुसार उपयोग किया जा सके।यहाँ बतलाये जा रहे सभी प्रयोग आयुर्वेदीय मत से ग्राह्य हैं।इनका उपयोग वैसे भी किया जा सकता है;किन्तु तान्त्रिक विधि से ग्रहित-साधित वनस्पतियों का अपना ही चमत्कार है।

- 1. **स्वर-शोधन-** पूर्व साधित निर्गुण्डी-मूल को सुखाकर चूर्ण बनालें।आधे चम्मच चूर्ण को सुसुम पानी के साथ प्रातः-सायं कुछ दिनों तक लेते रहने से कंठ-स्वर सुरीला होगा।गले की अन्य समस्याओं में भी इसे प्रयोग किया जा सकता है।
- २. **कृशता-निवारण-** पूर्व साधित निर्गुण्डी-मूल को सुखाकर चूर्ण बनालें।आधे चम्मच चूर्ण को सुसुम दूध के साथ नित्य प्रातः-सायं कम से कम एकतीस दिनों तक लेने से पाचन-क्रिया ठीक होती है,और बल-वीर्य-ओज की वृद्धि होती है।इस चूर्ण को आयुर्वेदिक अन्य पुष्टिकर योगों के साथ मिला कर भी लिया जा सकता है।
- 3. **रक्त शोधन-** विभिन्न प्रकार के चर्मरोगों(दाद,खाज,खुजली,एक्जीमा आदि सत्ताइश प्रकार के क्षुद्र कुष्ट)में पूर्व साधित निर्गुण्डी-मूल को

सुखाकर चूर्ण वनालें।आधे चम्मच चूर्ण को मधु के साथ नित्य प्रातः-सायं छः महीने तक लागातार सेवन करने से समस्त रक्त दोषों का निवारण होता है।

- **4. शान्तिदायी-** पूर्व कथित विधि से निर्गुण्डी मूल का स्थापन-पूजन करके घर में किसी पवित्र स्थान पर रख दें।नित्य प्रति और कुछ नहीं तो कम से कम श्रद्धापूर्वक प्रणाम ही कर लिया करें।इस क्रिया से अनेक लाभ होंगे- घर में शान्ति-सुख-समृद्धि आयेगी।टोने-टोटके से घर की रक्षा होगी।
- **5. व्यापार-वृद्धि-** विधिवत ग्रहण किए गये निर्गुण्डी मूल (वा पंचाग) को पीले वस्त्र में,पीले सरसो के साथ बांधकर दुकान के चौखट में लटका देने से रुके हुए ग्राहक का आगमन होने लगता है।व्यापार में अप्रत्याशित रुप से विकास होने लगता है।
- **6. सुरक्षा-** निर्गुण्डी-मूल को ताबीज में भर कर धारण करने से भूत-प्रेत,जादू-टोने आदि से सुरक्षा होती है।पहले से प्रभाव-ग्रस्त रोगी भी थोड़े ही दिनों में ठीक हो जाता है।
- **7. गर्भरक्षा-** जिस स्त्री को प्रायः गर्भपात हो जाता हो,उसे पूर्व साधित निर्गुण्डी-मूल को पुनः **गर्भरक्षा मंत्र** से अभिमंत्रित करके चांदी या तांवे के ताबीज में भर कर, लाल धागे में परोकर रवि या मंगलवार को धारण करा देना चाहिए।

- **8. निर्गुण्डी-कल्प-** तन्त्रात्मक आयुर्वेद में निर्गुण्डी कायाकल्प का विधान है। पूर्व साधित निर्गुण्डी-मूल को सुखाकर चूर्ण वनालें।आधे चम्मच चूर्ण को बकरी के मूत्र के साथ प्रातः-सायं एक बर्ष तक सेवन करने से अद्‌भुत चमत्कार हो सकता है- यह क्रिया सिर्फ औषध सेवन नहीं,अपितु एक साधना की तरह है।पूरे समय शुद्ध-सात्विक जीवन निर्वाह करते हुए शिव पंचाक्षर एवं देवी नवार्ण जप का अनुष्ठान भी चलता रहेगा।सामान्य गृहस्थ जीवन में मर्यादा पूर्वक रहते हुए भी एक बर्ष की यह साधना- कल्पक्रिया की जा सकती है।कोई पूर्ण व्रह्मचर्य पूर्वक करे तो सोने में सुगन्ध जैसी बात होगी।इस कायाकल्प के चमत्कारों का वर्णन कितना हूँ किया जाय थोड़ा है।आज के समय में आश्चर्यजनक ही कहा जा सकता है- शरीर इतना शुद्ध हो जाता है कि शस्त्र-स्तम्भन,जल-स्तम्भन,अंग्नि-स्तम्भन आदि सारी क्रियायें- खेचरी विद्या की तरह सम्भव होजाती हैं।

(१४) विदारीकन्द- विदारीकन्द एक जंगली लता है,जिसके कन्द(गांठदार मूल) का प्रयोग शक्तिवर्धक औषधी के रुप में किया जाता है।इसकी पत्तियाँ पान की तरह होती हैं,और कंद- वाराही कंद की तरह(किन्तु रोंयेंदार नहीं)होते हैं।स्वाद में थोड़ा कड़वा होता है।यूँ तो किसी लता में बाँदा का होना असम्भव सा है,फिर भी जंगलों में भटककर अन्वेषण करने से इस लता का एक खास रुप मिल सकता है- जिसके लरियों में कहीं-कहीं उभरी हुयी गांठे (एक प्रकार की विकृति) मिल जायेगी- यही विदारीबाँदा है।इसे

पूर्व वर्णित विधि से **पूर्वाफाल्गुन नक्षत्र** में घर लाकर स्थापन-पूजन करके पूजा-स्थल या तिजोरी में स्थायी रुप से स्थान देदें।धन-वृद्धि के लिए वड़ा ही सरल प्रयोग है यह।

(१५) **कर्पास,रोहित,शाखोट,अशोक,और विल्व-** बाँदा प्रकरण के ये अद्‌भुत रत्न हैं।इनके ग्रहण-काल-भेद हैं- क्रमशः **भरणी,अनुराधा,मृगशिरा,उत्तराषाढ़ और अश्विनी नक्षत्र**,शेष प्रक्रिया और प्रयोग विलकुल समान हैं। किन्तु संत निर्देशानुसार इसके पूर्ण मंत्र रहस्य को स्पष्ट नहीं कर पा रहा हूँ।वैसे भी आज के विकृति-वहुल परिवेश में इस तरह की शक्तियों की चर्चा सर्वथा अनुचित ही है,क्यों कि निश्चित है कि जान लेने के वाद इनका दुरुपयोग ही होगा.सदुपयोग होने का सवाल ही नहीं है।**आँखिर कोई अदृश्य होकर क्या करेगा?** मुझे पूरा भरोसा है संत के वचन पर,और तन्त्र के सिद्धान्त पर भी।हाँ,इसके एक अन्य प्रयोग की चर्चा यहाँ करना अप्रासंगिक नहीं होगा- इन बाँदाओं को विधिवत संस्कार करके, शुद्ध गोरोचन के साथ मिश्रण करे,और अंजन की तरह आँखों में लगाकर भूमिविदारण मंत्र का प्रयोग करने से भूगर्भ-तन्त्र का ज्ञान होता है।यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि भूमिविदारण मंत्र की साधना(सवा लाख जप)पहले सुविधा नुसार कर लेनी चाहिए,तभी समय पर प्रयोग करने पर कारगर होगा।

(१६) **निम्ब का बाँदा-** आम की तरह ही नीम का बाँदा भी सहज प्राप्त है।आयुर्वेद में नीम को वहुत उपयोगी माना गया है।तन्त्र शास्त्र में इसका उपयोग षट्कर्मों (में तीनअधम) के लिए किया जाता

है।इसके ग्रहण के लिए दो नक्षत्र कहे गए हैं- उद्देश्य-भेद से।सिर्फ प्रक्षेपण के लिए ज्येष्ठा और स्थापन के लिए आर्द्रा नक्षत्र का चयन करना चाहिए।अधम तान्त्रिक तो दोनों ही रखते हैं।चूंकि इसका प्रयोग अधम कार्य के लिए ही है,अतः प्रयोग से बचना चाहिए,और सबसे बड़ी बात ये है कि एकपक्षीय(निजस्वार्थ वस) आप ऐसा करते हैं तो वर्ष भर के अन्दर ही आपको इसका दुष्परिणाम भुगतना पड़ेंगा।अतः प्रयोग से पूर्व सौ बार सोच लें कि आप जिसे सताने के लिए यह प्रयोग करने जा रहे हैं,क्या वह सच में दोषी है?यदि सच में दोषी है तो इस तन्त्र से उसे सजा अवश्य मिलेगी,और यदि निर्दोष है,तो सजा सौगुना होकर प्रयोग कर्ता को भोगनी पड़ेगी।वैसे यह प्रयोग है बिलकुल अमोघ।

पूर्व निर्दिष्ट विधान से नीम के बाँदा को प्राप्त करे,और आगे की सारी प्रक्रियायें- स्थापन-पूजनादि पुस्तक के प्रारम्भ में बतलायी गयी विधि से सम्पन्न करें।फर्क इतना ही है कि बाकी सारे प्रयोग घर में किए जाने का निर्देश है,जब कि इस क्रिया की पूरी साधना घर में नहीं करनी है- अनुकूल किसी अन्य सुरक्षित स्थान में करनी है।क्रिया पूरी हो जाने पर भी तैयार साधित निम्बबाँदा को घर में लाकर रखना भी नहीं है,अन्यथा विपरीत परिणाम होंगे।स्थापन पूजन के बाद चामुण्डा मंत्र का कम से कम छतीस हजार,और अधिक से अधिक सवा लाख जप करना चाहिये- दशांश प्रक्रिया सहित।

ऊपर दो ग्रहण-नक्षत्रों की चर्चा है।ज्येष्ठा ग्रहित बांदा को चूर्ण करके विरोधी के शरीर पर (विशेष कर सिर पर)छिड़क देने की

बात है,तो आर्द्रा ग्रहित बांदा को शत्रु के घर में(सम्पूर्ण बांदा) किसी तरह स्थापन का विधान है- यानी उसके घर में गाड़ दे- खास कर उसके शयन-कक्ष में साधित बांदा की उपस्थिति अनिवार्य शर्त है,क्यों कि घर के किसी अन्य भाग में रहने पर परिवार के अन्य लोगों पर ही प्रभाव पड़कर रह जायेगा,खास व्यक्ति अछूता ही रहेगा।ध्यातव्य है कि प्रयोग समय के संकल्प का भी ध्यान रखना है- आप उसके साथ करना क्या चाहते हैं?सजा कौन सी दे रहे हैं?

अन्य प्रयोग- नीम के बीजों से निकाला गया तेल विभिन्न औषधियों में प्रयुक्त होता है।किसी रविपुष्य योग में नीम के तेल को नौ हजार चामुण्डामंत्र से अभिमंत्रित करके किसी पात्र में रख दे।फिर उस पात्र में विरोधी की तस्वीर(नाम पता सहित लिखकर)डुबो कर कहीं किसी भी नीम के पेड़ पर टांग दें- काले कपड़े में बांध कर।आपका अभीष्ट पूरा होगा थोड़े हीं दिनों में- जो संकल्प साधे रहेंगे- प्रयोग में।

(१७) **वच** – आयुर्वेद में मेधा-वर्धक औषधियों में वच की प्रसिद्धि है।मुख्यतः यह दो प्रकार का होता है- मीठा और कड़वा।कड़वे स्वाद वाले वच को घोड़वच भी कहते हैं।यह किंचित जहरीला भी होता है- यानी अधिक मात्रा में सेवन प्राण-घातक हो सकता है।**सद्यः प्रज्ञा हरा तुण्डी,सद्यः प्रज्ञा करी वचाः** –आर्ष-वचन इस बात को ईंगित करता है कि वच आशुगुणकारी है- खासकर प्रज्ञा के मामले में।स्नायुतन्त्र पर बड़ा अच्छा प्रभाव है वच का।संगीत प्रेमियों के लिए वच,मुलहठी,कुलंजन आदि सद्यः आशीष हैं- यदि

इच्छित कोकिल नाद स्वरम्, पिव माघ चतुर्दश कृष्ण दिनम्।अद्रक,भद्रक,पीतरसं,वच,वाकुचि,ब्राह्मी,सद्य घृतम्।।

इस चेतना-साधक वनस्पति को ग्रहण करने के लिए अन्य वनस्पतियों की तरह नक्षत्रों का आधार न लेकर सूर्यादिग्रहण का आधार लेना है;यानी दोनों में से किसी भी ग्रहणकाल में- जो अपेक्षाकृत लम्बा हो। शेष बातें- स्थापन-पूजन विधान पूर्व निर्दिष्ट ही रहेंगे।हाँ,स्थापनोपरान्त वागीश्वरी मंत्र का कम से कम ग्यारह माला जप प्रतिदिन के हिसाब से २१ दिनों तक करना चाहिए,साथ ही दशांश विधि से होमादि कर्म भी सम्पन्न करने के पश्चात् यह प्रयोग-योग्य हो जाता है।वच का बांदा अथवा वच की गांठ(कुछ भी) इसी भांति साधित करके प्रयोग करना चाहिए।

वच का चूर्ण वनाकर आधा चम्मच चूर्ण मधु या गोघृत के साथ प्रातः-सायं लागातार इक्कीश दिनों तक सेवन करने से हर प्रकार की स्वरमंडलीय व्याधियाँ- हकलाहट,स्वरभंग,उच्चारण-दोष,जिह्वा-कष्ट आदि ठीक होकर स्वर मधुर बन जाता है। साथ ही अद्भुत रुप से वाक्-सिद्धि भी होती है।नित्य का औषध-सेवन यदि सूर्योदय से पूर्व किया जाय तो लाभ और भी अधिक हो सकता है।

(१८) गुञ्जा(घुंघची)- गुञ्जा एक जंगली लता है।चिरमिट्टी,रत्ती आदि इसके अन्य नाम हैं।इसके जड़ को ही **मुलहठी** कहते हैं।बरसात के प्रारम्भ में ही ये अंकुरित हो जाता है,और फाल्गुन आते-आते इसकी पत्तियां मुरझाने लगती हैं।गर्मी में तो दीखना भी मुश्किल है।अन्दर में जड़ें पुष्ट होती रहती हैं,ऊपर की लता प्रायः सूख जाती

हैं।इसकी पत्तियाँ इमली की पत्तियों जैसी होती हैं।सुन्दर गुलाबी फूल बड़े ही मोहक लगते हैं। फल गुच्छों में लगते हैं,जो थोड़ी चपटी,किन्तु छोटे मटर जैसी होती हैं।आश्विन महीने में फूल लगते हैं, अगहन में फलियाँ नजर आने लगती हैं।फाल्गुन में पक कर तैयार हो जाती हैं।इसी समय **रविपुष्य योग** देख कर इन्हें ग्रहण करना चाहिए,अन्यथा यदि विलम्ब हुआ तो फिर फलियां चटक कर विखर जायेंगी।

गुञ्जा की तीन प्रजातियां तो मैं देख चुका हूँ- स्वेत,रक्त,और गुलाबी।काफी दिनों तक मेरे गृहवाटिका में थी यह लता।इसके अतिरिक्त पीत और श्याम सिर्फ सुनने में आया है।वैसे तन्त्र शास्त्रों में स्वेत का अधिक महत्व है।पुराने समय में इसके सुन्दर बीजों से ही सोनार लोग माप-तौल का काम करते थे।माप का **'रत्ती'** शब्द इसी का द्योतक है।

भगवान श्री कृष्ण का यह अतिशय प्रिय वनस्पति है।वे वैजयन्ती और कौस्तुभ के साथ गुञ्जा की माला भी धारण करते थे।गुञ्जा की श्रेष्ठता का यह प्रमाण- **नवेत्ति यो यस्य गुणं प्रकर्षं,सतं सदा निन्दति नाऽत्र चित्रम्।यथा किराती करिकुम्भ लब्धः,मुक्ता परित्यज्य विभर्ति गुञ्जाम्।।**- यथेष्ठ है।

स्वेत के अभाव में रक्त का प्रयोग किया जासकता है- ऐसा तन्त्र-ग्रन्थों में वर्णन है,और यह भेद सिर्फ बीज के लिए ही है।गुञ्जा-मूल यानी ज्येष्ठीमधु(मुलहठी)जेठीमध के लिए रंग भेद की बात नहीं है। जेठीमधु का प्रयोग आयुर्वेद में महाकफनिस्सारक औषधि के रुप में होता है।यहाँ प्रसंगवश मैं एक और बात बतला दूँ कि

गुञ्जामूल- मुलहठी उत्तमकोटि का कीटाणुनाशक(**antibiotic**) भी है।शरीर में रोग प्रतिरोधी क्षमता के विकास और पोषण में भी इसका योगदान है।**Antihistamine** भी है यह।स्वरमंडल पर इसका अद्भुत प्रभाव है।

ग्रहण-मुहूर्त- किसी भी कार्य की सफलता द्रव्य शुद्धि,और क्रियाशुद्धि पर निर्भर है।द्रव्यशुद्धि में ही सही मुहूर्त की वात आती है।गुञ्जा-वीज अथवा मूल ग्रहण के लिए कार्य-भेद से कई शुभ मुहूर्त सुझाये गए हैं-यथा- रविपुष्य योग,शुक्र-रोहिणी योग,कृष्णाष्टमीहस्त योग,कृष्णचतुर्दशीस्वाति योग,कृष्णचतुर्दशीशतभिषा योग,(किंचित मत से गुरुपुष्य योग भी)।उक्त विवरण के अनुसार स्थिति न वन रही हो तो विशेष स्थिति में सिद्धियोग,अमृतसिद्धि योग,सर्वार्थ सिद्धि योगादि भी ग्रहण किए जा सकते हैं।यदि उक्त किसी भी काल में सूर्यचन्द्रादि ग्रहण योग भी मिल जाय तो फिर क्या कहना।

गुञ्जा के तान्त्रिक प्रयोग-

- **१. अलौकिक शक्ति-दर्शन-** जड़वादी भौतिक विज्ञान के युग में ऐसी बातें करना मात्र उपहास का विषय हो सकता है,किन्तु जिन्हें तन्त्र की आत्मा का अनुभव और ज्ञान है उनके लिए कुछ भी आश्चर्य नहीं।पूर्व वर्णित विधियों का सम्यक् पालन करते हुए घुंघची मूल को साधित करने के बाद शुद्ध मधु के साथ घिस कर आंखों में अंजन की तरह लगा ले।ध्यातव्य है कि साधित मूल का पुनः प्रयोग करने के लिए भी उक्त मुहूर्तों का विचार करना

आवश्यक है।कुछ नहीं तो रविपुष्य योग,या फिर कम से कम मंगलवार ही सही।अंजन लगा कर किसी एकान्त स्थान में एकाग्रता पूर्वक बैठ कर बस यह चिन्तना करे कि **"मुझे किसी अलौकिक शक्ति का दर्शन हो।"**आपका चिन्तन जितना गहन होगा,दर्शन भी उतना ही शीघ्र होगा-(मिनटों से घंटों के बीच)।यहाँ यह स्पष्ट कर देना भी उचित है कि ये अलौकिक शक्तियाँ सात्त्विक,राजस,तामस कुछ भी हो सकती है।अतः साहसी व्यक्ति ही यह प्रयोग करें।दूसरी बात यह कि यह पहले से ही निश्चित कर लें कि उनके आगमन के बाद आपको उनसे क्या संवाद करना है- किस उद्देश्य से आपने उन्हें आहूत किया...आप उनसे चाहते क्या हैं....आदि...आदि।

इस सम्बन्ध में एक पुरानी घटना का जिक्र करना समयोचित लग रहा है।बात अब से कोई चालीस साल पहले की है।मेरे पितृव्य उन दिनों कलकत्ते के बड़ा बाजार,वाराणसी घोष स्ट्रीट में किराये के एक जीर्णशीर्ण मकान में रहते थे।उनके पास पाण्डुलिपियों का कुछ धरोहर था,जिसे बरसात के बाद धूप सेवन करा रहे थे- खुली छत पर,और वहीं चटाई बिछाकर विश्राम भी कर रहे थे।आंख लग गयी थी।इसी बीच हवा के झोंके से कुछ पन्ने उड़कर पास के सीढ़ी पर चले गये,जिन्हें एक अन्य किरायेदार की पुत्री ने उठा लिया।संयोग से वह सामान्य संस्कृत की जानकार थी।पन्ने को पाकर उसने प्रयोग साध लिया,और पूरी सफलता भी मिल गयी।किन्तु बात बर्षों बाद तब खुली जब अर्धरात्रि को आहूत किसी तामसी शक्ति का शिकार होकर वह चिल्लाई।लोग दौड़ पड़े।भय से थरथर कांपती लड़की ने अपनी नादानी और मूर्खता का वयान किया,और पाण्डुलिपि का वह पृष्ट

पितृव्य के चरणों में रखकर दया की भीख मांगी।इस घटना को लिख कर साधकों को भयभीत नहीं, सावधान करना चाह रहा हूँ।

- **२.गुप्त धनादि दर्शन-** साधित गुञ्जामूल को अंकोल(अंकोल के अन्य प्रयोग अलग अध्याय में देखें) के तेल के साथ घिसकर आँखों में अंजन लगाने से कुछ काल के लिए दिव्यदृष्टि सी प्राप्त हो जाती है,जिससे साधक जमीन में गड़े-छिपे खजाने का ज्ञान प्राप्त कर सकता है।यह प्रयोग करने के लिए पुनः योगादि का विचार करते हुए **भूमिविदारण मंत्र** की अलग से साधना कर लेनी चाहिए।जीवन में एक बार भी जिस मंत्र का पुरश्चरण कर लिया जाय तो फिर-फिर प्रयोग करने के लिए विशेष कठिनाई नहीं होती,वस समय-समय पर (ग्रहणादि विशेष अवसरों पर)पुनर्जागृत करते रहना चाहिए।दूसरी बात यह कि मंत्र की मर्यादा का ध्यान रखना भी जरुरी है।किसी भी परिस्थिति में(लोभ-मोह वस)दुरुपयोग न हो।इस प्रयोग को अन्य भूगर्भीय ज्ञान(जल,शल्यादि) के लिए भी किया जा सकता है।
- **३.मृत-चैतन्य प्रयोग-** अपने आप में यह अति आश्चर्यजनक है,किन्तु तन्त्र की अमोघ शक्तियों पर अविश्वास नहीं करना चाहिए।यदि कहीं असफलता दीख पड़े तो साधक में त्रुटिवस,न कि सिद्धान्त में खोट है।गुलाब के फूलों के स्वरस में साधित गुञ्जामूल को घिस कर किसी तत्काल मृत के शरीर पर सर्वांग(विशेष कर समस्त नाड़ियों पर)लेप कर दें तो कुछ काल के लिए मृतक की चेतना वापस लौट सकती है।किन्तु यहाँ विचारणीय यह है कि ऐसे क्षणिक कार्य-सिद्धि के लिए इतना

कठोर प्रयोग करके हम क्या लब्ध करेंगे? तान्त्रिक शक्ति का दुरुपयोग ही तो इसे कहेंगे।

- **४.सुरक्षा कवच-** व्यावहारिक दृष्टि से यह काफी कठिन लग रहा है,किन्तु प्रयोग है- सिंहनी के दूध में साधित गुञ्जामूल को पर्याप्त मात्रा में घिसकर,एकान्त में नग्न होकर पूरे शरीर पर लेप करके, पुनः कपड़े पहन कर युद्ध में जाये तो उस पर किसी प्रकार का शस्त्राघात सम्भव नहीं है।
- **५.विष निवारण-** साधित गुञ्जा-मूल को जल के साथ पीस कर पिलाने से विभिन्न प्रकार के विष का निवारण होता है,किन्तु ध्यान रहे यह प्रयोग सर्प-विष पर कारगर नहीं है।
- **६.सन्तान दायी-** साधित गुञ्जा-मूल को तांबे के तावीज में भरकर कमर में बांधने से निराश स्त्रियाँ भी सन्तान-लाभ कर सकती हैं।
- **७.ध्वजभंग-निवारक(पुन्सत्व-वर्धक)-** भैंस के घी में साधित गुञ्जामूल को घिस कर पुरुषेन्द्रिय पर महीने भर लेप करने से विभिन्न इन्द्रिय विकार नष्ट होकर उत्तेजना आती है,और शुक्र-स्तम्भन भी होता है।
- **८. बल-वर्धक-** मुलहठी का चूर्ण एक-एक चम्मच नित्य प्रातः-सायं गोदुग्ध के साथ सेवन करने से ओज- बल-वीर्य की अकूत वृद्धि होती है।तिल के तेल के साथ घिसकर पूरे वदन में लेप करने से भी कान्तिमय सुन्दर शरीर होता है।
- **९.ज्ञान-वर्द्धन-** बकरी के दूध में मुलहठी(गुञ्जामूल) को घिसकर दोनों हथेलियों में लम्बे समय तक लेप करने से बौद्धिक विकास होकर धारणा शक्ति विकसित होती है।

- **१०.शत्रु-दमन-** रजस्वला के रज में गुञ्जामूल को घिसकर आंखों में अंजन कर जिस शत्रु के सामने जाये,वह निश्चित ही पराभूत हो,भाग खड़ा हो।वस्तुतः इस प्रयोग के प्रभाव से शत्रुभाव से दृष्टिपात करते ही देखने वाले को दृष्टिभ्रम हो जाता है।उक्त प्रभाव काले तिल के तेल में मुलहठी घिसकर अंजन करने से भी हो सकता है,किन्तु प्रभाव थोड़ा कम दीखेगा।
- **११. कुष्ट-निवारण-** तीसी(अलसी)के तेल में गुञ्जामूल को घिसकर प्रभावित अंग में लेप करने से गलित कुष्ट में लाभ होता है।
  - **१२.मारण प्रयोग-** साधित गुञ्जामूल को शुद्ध गोरोचन(एक अति दुर्लभ जांगम द्रव्य)के साथ पीस कर,अनार की लेखनी से भुर्ज पर मृत्यु-यंत्र (साध्य नाम युक्त) लिखकर श्मशान भूमि में स्थापित करके एक माला मारण-मंत्र का जप करने मात्र से ही शत्रु की बड़ी दर्दनाक मृत्यु होती है- ऐसा तन्त्रशास्त्रों का वचन है। पादपूर्तिक्रम में इन बातों की चर्चा मात्र किए दे रहा हूँ।आज के युग में आत्मनियंत्रण का सर्वदा अभाव सा है,अतः यंत्र और मंत्र को ईंगित भर कर देना ही उचित है।वैसे भी सच्चे साधक को इन सब प्रयोगों में अभिरुचि नहीं होती,और आडम्बरी के हाथ घातक हथियार देना बुद्धिमत्ता नहीं।अस्तु।

(१९) **आंवला-** आंवला एक सुपरिचित पौधा है।इसके सामान्य गुणों से आम आदमी भी परिचित है।इसके पौधे प्रायः कमोवेस सभी जगह पाये जाते हैं,किन्तु आंमले में बाँदा का पाया जाना परम

सौभाग्योदय होने के समान है।यदि दीख जाय कहीं तो पूर्व निर्दिष्ट विधि से **आश्लेषा नक्षत्र** में घर लाकर विधिवत स्थापन-पूजनोपरान्त धारण करना चाहिए।यह एक अद्‌भुत सुरक्षाकवच का काम करता है।किसी प्रकार के अस्त्र-शस्त्र का इस कवच पर प्रभाव नहीं पड़ता।

-----()()()()----

तृतीय परिच्छेद भाग -४.

बाँदा तिलकःएक विशिष्ट प्रयोग

ऊपर के प्रसंगों में विभिन्न वनस्पतियों के बांदाओं का परिचय और उनका तान्त्रिक प्रयोग यथासम्भव स्पष्ट करने का प्रयास किया गया।बांदाओं के साथ-साथ उनके जड़ों का भी तान्त्रिक प्रयोग प्रसंगवश साथ में ही दे दिया गया है।इस स्वतन्त्र अध्याय में कुछ खास तरह के तिलक की चर्चा की जा रही है।यूँ तो सामान्य नियमानुसार जिन-जिन वनस्पतियों(बांदा और मूलादि) का जो-जो प्रयोग बतलाया गया है,उसी भांति उन-उन वनस्पतियों का प्रायः तिलक प्रयोग भी किया ही जा सकता है- अपने वुद्धि-विवेक से।फिर भी कुछ विशिष्ट प्रयोगों की चर्चा और भी खुले तौर पर कर देना उपयुक्त लग रहा है।

पूर्व वर्णित विधि से ग्रहित,पूजित,साधित शाखोट(सिहोर) वृक्ष के वांदा और तदरुप ही आम का बांदा तैयार करले,साथ ही गोखरु(कंटक वनस्पति) ताजी या जड़ी-वूटी की दुकान से लाकर समान मात्रा में तीनों को मिलाकर चूर्ण वना ले।अव इस मिश्रित चूर्ण का चतुर्थांश सैंधव का भी

मिश्रण कर दे।ध्यातव्य है कि यह मिश्रण कार्य पुनः रविपुष्य योग विचार करके ही करे,अन्य काल में नहीं।इस भांति चूर्ण तैयार करके एक बर्ष तक स्थायी रखा भी जा सकता है।चारो वनस्पतियों मिश्रण तैयार हो जाने पर कम से कम ग्यारह माला शिव पंचाक्षर और नौ माला शक्ति नवार्ण मन्त्रों का जप अवश्य कर लेना चाहिए। प्रयोग के समय बकरी के दूध के साथ लेप बना कर माथे पर त्रिपुण्ड की भांति लगाले।इसका नित्य प्रयोग भी किया जा सकता है,और विशेष अवसरों पर भी।इस लेप का साधक ध्यान लगाकर बड़े सहज रुप से जो चाहे देख सकता है।जैसे- आपके पास कोई प्रश्न लेकर आया कि मेरा पुत्र घर से भाग गया है या लापता है।अभी वह कहाँ किस स्थिति में है? इस लेप का नियमित साधक वस पल भर के ध्यानस्थ होगा,अपने इष्टदेव का ध्यान करेगा,और उद्देश्य निवेदन करेगा।क्षण भर में ही चलचित्र की भांति वर्तमान(इच्छित) घटना-क्रम उसके सामने घूम जायेगा,जिसे पृच्छक को बता कर लोक कल्याण का महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न कर सकता है।परन्तु ध्यान रहे- इस विद्या का कदापि दुरुपयोग न करे,अन्यथा घोर विपत्ति का सामना करना पड़ सकता है।मेरे कुटुम्ब में एक ऐसे साधक हैं(अभी वर्तमान में भी)जो इस तरह की अनेक साधनायें कर चुके हैं।किन्तु अफसोस कि तन्त्रशास्त्र की आधी बातों को ही उन्होंने अंगीकार किया।लाख हिदायत के बावजूद नियमों की धज्जियां उड़ा दी,और फिर दुष्परिणाम भी सामने ही हाजिर हुआ।तन्त्र को व्यापार बना कर जो दौलत और सोहरत उन्होंने हासिल किया सब कुछ पानी के बुदबुदे सा कुछ ही दिनों में लुप्त हो गया।पत्नी गुजरी,बेटा गुजरा,बहू गुजरी,पोता भी गुजरा,अपना कहा जाने वाला शरीर भी अचानक नाकाम होने लगा...तब थोड़ी आँख खुली,पर क्या बर्षा जब कृषि

सुखानी?बड़े मुश्किल से अब थोड़े सम्भले हैं।अतः सावधान।तन्त्र वहुत कुछ दे सकता है,तो सवकुछ छीन भी सकता है।

----()()()--

५. रूद्राक्ष

मानव जाति के लिए वनस्पति जगत का एक अद्भुत् उपहार है- रुद्राक्ष।इसके गुणों का कितना हूँ वर्णन किया जाय, थोड़ा ही होगा। 'रुद्र' और 'अक्ष' की संधि से बना शब्द रुद्राक्ष की उत्पत्ति के कई पौराणिक प्रसंग हैं।श्री शिव पुराण में इसका विशद वर्णन है।विशेष जिज्ञासु उस मूल स्थान पर इसे देख सकते हैं।अन्यान्य ग्रन्थों में भी इसकी पर्याप्त चर्चा है।जप साधना में प्रयुक्त मालिका में इसे सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है।वैसे तो अलग-अलग मंत्रों के लिए अलग-अलग मालाओं का विधान है,किन्तु इससे रुद्राक्ष की सर्वग्राहिता में कमी नहीं आयी है।सोने और हीरे-माणिक की मालाओं से भी उत्तम माना गया है इसे।इसकी उत्पत्ति शिव के नेत्र से मानी गयी है।नेत्र- अग्नि तत्त्व का वोधक है- आलोक इसका गुण है।ऊष्मा इसकी शक्ति है।पंचतन्मात्राओं में वरीय स्थान पर है यह।आहार क्रम में लगभग अस्सी प्रतिशत नेत्रमार्ग से ही होता है।यदि आपने रुद्राक्ष को ' समझ लिया ' तो समझें कि शिव का अस्सी प्रतिशत आपने पा लिया,अब थोड़ा ही शेष रहा आगे जाना।मेरा यह कथन कुछ अजीब लग रहा होगा,किन्तु अक्षरशः सत्य है यह।इन सवकी गहराइयों में उतरेंगे तो रुद्राक्ष की महत्ता और भी लक्षित होगी।शिव की प्राप्ति के लिए रुद्राक्ष का आलोक अनिवार्य है।

रुद्राक्ष एक बहुवर्षायु मध्यम काय वृक्ष के परिपक्व फल का गुठली है।इसका फल गूलर की तरह गोल होता है,जो गुच्छों में काफी

मात्रा में फलता है।अन्तर यह है कि गूलर मोटे तने में निकले पुष्प-तन्तुओं में फलता है,और रुद्राक्ष अन्य पौधों की तरह टहनियों की फुनगी पर,जो गोल काला जामुन सा गुद्देदार होता है,किन्तु जामुन वाली कोमलता के वजाय कठोरता होती है इसके गुद्दे में।परिपक्क फल स्वतः गिर पड़ते हैं- निमौलियों की तरह।उन्हें बटोर कर जल में सड़ने को लिए डाल दिया जाता है।कुछ काल बाद अधसड़े गुद्दों को हटाकर अन्दर की खुरदरी गुठली प्राप्त कर ली जाती है- यही पवित्र रुद्राक्ष का दाना है। पूर्ण परिपक्क दाने ही गुण-कर्म के विचार से उत्तम होते हैं।कच्चे फलों से प्राप्त दाने(गुठली) के रंग और गुण में पर्याप्त अन्तर होता है।इतना ही नहीं कुछ अन्य जंगली गुठलियों के मिलावट भी आसानी से हो जाते हैं- अपक्क गुठलियों में।वैसे प्राप्ति और उपलब्धि के बीच भारी अन्तर होने के कारण मिलावट का अच्छा अवसर है।

इसका प्राप्ति स्थान इण्डोनेसिया,नेपाल,मलाया,वर्मा आदि हैं।वैसे भारत के भी कई भागों में शौकीन लोग अपनी वाटिका में लगाकर गौरवान्वित होते हैं।इधर भारत सरकार की भी कृपा हुयी है- इसके व्यावसायिक उत्पादन के प्रयास हो रहे हैं।

आकार भेद से रुद्राक्ष की कई जातियाँ हैं।मुख्य रुप से तो रुद्राक्ष गोलाकार ही होता है ,किन्तु कुछ लम्वे,चपटे,चन्द्राकार,अण्डाकार आदि स्वरुप भी पाये जाते हैं।दानों का आकार गोलमिर्च के आकार से लेकर छोटी मटर,बड़ी मटर,बेर,आंवले तक का पाया जाता है।लोक मान्यता है कि छोटे दाने उत्तम होते हैं।किन्तु वात ऐसी नहीं है।गुणवत्ता की दृष्टि से छोटे आकार का कोई विशेष महत्त्व नहीं है।परन्तु इधर कुछ दिनों से पश्चिम ने इस पर कृपाकर दी है,साथ ही अपने ही व्यापारी संतों ने इसे

दुर्लभ सा बना दिया है- कुछ नयी-नयी बातें कह कर। और जब कोई तुच्छ वस्तु भी श्रीमानों द्वारा अपनायी जाने लगेंगी तो आमजन के लिए उसका दुर्लभ हो जाना स्वाभाविक है।हमारे पुराने संत- ऋषि-महर्षि इसे शरीर के विभिन्न भागों – कंठ,जूड़ा,वाजू,कलायी आदि में धारण करते थे- वे वड़े आकार के ही हुआ करते थे।किन्तु अमीरों के सुकुमार शरीर छिल न जायें खुरदरे वड़े दानों से इसलिए छोटे दानों का आधुनिक संतो ने विज्ञापन कर डाला।अस्तु।सुविधा की दृष्टि से छोटे दाने पहनने के लिए और वड़े दाने जप के लिए उपयुक्त कहे जा सकते हैं।वहुत वड़े दाने- वेर या आंवले से वड़े तो जप के लिए भी उपयुक्त नहीं ही कहे जा सकते।

आकार के सम्बन्ध में एक खास वात और है कि जिस पौधे में फलों का जो आकार है,हमेशा वही रहेगा।

थोड़ा बहुत अन्तर भले हो जाय।यानी छोटे आंवले जैसे फल देने वाले पौधे वड़े आंवले जैसे फल कदापि नहीं दे सकते।(आंवले में भी यही बात है)इस प्रकार चार-पांच आकार वाले पौधे होते हैं।हाँ,इन आकारों के साथ-साथ विभिन्न मुखभेद भी है।

अतः 'मुखभेद' की चर्चा करते हैं।रुद्राक्ष के खुरदरे दानों पर देशान्तर रेखाओं की तरह- ऊपर.से नीचे कुछ धारियाँ होती हैं- एक से अनेक तक।शास्त्रों में इक्कीस धारियों तक का उल्लेख मिलता है।इन धारियों को ही मुख कहते हैं- जितनी धारियाँ उतने मुख।चपटे आकार वाले दो मुखी,और गोल आकार वाले पांच मुखी रुद्राक्ष की भरमार है।इनमें नकली की वात नहीं है।हाँ पुष्ट-अपुष्ट दानों को पहचानना आवश्यक है।छः मुखी भी प्रायः सहज प्राप्त हैं।किन्तु शेष मुख-संख्या वाले का सर्वथा अभाव

है।वाजार की मांग को देखते हुए धूर्त-दुष्ट व्यापारी कृत्रिम(लकड़ियों पर खुदाई करके,अथवा पांच को यथासम्भव सात,नौ आदि मुख बनाकर लोगों को ठगते रहते हैं।एक मुखी सर्वाधिक श्रेष्ठ और दुर्लभ है,अतः इसकी सर्वाधिक ठगी होती है। जहाँ तक मेरी जानकारी है,अलग-अलग मुखों के लिए अलग-अलग पौधे नहीं होते।एक ही पौधे में मुख(धारियों) का अन्तर संयोग से मिल जाता है-ठीक उसी तरह जैसे बेल की तीन पत्तियां एक डंठल से जुड़ी होती हैं,और सभी 'त्रिपत्तियों 'की यही स्थिति होती है;किन्तु संयोग और सौभाग्य से उसी पौधे में चार-पांच-छः यहाँ तक की ग्यारह पत्तियां भी एक डंठल से जुड़ी मिल जाती हैं,जिन्हें तन्त्र में काफी महत्त्वपूर्ण माना गया है।प्राचीन ग्रन्थों में मुख के अनुसार ही रुद्राक्ष का वर्गीकरण किया गया है।

वैसे तो रुद्राक्ष सीधे शिव से सम्बन्धित है,फिर भी विभिन्न मुखों का विभिन्न देवताओं से संबन्ध बतलाया गया है;और जब मुखों के स्वामी देवता निश्चत हैं तो उनका अलग-अलग मंत्र होना भी स्वाभाविक है। यहाँ एक से चौदह मुख तक की तालिका प्रस्तुत की जा रही हैः-

मुख	देवता	मन्त्र
एक	शिव	ऊँ ह्रीं नमः
दो	अर्द्धनारीश्वर	ऊँ नमः
तीन	अग्नि	ऊँ क्लीं नमः
चार	ब्रह्मा	ऊँ ह्रीं नमः

पांच	कालाग्निरुद्र	ऊँ ह्लीं नमः
छः	कार्तिकेय	ऊँ ह्रीं हू नमः
सात	सप्तर्षि,सप्तमात्रिका	ऊँ हुँ नमः
आठ	वटुकभैरव	ऊँ हूँ नमः
नौ	दुर्गा	ऊँ ह्लीं हूं नमः
दस	विष्णु	ऊँ ह्लीं नमः
ग्यारह	रुद्र,इन्द्र	ऊँ ह्रैं नमः
बारह	आदित्य	ऊँ क्रौं क्ष्रौ रौं नमः
तेरह	कार्तिकेय,इन्द्र	ऊँ ह्लीं नमः
चौदह	शिव,हनुमा	ऊं नमः

सामान्यतया रुद्राक्ष-साधना-शोधनादि में सीधे शिवपंचाक्षर(ऊँ नमः शिवाय) का ही प्रयोग करें।विशेष साधना में तो विशेष बातें हैं ही।

रुद्राक्ष में थोड़ा रंग भेद भी है- हल्के लाल,गहरे लाल,और काले।वैसे व्याख्याकार इस रंग भेद को वर्ण भेद से जोड़ना पसन्द करते हैं।किन्तु इस सम्वन्ध में मेरी कोई खास टिप्पणी नहीं है।बस इतना ही ध्यान रखें कि रुद्राक्ष का दाना सुपुष्ट और अखण्डित हो।

रूद्राक्ष में शीर्ष और तल(head-tail) भेद भी है।माला गूंथने में इनका विचार होना अति आवश्यक है।प्रायः साधकों की शिकायत होती है - "मैंने वहुत जप किया,किन्तु सफलता नहीं मिली।" साधना में असफलता के अनेक कारण हैं- **यह गहन विवेचन का एक अलग विषय है।**यहाँ मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूँ कि गलत तरीके से गूंथी गयी माला से अभीष्ट-सिद्धि कठिन हो जाती है,और माला गूंथने वाली चूक प्रायः होती ही

है।माला गूंथने का सही तरीका ठीक वैसा ही है जैसे कि आप एक सौ आठ व्यक्तियों को पंक्तिवद्ध खड़ा कर रहे हों।ध्यान देने योग्य बात यह है कि प्रत्येक व्यक्ति का मुख अपने सामने वाले के पीठ की ओर होगा।और एक सौ आठ की इस पंक्ति को अचानक वृत्त बनाने कहेंगे तो क्या होगा? ठीक इसी तरह प्रत्येक दानों को धागे में तल की ओर से पिरोयेंगे।इस प्रकार एक का शीर्ष दूसरे के तल से मिलता रहेगा,और अन्त में दोनों सिरो को आपस में जोड़कर दोनों धागों के सहारे एक सौ नौवां दाना(सुमेरु) को भी इसी विधि से पिरो देंगे। शीर्ष और तल(head-tail) की पहचान अति सरल है- शीर्ष अपेक्षाकृत ऊभरा हुआ होता है,जब कि तल भाग सपाट होता है।यह ठीक वैसा ही है जैसे नासपाती का फल डंठल से लगा हुआ हो –यही शीर्ष हुआ और दूसरा तल या पृष्ठ भाग।माला गूंथने में एक और अहं बात का ध्यान रखना है कि प्रत्येक दानों के बीच स्थूल ग्रन्थि बनानी चाहिए,ताकि दो दाने आपस में टकराते न रहें।यह नियम जप-साधना के लिए बनायी जारही माला के लिए अत्यावश्यक है।इसके (बीच की ग्रन्थि)बिना माला व्यर्थ है।हाँ,धारण करने वाले माला में यह बहुत जरुरी नहीं है।वैसे इसमें भी ग्रन्थि हो तो कोई हर्ज नहीं।

माला गूंथने के नियम में एक और अति आवश्यक निर्देश है—

स्व हस्त ग्रथिता माला,स्वहस्तात्घृष्ट चन्दनम् । स्वहस्त लिखितम्स्त्रोतम् शक्रस्यापि श्रियं हरेत् ।।

(अपने हाथ से गूथी गयी माला,घिसा गया चन्दन,लिखा गया स्तोत्र- स्वयं व्यवहृत करने से इन्द्र का भी श्री-मान हानि हो सकता है) यानी कि अपने हाथ से गूंथी न जाय,बल्कि अपने निर्देशन में किसी अन्य से गुंथवायी जाय-

वह घर का कोई सदस्य(स्त्री-पुरुष) हो या योग्य बाहरी व्यक्ति। कुछ ऋषियों ने तो यहाँ तक कह दिया है कि माला गूथना - पुत्री को जन्म देने के समान है।अब अपनी जन्मायी हुयी कन्या से संयोग तो नहीं ही करेंगे।खैर,ठीक पुत्री वाली बात भले न हो,किन्तु कुछ रहस्य अवश्य है- ऋषियों की वाणी में,जिसे मान लेना ही मैं श्रेयष्कर समझता हूँ।आज के परिवेश में उचित है कि सामने बैठकर, माला गूंथने वाले किसी करीगर से अपने निर्देशन में गूंथवा लें- शीर्ष और तल(head-tail) का भेद बताते हुए।

प्रायः लोग बाजार से माला खरीद कर सामान्य शोधन करके(या बिना किए) क्रिया में लग जाते हैं- जो कि बहुत बड़ी भूल है। प्रसंगवस यहाँ रुद्राक्ष परीक्षा(पहचान)और माला संस्कार की संक्षिप्त चर्चा करना उचित लग रहा है।

रुद्राक्ष की परीक्षाः-

- 1. खरीदा जा रहा दाना(माला) रुद्राक्ष ही है- किसी समानदर्शी फल का बीज अथवा लकड़ी पर की गयी नक्कासी तो नहीं- यह जाँचना जरुरी है।परिपक्व फल से उत्तम रुद्राक्ष का दाना प्राप्त होता है।कच्चे फल से प्राप्त दानों को 'भद्राक्ष' कहते हैं।यह गुणवत्ता में अतिन्यून है।
- 2. रुद्राक्ष के दानों को(गूंथा हुआ माला नहीं) टब,नाद,बाल्टी वगैरह में जल भरकर डाल दें।जो दाने बरतन के तल में जाबैठें- वे ही सही(पुष्ट) दाने हैं।ऊपर तैरते दाने अपरिपक्व और ग्रहण योग्य नहीं हैं।ये प्रभावहीन हैं।

- 3. गुणवत्ता की दृष्टि से दानों का बड़ा-छोटा होना बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है।आम तौर पर धारण के लिए छोटे और जप के लिए मध्यम(बड़े नहीं) आकार का चुनाव करना चाहिए।
- 4.दाने सर्वांगपूर्ण हों- कटे,फटे,टूटे,कीड़े-युक्त,विकृत,टेढ़े छिद्र वाले,देखने में मलिन,बिलकुल चिकने न हों।
- 5. साधना के लिए नया रुद्राक्ष ही खरीदें।पुराना- किसी का व्यवहृत न हो।
- 6. पहले से घर में पड़े- पितादि द्वारा व्यवहृत माला ग्रहण किया जा सकता है,किन्तु विशेष साधना में वह भी नहीं चलेगा।पुराने माले पर किन-किन मंत्रो का जप चला है - यह जानना भी महत्त्वपूर्ण है।प्रायः देखा जाता है कि घर में पड़ा पुराना माला सीधे पूर्वज की सम्पत्ति की तरह हथिया कर व्यवहार करने लगते हैं- साधकों के लिए यह उचित नहीं है।मान लिया किसी ने माला पर वाम क्रिया साधी हो,और आप विशुद्ध दक्षिण वाले हैं,तो ऐसी स्थिति में ग्रहण कर आप परेशानी में पड़ सकते हैं।(यहाँ वाम-दक्षिण का सामान्य भेद मात्र ईंगित है,अन्तर्भेद की बात मैं नहीं कर रहा हूँ)
- 7. दीक्षागुरु द्वारा आशीष स्वरुप प्राप्त माला आँख मूद कर ग्रहण करने योग्य है।
- 8. जप-साधना में माला का परिवर्तन(अदला-बदली)कदापि नहीं होनी चाहिए।इसी भांति धारण करने वाले मालों का भी नियम है।
- 9. पहले जप किया हुआ माला बाद में धारण किया जा सकता है,किन्तु धारण किया हुआ माला जप के योग्य कदापि नहीं

है।प्रायः देखते हैं कि सुविधा की दृष्टि से लोग एक ही माला रखते हैं- गले में से निकाल कर जप किए,और पुनः गले में डाल लिए- यह विलकुल अज्ञानता और मूढ़ता है।सामान्य जन को इससे कोई अन्तर भले न पड़ता हो,साधकों को ऐसा कदापि नहीं करना चाहिए।

- 10. शीर्ष-तल विचार को छोड़,शेष नियम (गूंथने से लेकर ग्रहण,शोधन,और धारण तक) सभी प्रकार के माला के लिए लागू होता है,न कि सिर्फ रुद्राक्ष के लिए।
- 11. तांबे के दो टुकड़ों के वीच रुद्राक्ष को रख कर दवाने से असली रुद्राक्ष का दाना घिरनी की तरह नांचने लगेगा- ऐसा कथन है शास्त्रों का,किन्तु मैंने परीक्षा किया कुछ दानों पर – शतप्रतिशत यह लागू नहीं होता,फिर भी थोड़ा कम्पन अवश्य अनुभव होता है।वह भी नहीं तो हल्के विद्युत तरंग की अनुभूति अवश्य होगी- वशर्ते कि शारीरिक रुप से आप अपेक्षाकृत शुद्ध हों।नियमित नाड़ीशोधन आदि के अभ्यासी को यह अनुभव अधिक तीव्र होता है।वैसे भी उनकी अनुभूतियों का क्षेत्र काफी विकसित होता है।

माला का संस्कारः- ऊपर वर्णित नियमों के अनुसार रुद्राक्ष ग्रहण कर विधिवत माला तैयार हो जाने के बाद उसे संस्कारित करना भी अतिआवश्यक है- विशेषकर साधना हेतु।धारण करने के लिए भी सामान्य संस्कार कर लिया जाएं तो कोई हर्ज नहीं,किन्तु साधना हेतु तो असंस्कारित माला कदापि ग्राह्य नहीं है। माला –संस्कार के लिए सर्वार्थ सिद्धियोग,सिद्धि योग,अमृत सिद्धि योग,गुरुपुष्य योग,रविपुष्य योग, सोम पुष्ययोग आदि में से कोई सुविधाजनक योग का चुनाव करना

चाहिए।चयनित दिन को नित्यक्रियादि से निवृत्त होकर, क्रमशः जल,दूध,दही,घृत,मधु,गूड़,पंचामृत,और गंगाजल से (कमशः आठ प्रक्षालन) करने के बाद, तांबे या पीतल के पात्र में पीला या लाल वस्त्र बिछा कर,सामने रखें।स्वयं पूजा के प्रारम्भिक कृत्य- आचमन,प्राणायामादि करने के बाद जल-अक्षतादि लेकर संकल्प करें-

ॐ अद्य.....श्री शिव प्रीत्यर्थं मालासंस्कारमहंकरिष्ये। (संकल्पादि पूजा विधि के लिए कोई भी नित्यकर्म पुस्तक का सहयोग लिया जा सकता है।यहाँ संक्षेप में मुख्य बातों की चर्चा कर दी जारही है,जो सीधे सामान्य पूजा-पद्धति में नहीं है।)

अब पुनः जल लेकर विनियोग करेंगे- ***ॐ अस्य श्री शिवपंचाक्षर मंत्रस्य वामदेव ऋषिरनुष्टुप्छन्दः श्री सदाशिवो देवता ॐ बीजं,नमः शक्तिः,शिवाय कीलकं साम्बसदाशिवप्रीत्यर्थं न्यासे पूजने जपे च विनियोगः।***

ऋष्यादिन्यास-

ॐ वामदेवाय ऋषये नमः शिरसि – कहते हुए अपने शिर का स्पर्श करे।

ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे- कहते हुए अपने मुख का स्पर्श करे।

ॐ सदाशिवदेवतायै नमः हृदि- कहते हुए अपने हृदय का स्पर्श करे।

ॐ बीजाय नमः गुह्ये - कहते हुए अपने गुदामार्ग का स्पर्श करे।

ॐ शक्तये नमः पादयोः - कहते हुए अपने दोनों पैरों का स्पर्श करे।

ॐ शिवाय कीलकाय नमः सर्वांगे - कहते हुए अपने मुख का स्पर्श करे।

ऊँ नं तत्पुरुषाय नमः हृदये - कहते हुए अपने हृदय का स्पर्श करे।

ऊँ मं अघोराय नमः पादयोः - कहते हुए अपने पैरों का स्पर्श करे।

ऊँ शिं सद्योजाताय नमः गुह्ये - कहते हुए अपने गुदा का स्पर्श करे।

ऊँ वां वामदेवाय नमः मूर्ध्नि - कहते हुए अपने मूर्धा का स्पर्श करे।

ऊँ यं ईशानाय नमः मुखे - कहते हुए अपने मुख का स्पर्श करे।

करन्यास-

ऊँ अंगुष्ठाभ्याम् नमः - कहते हुए अपने दोनों अंगूठों का स्पर्श करे।

ऊँ नं तर्जनीभ्याम् नमः - कहते हुए अपने दोनों तर्जनी का स्पर्श करे।

ऊँ मं मध्यमाभ्याम् नमः - कहते हुए अपने दोनों मध्यमा का स्पर्श करे।

ऊँ शिं अनामिकाभ्याम् नमः - कहते हुए अपने दोनों अनामिका का स्पर्श करे।

ऊँ वां कनिष्ठाभ्याम् नमः - कहते हुए अपने दोनों कनिष्ठा का स्पर्श करे।

ऊँ यं करतलकरपृष्ठाभ्याम् नमः - कहते हुए अपने दोनों हथेलियों का स्पर्श करे।

हृदयादिन्यास-

ऊँ हृदयाय नमः - कहते हुए अपने हृदय का स्पर्श करे।

ऊँ नं शिरसे स्वाहा- कहते हुए अपने सिर का स्पर्श करे।

ॐ मं शिखायै वषट् - कहते हुए अपने शिखा का स्पर्श करे।

ॐ शिं कवचाय हुम् - कहते हुए अपने दोनों वाजुओं का स्पर्श करे।

ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट् - कहते हुए अपने दोनों नेत्रों का स्पर्श करे।

ॐ यं अस्त्राय फट् - कहते हुए अपने दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा को वायें हाथ की हथेली पर बजावे।

पुनः जल लेकर विनियोग करे- *ॐ अस्य श्री प्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्ययुःसामानि*

च्छन्दान्सि क्रियामयवपुः प्राणाख्या देवता आँ बीजं,ह्रीँ शक्तिः क्रौं कीलकं देवप्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः।

प्रतिष्ठा-न्यासः- ॐ ब्रह्म-विष्णु-रुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि(सिर का स्पर्श)

ॐ ऋग्ययुःसामच्छन्दोभ्यो नमः मुखे (मुख का स्पर्श)

ॐ प्राणाख्यदेवतायै नमः हृदि (हृदय का स्पर्श)

ॐ आँ बीजाय नमः गुह्ये (गुदा का स्पर्श)

ॐ ह्रीँ शक्त्यै नमः पादयोः (पैरों का स्पर्श)

ॐ क्रौं कीलकाय नमः सर्वांगेषु (पूरे शरीर का स्पर्श)

अब हाथों में रंगीन(लाल,पीला) फूल लेकर दोनों हाथों से माला को ढककर इन मन्त्रों का उच्चारण करे, और भावना करे कि देवता की शक्ति रुद्राक्ष मनकों में अवतरित हो रही है-

ऊँ आँ ह्रीं क्रौं यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ सः सोऽहं शिवस्य प्राणाः इह प्राणाः।

ऊँ आँ ह्रीं क्रौं यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ सः सोऽहं शिवस्य जीव इह स्थितः।

ऊँ आँ ह्रीं क्रौं यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ सः सोऽहं शिवस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रघ्राणजिह्वापाणिपादपायूष स्थानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।।

अब पुनः अक्षत-पुष्प लेकर,हाथ जोड़कर निम्नांकित मंत्रो का उच्चारण करते हुए भावना करे कि शिव विराज रहे हैं मनकों में-

ऊँ भूः पुरुषं साम्बसदाशिवमावाहयामि।
ऊँ भुवः पुरुषं साम्बसदाशिवमावाहयामि।
ऊँ स्वः पुरुषं साम्बसदाशिवमावाहयामि।

इस प्रकार रुद्राक्ष-माला में साक्षात् शिव को स्थापित भाव से यथासम्भव षोडषोपचार पूजन करे।तत्पश्चात् कम से कम ग्यारह माला श्री शिव पंचाक्षर मन्त्र का जप,तत्दशांश हवन,तत्दशांश तर्पण,तत्दशांश मार्जन एवं एक वटुक और एक भिक्षुक को भोजन और दक्षिणा प्रदान कर माला-संस्कार की क्रिया को सम्पन्न करें।इस प्रकार पूरे विधान से संस्कृत रुद्राक्ष माला पर आप जो भी जप करेंगे सामान्य की तुलना में सौकड़ों गुना अधिक लाभप्रद होगा।इस बात का भी ध्यान रखें कि इस माला की मर्यादा को बनाये रखना है।जिस-तिस के स्पर्श,यहाँ तक कि दृष्टि से बचाना है।कहने का तात्पर्य यह कि सदा जपमालिका में छिपाकर मर्यादापूर्वक रखना है।बर्ष में एक या दो बार उसके वस्त्र भी बदल देना है।अस्तु।

रुद्राक्ष के तान्त्रिक प्रयोगः- आयुर्वेद एवं तन्त्रशास्त्रों में रुद्राक्ष के अनेकानेक प्रयोग बतलाये गये हैं।विविध प्रकार की दैहिक-दैविक-भौतिक संतापों का निवारण रुद्राक्ष से हो सकता है।आधुनिक विज्ञान भी इस पर काफी भरोसा करने लगा है।यहाँ कुछ खास प्रयोगों की चर्चा की जारही है-

- Ψ **शिव-कृपा-** किसी भी आकार और मुख वाले रुद्राक्ष को विधिवत शोधित-संस्कारित करके शिव-प्रतिमा की तरह पूजा जा सकता है- बस यही समझें कि साक्षात् शिव ही विराज रहे हैं रुद्राक्ष-मनके में।
- Ψ शिवपुराणादि ग्रन्थों में तो शरीर के विभिन्न अंगों में रुद्राक्ष धारण का विधान है,किन्तु कम से कम सिर्फ गले में ५४ या १०८ दानों की माला धारण करने मात्र से काफी लाभ होता है।धार्मिक लाभ के अतिरिक्त स्वास्थ्य लाभ भी है।रक्तवहसंस्थान की विभिन्न बीमारियों में अद्बुत लाभ होता है।हृदयरोगों में इसके चमत्कार को परखा जा सकता है।ग्यारह माला शिवपंचाक्षर मंत्राभिमंत्रित रुद्राक्ष के
- पांच बड़े दानों को गले या बायीं बांह में(सामान्य नियम से विपरीत- पुरुष या स्त्री दोनों को)बाँधने से उच्चरक्त चाप या हृदयरोग में अप्रत्याशित लाभ होता है।बिना अभिमंत्रण के भी धारण करने से लाभ तो होगा ही,किन्तु अभिमंत्रित कर देने से गुण में वृद्धि हो जायेगी।इसी भांति अभिमंत्रित दानों को जल में घिस कर एक-एक चम्मच अवलेह नित्य दो-तीन बार लिया जाय तो अद्भुत लाभ होगा।स्वस्थ व्यक्ति भी इस प्रयोग को कर सकते हैं- तेज,बल,वीर्य की बृद्धि होकर आरोग्य और दीर्घायु लाभ होगा।

- ᴪ विधिवत शोधित-साधित रुद्राक्ष के तीन-पांच-सात-नौ-ग्यारह-इक्कीश-सत्ताइस-इकतीस-चौवन या एक सौ आठ दाने सुविधानुसार धारण करने से समस्त त्रितापों(दैहिक-दैविक-भौतिक) का शमन होता है।
- ᴪ उक्त रीति से रुद्राक्ष धारण करने से अद्‌भुत रुप से सम्मोहन होकर,मान-प्रतिष्ठा में बृद्धि,यश-श्री-लाभ की प्राप्ति होती है।
- ᴪ विधिवत शोधित-साधित रुद्राक्ष को घिस कर शरीर में लेप करने से भी सम्मोहन-आकर्षणादि की सिद्धि होती है।
- ᴪ विधिवत शोधित-साधित रुद्राक्ष को चन्दन की तरह घिस कर नियमित सेवन करने से भी सम्मोहन-आकर्षणादि की सिद्धि होती है।
- ᴪ विधिवत शोधित-साधित रुद्राक्ष के पांच दाने(बड़े आकार वाले) किसी स्वच्छ तांम्र-पात्र में डाल कर रातभर छोड़ दें।सुवह उस जल का सेवन करें।इस प्रकार के महीने भर के प्रयोग से उदर-विकार,अनिद्रा अम्लपित्त,गैस,कब्ज आदि दैहिक व्याधियों मे आशातीत लाभ होता है।इस प्रयोग में ध्यान रहे कि रुद्राक्ष पर पुरानी किसी प्रकार की गंदगी न हो।
- ᴪ विभिन्न बाल-रोगों में विधिवत शोधित-साधित रुद्राक्ष के तीन या पांच दाने लाल धागे में (ग्रन्थियुक्त) गूथ कर सोमवार के प्रातःकाल गले में पहना दें।अद्वुत लाभ होगा।
- ᴪ प्रायः वच्चे चिड़चिड़े हो जाते हैं,बात-बात में उन्हें किसी की टोक लग जाती है,सोते समय चिहुँक कर उठ जाते हैं,माँ का दूध या बाहरी दूध पीने से इन्कार करते हैं- इस तरह की अनेक बाल-समस्याओं में विधिवत शोधित-साधित रुद्राक्ष को माँ के दूध के

साथ घिस कर, उम्र के अनुसार (आधा या एक चम्मच) पिलाने से शीघ्र लाभ होता है।

Ψ बन्ध्यत्व निवारण हेतु समभाग विधिवत शोधित-साधित रुद्राक्ष को सुगन्ध रास्ना के साथ चूर्ण करके एक-एक चम्मच प्रातः - सायं के हिसाब से गाय के दूध के साथ ऋतुस्नान के दिन से प्रारम्भ कर लागातर सात दिनों तक सेवन करना चाहिए।यह क्रिया लागातार कुछ महीने तक जारी रखे।इस बीच सन्तानेच्छु स्त्री नित्य कम से कम एक माला शिवपंचाक्षर मंत्र का जप और शिव पूजन करती रहे।स्वयं न हो सके तो पति करे या फिर किसी योग्य ब्राह्मण द्वारा कराये।

------000-------

६. हाथाजोड़ी

प्रकृति का एक अद्भुत उपहार है- हाथाजोड़ी।इसके कई नाम हैं- हथजोड़िया,हस्ताजुड़ी,हथजुड़ी, भुजयुग्म,दुहथिया आदि।उर्दू में इसे वखूरि-ए- मरियम कहते हैं।इसका एक नाम चुबकउश्शान भी है।लैटिन में- Cyclemen Parcicum कहा जाता है।कुछ भ्रामक पुस्तकों में ब्रह्मदण्डी और निर्गुण्डी कह दिया गया है-जो सर्वथा अशुद्ध है ।ये दोनों अलग वनस्पतियाँ हैं।सच पूछें तो यह लुप्त वनस्पतियों की श्रेणी में है।मध्यप्रदेश और राज स्थान के कुछ भागों में पाया जाता है।वहाँ इसे वनवासियों द्वारा

"विरवा" नाम से पुकारा जाता है।इसके औषधीय और तान्त्रिक महत्ता को देखते हुए चतुर व्यवसायी एक अन्य वनस्पति को इस नाम से प्रचारित कर दिए हैं,जो गुण और प्रयोग में सर्वथा भिन्न है।बिहार-झारखण्ड की पहाड़ियों पर प्रचुर मात्रा में पाये जाने वाले तीन-चार ईंच लम्बी एक अद्भुत घास को गुण-धर्म-साम्य के आधार पर हाथाजोड़ी के नाम से विख्यात किया गया है।जड़ी-बूटी की दुकानों पर हाथाजोड़ी के नाम से वही घास मिलेगा, जिसे स्त्रियाँ पहले अपने सिंधोरे में अक्षय सुहाग की कामना से रखा करती थी।यह बोरियों के हिसाब से उपलब्ध है।काली पतली डंठल के ऊपरी सिरे पर एक छोटी पत्ती होती है जो सिकुड़ कर ऐसा प्रतीत होती है मानों हाथ की अंगुलियों को भीतर की ओर मोड़ लिया गया हो।बर्षो की सूखी पत्ती को जल में थोड़ी देर डाल कर छोड़ देने से बिलकुल ताजी प्रतीत होने लगती है।हाथ के पंजे की आकृति और जल संपर्क से ताजी हो जाने की विशेषता को देखते हुए हाथाजोड़ी नाम से प्रसिद्धि पाजाना इस क्षद्म वनस्पति के लिए सहज हो गया। बिहार-झारखण्ड के जंगलों में काफी भटकने का सौभाग्य मिला है,जहाँ यह तथाकथित बूटी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है,जिसका अन्य तान्त्रिक प्रयोग है। किन्तु ध्यान रहे यह असली हाथाजोड़ी नहीं है।

असली हाथाजोड़ी एक पौधे की गोलाकार-गांठदार जड़(शक्करकन्द की तरह) से निकली हुयी दो अद्भुत शाखायें हैं, जो ऊपर निकल कर दायें-बायें दो भुजाओं की तरह खड़ी हो जाती हैं।आप कल्पना करें कि एक नंग-धडंग आदमी अपने दोनों हाथ ऊपर की ओर उठाये हुए खड़ा हो,जिसके हाथों की अंगुलियां भीतर की ओर अधमुड़ी अवस्था में हों।ताजी स्थिति में आहिस्ते से दोनों शाखाओं को मिला देने पर आपस में मिली(चिपकी सी) रह जायेंगी।यही इसकी विशेषता है।इसे जल से रक्षा करने की जरुरत है-

क्यों कि अत्यधिक जल-सम्पर्क से सड़ जायेगा,जब कि नकली(हाथाज़ोड़ी के नाम से बाजार में मिलने वाला)वनस्पति को बारम्बार जल-संयोग से कोई क्षति नहीं होती।असली हाथाजोड़ी पौधे की टहनी पर गुलाबी रंग का सुन्दर सा फूल निकलता है।तना (या इसका धड़ कहें) पर हरी पत्ती होती है, जिसका पृष्ट भाग सफेद होता है।जड़ (मिश्रीकन्द या शक्करकन्द की तरह,किन्तु रंग भेद युक्त) श्यामवर्णी होता है।

तन्त्र-साधना हेतु आभायुक्त, सुडौल,सर्वांगपूर्ण(जड़,तना और दोनों पत्तियाँ) पौधा ही ग्रहण करना चाहिए। विकृत,खंडित होने पर साधना हेतु अयोग्य है।

चूँकि हाथाजोड़ी की उपलब्धि कठिन है,अतः प्राप्त करने में मुहूर्त विचार की बात नहीं है।यह सौभाग्य से प्राप्त हो जाए- यही सबसे बड़ी बात है।अतः प्राप्त हो जाने पर मुहूर्त विचार करके साधना प्रारम्भ करें।इस अद्भुत वनस्पति में भगवती चामुण्डा का साक्षात् वास माना गया है,अतः नवरात्र(बारहों में सुविधानुसार कोई भी)ग्रहण किया जा सकता है।ज्ञातव्य है कि प्रत्येक महीने के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से नौवमी पर्यन्त नवरात्रियाँ हैं, जिन्हें प्रधानता-क्रम से रखा गया है- आश्विन, चैत्र,आषाढ़,फाल्गुन,माघ,श्रावण,अगहन,वैशाख,कार्तिक,भादो,ज्येष्ठ और पौष।तन्त्र साधना की अलग-अलग विधियों में, इनके क्रमों में भी उलटफेर होते रहता है-इस सम्बन्ध में सामान्य जन को संशय नहीं करना चाहिए।सीधी सी बात है- आप सुविधानुसार कोई भी महीने का शुक्ल पक्ष ग्रहण कर लें, वशर्ते कि खरमास,गुरु-शुक्रास्त आदि निषिद्ध काल न हों।

विहित काल में अन्यान्य पूजाविधान की तरह षोडशोपचार पूजन करना चाहिए।सामान्यतया जल से शुद्धि करके लाल कपड़े का आसन देकर

प्रतिष्ठित करें।पूर्व अध्यायों में कहे गये(रुद्राक्ष या श्वेतार्क स्थापना)विधान से स्थापन-पूजन करने के बाद भगवती चामुण्डा के किसी भी अनुकूल(गणना-विचार से) मन्त्र का सवालाख या कम से कम छत्तीस हजार जप,दशांश होमादि विधि सहित सम्पन्न करें।ध्यान रहे- अनुष्ठान की पूर्णता ब्राह्मण और भिक्षुक भोजन (दक्षिणा सहित) के बाद ही होती है।इस प्रकार साधित हाथाजोड़ी को सम्मान पूर्वक कहीं- पूजास्थल में सुरक्षित रख दें,और नित्यप्रति पंचोपचार पूजन करते हुए,कम से कम एक माला पूर्व जपित मंत्र को अवश्य जप लिया करें।

हाथाजोड़ी का प्रभाव और प्रयोगः- हाथाजोड़ी का मुख्य प्रभाव सम्मोहनशीलता है।साधक इसे आवश्यकता पड़ने पर अपने साथ लेकर जाये- जैसे, मान लिया कि उसे किसी अधिकारी से कुछ मनोनुकूल काम निकालना है।वैसी स्थिति में स्थायी रुप से रखे हुए साधित हाथाजोड़ी वनस्पति को आदरपूर्वक उठाकर माथे से लगाते हुए अपनी वांछा (आवश्यकता) निवेदन करे- मानों अधिकारी से ही निवेदल कर रहा हो,और फिर मानसिक रुप से, पूर्व साधित मंत्र का नौ-ग्यारह-इक्कीस बार उच्चारण करते हुए गन्तव्य तक प्रस्थान करे- बूटी को साथ लेकर।यह शतप्रतिशत सत्य है कि उस दिन उसकी वांछा अवश्य पूरी होगी।किन्तु ध्यान रहे- किसी गलत उद्देश्य से,स्वार्थ में अंधे होकर इस अमोघ अस्त्र का प्रयोग न कर बैठे,अन्यथा इसका भारी खामियाजा उठाना पड़ सकता है। तन्त्र अमोघ है।इसके सुपरिणाम अमोघ हैं,तो दुस्परिणाम भी उतना ही अमोघ होगा- इसे न भूलें।अतः सावधान।

वशीकरण भी सम्मोहन का ही एक अन्य रुप है। इसके लिए भी उसी भांति अपने शरीर से लगाये हुए- सुविधानुसार हाथ या जेब में रखकर पूर्व कथित विधि से प्रयोग करना चाहिए।

जैसा किं पहले भी कहा जा चुका है- हाथाजोड़ी में भगवती चामुण्डा का वास है।चामुण्डा,दुर्गा,काली आदि सभी एक ही तत्व के भिन्न नाम मात्र हैं- किंचित कार्यानुसार।इनके अनेक मंत्र मंत्रमहार्णव,मंत्रमहोदधि,आदि विभिन्न ग्रन्थों में उपलब्ध हैं।अपनी नाम राशि के अनुसार साध्य,सुसाध्य,दुसाध्य,मित्र,अरि आदि वर्गों का विचार करके अनुकूल मंत्र की साधना कर लेनी चाहिए।सामान्यतया सौम्य कार्यार्थ दुर्गा के सौम्य मंत्रों का चयन करना चाहिए।क्रूर कर्मों के लिए चामुण्डा के क्रूर मंत्रो का चयन करना चाहिए।

हाथाजोड़ी के कतिपय अन्य प्रयोग-

- **धनाप्ति-** पूर्ववर्णित विधि से घर में हाथाजोड़ी की स्थापना करके नित्य पूजन किया करे।साथ ही साधित मंत्र का ग्यारह माला जप करने के बाद अपना अभीष्ट निवेदन कर दे- "हे मातेश्वरी! मेरी निर्धनता का निवारण करें।" इसप्रकार नित्य क्रिया से थोड़े ही दिनों में आप चमत्कारिक लाभ अनुभव करेंगे।धनाप्ति के नये स्रोत खुलते हुए लक्षित होंगे।
- **प्रसव-सुख-** साधित हाथाजोड़ी को जल के साथ चन्दन की तरह धिसकर प्रसूता की नाभि,पेट,और पेड़ू पर लेप कर देने से सहज ही प्रसव होकर वेदना से मुक्ति मिल जाती है।
- **मासिक-स्राव शोधन-** अनियमित,अवरुद्ध,आदि विभिन्न रजोदोषों में हाथाजोड़ी के प्रयोग से अद्भुत लाभ होता है।इसके

लिए बूटी का चूर्ण बनाकर स्वच्छ कपड़े की पोटली में एक चम्मच चूर्ण डाल कर स्त्री की योनी में रात सोते समय स्थापित कर दें।प्रातः जगने के बाद आहिस्ते से निकालकर फेंक दे।इस क्रिया को किसी मंगलवार से ही प्रारम्भ करे,और सातवें मंगलवार तक जारी रखे।यानी पौने दो महीने।

- **मूत्रावरोध-** किसी भी कारण से मूत्रकृच्छ्र,मूत्रावरोध हो तो साधित हाथाजोड़ी को जल के साथ पिष्टकर नाभि और पेड़ू पर लेप कर घंटे भर छोड़ दिया करें। आकस्मिक स्थिति में सिर्फ एक वार के प्रयोग से तत्क्षण लाभ होता है।जटिल और दीर्घ व्याधि की स्थिति में कुछ दिनों तक प्रयोग जारी रखना चाहिए।
- **गर्भ-निवारक-** साधित हाथाजोड़ी के चूर्ण को एक-एक चम्मच सुबह-शाम सात दिनों तक(किसी शनि वा मंगलवार से प्रारम्भ कर) गरम पानी के साथ सेवन करने से गर्भपात हो जाता है।किन्तु सावधान- गर्भपात एक दुष्कर्म है।प्राण-प्रतिष्ठा-रक्षण की स्थिति में ही ऐसा प्रयोग करना उचित है,साथ ही इस बात की सावधानी और व्यवस्था भी होनी चाहिए कि अत्यधिक रक्तस्राव की स्थिति का भी निवारण किया जा सके,अन्यथा महिला की जान भी जा सकती है।

—000—

७.अंकोल

अंकोल मध्यमकाय बहुवर्षायु पौधा है।यह प्रायः सुलभ-प्राप्त वनस्पति है।विहार-झारखंड के जंगलों में मैंने वहुतायत से इसे देखा है।इसका प्रचलित नाम ढेला है।सामान्य तौर पर सुन्दर आकृति वाली छड़ी के रुप में

इसके डालों का उपयोग किया जाता है।पूरे पौधे पर कठोर छोटे-छोटे कांटे होते हैं।उन नोकों को काट-छांट कर शेष प्राकृतिक उभार को छोड़ दिया जाता है,जिससे छड़ी की सुन्दरता बनी रहती है।अपरस(हथेली का एक चर्म रोग)की बीमारी में इसे घिस कर लगाने का पुराना चलन है।छोटे बेर की तरह गुच्छों में फल लगते हैं,जिसके अन्दर बेर की तरह ही गुठलियाँ होती हैं- थोड़ी लम्बोतरी आकृति में।इन गुठलियों में प्रचुर मात्रा में स्नेहन (तैलीय द्रव)होता है।निमौली की तरह इनसे भी तेल निकाला जा सकता है,जिनका विभिन्न औषधीय प्रयोग होता है।

तन्त्र शास्त्र में अंकोल बहुत ही उपयोगी माना गया है।अन्य तान्त्रिक योगों के साथ मिलाकर,तथा स्वतन्त्र रुप से भी इसका उपयोग किया जाता है।

अंकोल में शिव-शिवा का युगलरुप वास माना गया है।रविपुष्य योग में इसे पूर्व वर्णित विधि से ही ग्रहण करना चाहिए।श्रावण या आश्विन के महीने में रविपुष्य योग(चन्द्रमा वाला) मिल जाय तो अति उत्तम।वैसे प्रायः आषाढ़ के महीने में सूर्य पुष्य नक्षत्र पर १४-१५दिनों के लिए आते हैं।उस बीच रविवार जो मिल जाय- उसे ग्रहण करना चाहिए।यह (सूर्य वाला) रविपुष्य चन्द्रमा वाले रविपुष्य से भी उत्तम है-- किसी भी वनस्पति के ग्रहण के लिए,क्यों कि वनस्पतियाँ सूर्य के पुष्य नक्षत्र में आजाने के कारण सर्वाधिक ऊर्जावान हो जाती हैं। चन्द्रमा तो वनस्पतियों के स्वामी हैं ही।स्वामी के मित्र- सूर्य की रश्मियाँ चन्द्रपत्नियों के लिए अतिशय प्रीतिकर हो जाती हैं।

अंकोल ऊर्ध्वगति का प्रतीक है- ऊर्ध्वगति चाहे जिस किसी भी स्थिति में,जिस किसी भी कार्य में अनिवार्य हो- अंकोल का वहाँ उपयोग किया जा सकता है।तन्त्र शास्त्रों में वर्णन है कि साधित अंकोल- बीज-तैल में भिगोंकर यदि आम की गुठली जमीन में स्थापित कर दें तो आशातीत समय-पूर्व उसमें फल निकल आयेंगे- यानी उसका विकास चमत्कारिक रुप से होगा।इसी भांति किसी भी वृक्ष को शीघ्र उपयोगी बनाने के लिए इसके तेल का प्रयोग किया जा सकता है।आजकल वैज्ञानिक विधि से रसायनों का सूचीप्रवेश कराकर फल और सब्जियों को रातोंरात बड़ा करने का चलन है,भले ही उसका स्वास्थ पर दुष्प्रभाव पड़ता हो।अतः सोच समझ कर ही इसका उपयोग किया जाना चाहिए।विकास आवश्यक है,उचित भी किन्तु एक सीमा तक और सही रुप से- प्राकृतिक रुप से।हार्मोनिक उथल-पुथल मचाकर विकास पैदा करना कतई उचित नहीं।

तन्त्र शास्त्र में ऊर्ध्वगति विषयक पादुकासिद्धि की चर्चा है।यानि विशेष तरह की पादुका(खड़ाऊ) का उपयोग करके आकाशगमन किया जा सकता है।यह साधना सुनने में तो अविश्वसनीय लग रहा है,किन्तु शास्त्र-वर्णन झूठा नहीं है।ऋषियों की वाणी व्यर्थ नहीं है।हाँ,इतना अवश्य कह सकते हैं कि वर्णन के बीच के कुछ तन्तु लुप्त हो गये हैं,जिसके कारण विसंगति लग रही है।मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि अंकोल में यह विलक्षण गुण है,और मेरा यह दृढ़ विश्वास निराधार भी नहीं है। साधना के स्तर की बात है सिर्फ।एक ऐसे महानुभाव को मैं निकट से जानता हूँ,जो नित्य प्रातः दरभंगा से कामाख्या जाकर भगवती का दर्शन लाभ कर,शीघ्र ही वापस अपने स्थान पर आ जाया करते थे,जिसे उनके बहुत करीबी लोग भी नहीं जानते थे;और जान भी कैसे पाते? देर रात जिसे अपने विस्तर पर सोते

हुए जिसे देखे हैं,और भोर-प्रातः भी जो अपने विस्तर पर ही लेटा,उनीन्दा पाया जाय उसे कहीं सुदूर का यात्री कैसे माना जा सकता है ? अस्तु।

प्रसंगवश यहाँ अंकोल पादुका सिद्धि की थोड़ी और चर्चा कर दूँ।ऊपर कहे गये मुहूर्त में ही अंकोल को विधिवत (पूर्व संध्या को निमंत्रण देकर) घर लाना चाहिए- स्वयं ही काट कर(किसी दूसरे से कटवाकर नही)। तना इतना मोटा हो ताकि उसके काष्ठ से खड़ाऊं वनाया सके। अव किसी सुयोग्य कारीगर से (बिना उद्देश्य वताये,और सामने बैठकर खड़ाऊं वनवाये।ध्यान रहे- जब तक बढ़ई आपका काम करता रहे,आप चुप बैठे मानसिक रुप से अनवरत शिव पंचाक्षर और देवी नवार्ण मंत्रो का जप वारी-वारी से करते रहें।अत्याआवश्क हो तो बीच में बोलने में कोई हर्ज नहीं है- कुछ कह-वोल-निर्देश देकर,फिर अपने कर्तव्य में लग जायें- जप जारी हो जाय।गौरतलब है कि यहाँ न आपका साधना-कक्ष है,न पूजा का आसन,न माला।जप की गणना का भी कोई औचित्य नहीं है,बस जप की निरंतरता का (ध्वनि-तरंगों के वातावरण का) महत्त्व है।दूसरी बात यह कि खड़ाऊं एक ही वैठकी में बन ही जाए- कोई जरूरी नहीं।वैसे बन जाय तो अच्छी बात है। दो-चार घंटा तो लगना ही लगना है।इसके लिए उपोसित रहने की भी कोई आवश्यकता नहीं है।आप आराम से खा-पीकर घर से जायें,कोई हर्ज नहीं।ज्ञातव्य है कि पुष्य नक्षत्र पर सूर्य चौदह-पन्द्रह दिनों तक रहते हैं।इस बीच सुविधानुसार कभी भी पादुका-निर्माण का कार्य किया जा सकता है।वैसे जितना पहले हो जाय अच्छा है,क्योंकि शेष समय का उपयोग अगले अनुष्ठान के लिए पर्याप्त मिल सके।

विधिवत पादुका निर्मित हो जाने के पश्चात् पुनः शुभ मुहूर्त(भद्रादि रहित,सर्वार्थ सिद्धियोगादि विशिष्ट योग) का चयन करके अगला कार्यक्रम

प्रारम्भ करें।पादुका को जल,दुग्धादि पंचामृत के पांचो सामग्रियों से अलग-अलग शुद्धि करने के वाद एकत्र पंचामृत स्नान करावे।फिर गंगाजल से प्रक्षालित कर पीले या लाल वस्त्र के आसन पर आदर पूर्वक स्थापित करके-रुद्राक्ष-स्थापन-विधान में निर्दिष्ट विधि से स्थापन-प्राण-प्रतिष्ठा करके पंचोपचार किंवा षोडशोपचार पूजन करें;और सुविधानुसार विभाजित क्रम से जप का संकल्प लेकर शिव-

पंचाक्षर मंत्र का सवालाख,एवं देवी नवार्ण मंत्र का छतीस हजार जप क्रमशः दशांश होमादि क्रिया सहित व्राह्मण एवं भिक्षुक भोजनादि सदक्षिणा सम्पन्न कर अनुष्ठान की समाप्ति करें।इस प्रकार आपकी पादुकासिद्धि क्रिया सम्पन्न हुयी।

अव वारी है प्रयोग की।ध्यातव्य है कि इस साधना और प्रयोग के लिए कठोर व्रह्मचर्य की आवश्यकता है। व्रह्मचर्य के खण्डन से आपकी ऊर्ध्वगति वाधित होगी- अन्य वातें तो पूर्ववत रहेंगी,किन्तु कायिक भार के कारण गुरुत्व बल के विपरीत जाने में कठिनाई होगी। हाँ, भूमि पर गमन करने में आप अद्‌भुत ऊर्जावान महसूस करेंगे स्वयं को।सामान्य की अपेक्षा दस से सौ गुना अधिक की गति कर सकेंगे- यह सब तात्कालिक साधना का प्रतिफल होगा।प्रत्क्षतः आप अनुभव करेंगे कि ज्यों ही आत्मकेन्द्रित होकर साधित अंकोल-पादुका पर पांव धरेंगे, आपका गुरुत्वबल अति न्यून हो जायेगा।शरीर हवा में उड़ता हुआ सा महसूस होगा।पृथ्वी से चांद पर पहुंचने वाले वैज्ञानिकों को कुछ ऐसा ही महसूस हुआ करता है।सूर्य और चन्द्रमा(गंगा-यमुना) की नियंत्रित गति को संतुलित करते हुए आप जिधर चाहें यात्रा कर सकते हैं।यही इस साधना की उपलब्धि है।किन्तु सावधान-किसी भी तान्त्रिक-यौगिक शक्ति का दुरुपयोग न हो।आत्म कल्याण और

लोककल्याण ही किसी साधना का अभीष्ट है,और होना चाहिए।जड़ता और मूढ़ता वस जिस किसी ने भी इन शक्तियों का दुरुपयोग किया है- दुष्परिणाम भी भोगा ही है।अस्तु।हरि ऊँ।

--------()(0)()-------

८.एकाक्षी नारियल

नारियल एक सुपरिचित फल है।इसका पौधा मुख्य रुप से समुद्रतटीय इलाकों में पाया जाता है, किन्तु आजकल विभिन्न क्षेत्रों में भी यदाकदा उगाया जा रहा है,भले ही उपलब्धि और विकास अति न्यून हो। भारत के दक्षिणी-पूर्वी प्रान्तों में यह बहुतायत से पाया जाता है।ताड़,खजूर,सुपारी और नारियल के पौधे आकार और वनावट की दृष्टि से काफी साम्य रखते हैं।हाँ,इनके फलों के आकार में पर्याप्त भिन्नता है,फिर भी गौर करें तो काफी कुछ समानता भी है- सुपारी और नारियल में तो और भी सामीप्य है।ये दोनों हमारे धार्मिक कर्मकांडों के विशिष्ट उपादेय हैं।किसी पूजा-कर्म में कलश-स्थापना का महत्त्व है।कलश के पूर्णपात्र पर नारियल या सुपारी को ही वस्त्रवेष्ठित कर रखने का विधान है।तन्त्र-शास्त्र में भी नारियल की महत्ता दर्शायी गयी है।

यहाँ मेरा विवेच्य- सामान्य नारियल न होकर उसकी एक विशिष्ट फलाकृति है।नारियल का फल रेशेदार कवच में आवेष्ठित रहता है,जिसे वलपूर्वक उतारने के वाद एक और कठोर कवच मिलता है,और उसके

अन्दर सुस्वादु फल भाग होता है।ऊपरी जटा(रेशा) उतारने के बाद गौर करें तो मुख भाग में तीन किंचित गड्ढे (आँखनुमा)दिखाई पड़ेंगे- ये गड्ढे- शेष कवच-भाग की तुलना में कुछ कमजोर भाग होते हैं।इन्हीं भागों से भविष्य में अंकुरण होता है- जो नये पौधे का सृजन करता है।तन्त्र-शास्त्र में इन तीन गड्ढों में दो को आंख और एक को मुख का प्रतीक माना जाता है।नारियल का यह प्राकृतिक वनावट बड़ा ही आकर्षक है।आमतौर पर ये तीन की संख्या में ही होते हैं,किन्तु कभी-कभी तीन के वजाय दो ही निशान पाये जाते हैं।मेरा अभीष्ट यही है।तन्त्र-शास्त्र में इसे ही एकाक्षी नारियल कहा गया है- यानी एक मुख और एक आँख(एकाक्ष)।ऐसा फल वहुत ही दुर्लभ है;किन्तु ऐसा भी नहीं कि अलभ्य है।नारियल की मण्डियों में इसे तलाशा जा सकता है।और इस दुर्लभ वस्तु को धर लाने के लिए किसी मुहूर्त की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है- दुर्लभ वस्तु की प्राप्ति ही अपने आप में शुभत्व-सूचक है।हाँ,सिर्फ इतना ध्यान अवश्य रखा जाय कि नारियल "श्री" का प्रतीक है,अतः "श्रीश" के स्मरण के साथ ही इसे ग्रहण करें-

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् , प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये।

व्यासं वसिष्ठनप्तारं सक्तेः पौत्रमकल्मषम् , पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम्॥

व्यासाय विष्णुरुपाय व्यासरुपाय विष्णवे , नमो वै ब्रह्मनिधये वासिस्ष्ठाय नमो नमः।

अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विवाहुरपरो हरिः , अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् वादरायणः ।।

श्री विष्णु के इस ध्यान-स्मरण के साथ प्राप्त एकाक्षी नारियल को उचित मूल्य देकर आदर पूर्वक ग्रहण करें, और घर लाकर पवित्र स्थान में रख दें।

जैसा कि पहले भी अन्य प्रसंगों में कहा गया है- किसी भी तन्त्र-प्रयोज्य वस्तु को शुभ मुहूर्त में साधित करना चाहिए- अमृत सिद्धि,सर्वार्थ सिद्धि,रविपुष्य,गुरुपुष्य आदि किसी उपयुक्त योग का सुविधानुसार चयन करके एकाक्षी नारियल का स्थापन-पूजन करना चाहिए।गंगाजल से प्रक्षालित कर,लाल वस्त्र में आवेष्ठित कर पीतल या ताम्रपात्र में रख कर विधिवत(पूर्व अध्यायों में कथित विधि से)स्थापन पूजन करना चाहिए।पूजनोपरान्त श्री विष्णु और लक्ष्मी के द्वादशाक्षर मन्त्रों का कम से कम सोलह हजार जप,दशांश होमादि विधि सम्पन्न करने के बाद विप्र-भिक्षुक भोजन सदक्षिणा प्रदान कर अनुष्ठान समाप्त करना चाहिए।आगे पूजा स्थान में स्थायी स्थान देकर नित्य पंचोपचार पूजन करते रहना चाहिए।जिस घर में नित्यप्रति एकाक्षी नारियल की पूजा होती है,वहाँ लक्ष्मी का अखण्ड वास होता है।

------()()()------

९.हरिद्रा

हरिद्रा के लिए प्रचलित शब्द हल्दी है।भारतीय मसालों का राजा- विशेष परिचय का मुंहताज नहीं। वैजयन्ती के आकार की इसकी

पत्तियाँ बड़ी खुसबूदार होती हैं।करीब छःईंच चौड़ीं,पन्द्रह-बीस ईंच लम्वी पत्तियाँ आजू-बाजू बृन्त से जुड़ती हुयी,ऊपर बढ़ती जाती हैं;जिससे तथाकथित तने का निर्माण होता है,यानी स्वतन्त्र रुप से तने नहीं होते इसमें।हल्दी इसी पौधे की गाठें हैं।मुख्य गांठ से कुछ सह गाठें भी निकली होती हैं।आम तौर पर एक पौधे से सौ ग्राम से पांचसौ ग्राम तक गांठें प्राप्त होजाती हैं।इनमें करीब अस्सी प्रतिशत जलीयांश होता है।ताजी गाठों को उवाल कर सुखा लेते हैं- यही तैयार हल्दी है।दोमट या बलुई मिट्टी में इसकी अच्छी पैदावार होती है।आषाढ़ के महीने में अंकुरणदार छोटी गांठों को आलू या अदरख की तरह मेड़ बनाकर हल्दी का रोपण होता है।बरसात वाद मेड़ों को फिर से सुडौल करना पड़ता है।आश्विन-कार्तिक में एक-दो वार हल्की सिंचाई करनी होती है।फाल्गुन के शुरुआत में ही पत्तियां मुरझाने लगती हैं- यही पौढ़ता का प्रमाण है।फाल्गुन अन्त में प्रौढ़ पौधों को उखाड़ लिया जाता है। छायादार जगहों में भी इसकी खेती हो सकती है, इस कारण छोटे किसान अपने गृहवाटिका में भी थोड़ा-बहुत लगा लेते हैं,जिससे घरेलू उपयोग सिद्ध होता है।

हल्दी के सम्बन्ध में एक प्रचलित किंवदन्ति है- कोईरी और माली जाति को छोड़कर, अन्य जातियाँ इसका रोपण न करें।यदि करें ही तो लागातार वारह वर्षों तक लगाते रहें,वीच में वाधित न हो- न सम्भव हो तो एक ही गांठ लगायें, लेकिन लगाने का क्रम न टूटे अन्यथा भारी अनिष्ट झेलना पड़ सकता है।इसके पीछे शास्त्रीय प्रमाण या इसका वैज्ञानिक आधार तो मैं नहीं कह सकता,किन्तु इस नियम की जानबूझ कर अवहेलना करने वाले का दुष्परिणाम मैं तीन-चार वार देख चुका हूँ- रोपण वाधित हुआ और अवांछित विपत्ति सिर पर मड़रायी। अतः उचित है कि इसके रोपण से बचें।

एक और वात- सामान्य तौर पर हल्दी में नौ महीने के पैदावार-अवधि में प्रायः फूल लगते ही नहीं हैं। फूल लगने के लिए जितनी परिपक्वता चाहिए,उसके पूर्व ही पौधा मुरझाने लगता है- चाहे लाख जतन करें, किन्तु कभी-कभी अनहोनी सी हो जाती है- आश्विन-कार्तिक के अन्त तक पत्तियों के बीच एक विशेष कोंपल वन जाता है,और थोड़े ही दिनों में उसमें फूल निकल आते हैं।हल्दी में फूल निकलना किसी भारी अनिष्ट का सूचक है- खामकर रोगणकर्ता के लिए,किन्तु इस मम्बन्ध में भी उपर्युक्त नियम लागू होता है- हमेशा लगाने वाले किसान को किमी प्रकार की क्षति नहीं होती।

तन्त्रशास्त्र में हल्दी के फूल को एक दुर्लभ वनस्पति की सूची में रखा गया है।यहाँ इसके प्रयोग पर इशारा मात्र ही उचित समझता हूँ-षटकर्म के तीन निकृष्ट कर्मों में इसका अमोघ प्रयोग है- ब्रह्मास्त्र की तरह अचूक,दुर्निवार,अद्भुत।सोचसमझ कर इसका प्रयोग करना चाहिए।स्मरण रहे- ब्रह्मास्त्र अर्जुन के पास भी था और अश्वत्थामा के पास भी- एक को परिस्थिति की पहचान थी,और आत्मनियंत्रण की क्षमता;पर दूसरे के पास इन दोनों का अभाव था। अस्तु।

आयुर्वेद में हल्दी के अनेक प्रयोग हैं।दर्द,सूजन,रक्तरोधन-शोधन,व्रणस्थापन आदि इसके विशिष्ट गुण हैं। सौन्दर्य प्रसाधनों में भी काफी प्रयुक्त होता है। होमियोपैथी का हाईड्राइटिस और कुछ नहीं सीधे हल्दी का ही क्यूफॉर्म है।

पूजापाठ,एवं अन्य मांगलिक कार्यों में हल्दी अति अनिवार्य है।ग्रहों में गुरु वृहस्पति का प्रिय वनस्पति है यह।यूँ तो वृहस्पति की संविधा-पीपल है,और रत्न है पोखराज।किन्तु हरिद्रा पर गुरु की विशेष कृपा

है।इतना ही नहीं गणपति विघ्नेश्वर के लिए भी हरिद्रा बहुत ही प्रिय है।माँ पीताम्वरा(बगलामुखी) का तो काम ही नहीं हो सकता हरिद्रा के वगैर।

हरिद्रा ग्रहण विचार- मकर संक्रान्ति(१४जनवरी) से सूर्य उत्तरायण हो जाते हैं।इसके वाद ही कोई शुभ मुहूर्त में हरिद्रा को साधनात्मक रुप से ग्रहण करना उचित है।यूँ तो किसी(रविपुष्य,सर्वार्थसिद्धि,अमृतसिद्धि) योग में विशेष परिस्थिति में ग्रहण किया जा सकता है;किन्तु गुरु का विशेष बल तभी प्राप्त होगा जब गुरुपुष्य योग हो।ध्यान रहे कि उस समय गुरु और साथ ही शुक्र अस्त न हों।चूँकि यह सुलभ प्राप्य द्रव्य है,इस लिए प्रथम प्रयास तो यही हो कि अन्य अध्यायों में बतलायी गयी विधि के अनुसार पूर्वसंध्या को निमंत्रण देकर ही अगले दिन निर्दिष्ट विधि से घर लाया जाय।महानगरीय सभ्यता में जीने वाले महानुभावों को असम्भव या कठिन लगे तो बाजार की उपलब्धि का सहारा ले सकते हैं।दशहरे के बाद बाजार में ताजी हल्दी की गांठे मिल

जाया करती हैं।उचित मुहूर्त का विचार करके सुविधानुसार लाया जा सकता है।जिस किसी विधि से भी प्राप्त हो, घर लाकर पूर्वनिर्दिष्ट विधान से स्थापन-पूजन करने के बाद सर्वप्रथम वृहस्पति के षडक्षर मंत्र (बीजयुक्त पंचाक्षर मंत्र)का १९००० जप करें,तथा दशांश होमादि सम्पन्न करें।प्रसंगवश यहाँ एक बात और स्पष्ट कर दूँ कि हरिद्रा की कोई भी क्रिया करने के लिए वस्त्र-आसन आदि रंग के वजाय हरिद्रा में ही रंजित हों तो अति उत्तम- चाहे उस पर गणपति की क्रिया करनी हो या पीताम्बरा की,या कि गुरु की।इन तीनों को पीत रंग(हरिद्रा)प्रिय है।इतना ही नहीं माला भी हल्दी की गाठों की ही होनी चाहिए।प्रसाद के लिए

हल्दियापेड़ा,चने की दाल,वेसन के लड्डू आदि का प्रयोग करना चाहिए।साधक अपने भोजन में भी पीले पदार्थों का (उक्त चीजों) सेवन किया करे।स्नान से पूर्व हल्दी का उबटन अवश्य लगाले,एवं स्नानोपरान्त चन्दन के वजाय हल्दी का ही तिलक प्रयोग करे-कहने का तात्पर्य यह कि हरिद्रा-साधना के लिए हरिद्रामय होजाने की आवश्यकता है।इससे साधना को सुपुष्टि मिलती है,और छोटे-मोटे विघ्न स्वयमेव समाप्त हो जाते हैं।

उक्त विधि से साधित हरिद्रा को हरिद्रारंजित चावल-सुपारी-नारियल का सूखा गोला आदि के साथ पीले वस्त्र में वेष्ठित कर पूजा-स्थान या तिजोरी में रख दें।नित्य धूप-दीप प्रदर्शित करें और कम से कम एक माला श्रीषडक्षर मंत्र का जप अवश्य कर लिया करें।अक्षय-स्थिर लक्ष्मी के लिए यह अद्भुत प्रयोग है।

- **हरिद्रा गणपति प्रयोग-** मंत्र-भेद से हरिद्रा के अन्य प्रयोग भी हैं।पूर्व अध्याय- श्वेतार्क-गणपति साधना में बतलाये गये विधान से हरिद्रा-गणपति की साधना भी की जा सकती है।मंत्र और विधि लगभग वही होगा। अन्तर सिर्फ माला-प्रयोग का होगा- वहाँ रुद्राक्ष माला प्रयुक्त होता है,यहाँ हरिद्रा-ग्रन्थि-माला का प्रयोग होना चाहिए।इस क्रिया से सभी प्रकार के विघ्नों का नाश होकर विद्या-वुद्धि-श्री समपन्नता की प्राप्ति होती है।किसी विशेष उद्देश्य से भी हरिद्रा-गणपति की साधना की जा सकती है- जैसे कोई शत्रु अकारण परेशान कर रहा हो, तो उसके शमन के लिए संकल्प में उसका नामोच्चारण करते हुए उक्त मंत्र का तैतीस हजार जप- दशांश होमादि सहित

समपन्न करे।हाँ ध्यान रहे- कोई भी क्रिया स्वार्थान्ध होकर न किया जाय,अन्यथा परेशानी हो सकती है।

- **पीताम्बरा प्रयोग-** उक्त विधि से साधित हरिद्रा-ग्रन्थि को साक्षात् भगवती पीताम्बरा बगलामुखी का श्रीविग्रह स्वरुप घर में स्थापित कर नित्य पूजा-अर्चना करने से **षटकर्म** की सिद्धि होती है।साधक की वाचाशक्ति अद्भुत रुप से विकसित होती है।सचपूछें तो वाक्-सिद्धि होजाती है।काम-क्रोध-लोभ-मद-मोहादि समस्त अन्तः शत्रुओं का शमन होकर तेजोमय साधन-शरीर का उद्बोधन होता है।वाह्य समस्त शत्रुओं का शमन-दमन तो सामान्य सी वात हो जाती है।ध्यातव्य है कि इस प्रयोग में पीताम्वरा पूजन-विधि और षट्त्रिंश पीताम्बरा मंत्र का सर्वांग अनुष्ठान सम्पन्न करना होता है।पूरा विधान पीताम्बरा-तन्त्र से ग्रहण करना चाहिए।
- **हरिद्रा तिलक प्रयोग-** उक्त साधित हरिद्रा का तिलक लगाने मात्र से सम्मोहन और वशीकरण सिद्ध होता है। साधक अपने ललाट पर तिलक लगाकर किसी साध्य पर दृष्टिपात करते हुए अपने अभीष्ट का स्मरण मात्र करे, और मानसिक रुप से पीताम्वरा मंत्र या अपने अन्य इष्ट मंत्र का स्मरण करता रहे।
- **विषहरण प्रयोग-** पीताम्बरा-साधित हरिद्रा खण्ड को पीसकर गोदुग्ध या जल के साथ पिला देने से सभी प्रकार के विषों का निवारण होता है।

विभाग
५९।८०५

- **वन्ध्या-तन्त्र-प्रयोग-** उक्त विधि से कम से कम सवा सेर हरिद्रा-ग्रन्थि को साधित कर किसी सन्तानेच्छु स्त्री को प्रदान करे।स्त्री को चाहिए कि रजोस्नान के पश्चात् उक्त साधित हरिद्रा का घृतपाक विधि से पाक तैयार कर नित्य प्रातः-सायं दो-दो चम्मच सेवन करे गोदुग्ध के साथ- पूरे सताइश दिनों तक।(हरिद्रापाक की विधि सर्वसामान्य है,प्रायः घरों में महिलायें इसका प्रयोग करती हैं सद्यः प्रसूता को देने के लिए- समान मात्रा में हरिद्रा,घी और गूड़ मिश्रित हलवा- वल्य,रक्तशोधक,पीड़ाहर,कोथहर,शोथहर आदि गुणों से भरपूर है।
- **प्रेतवाधा-निवारण-** किसी भी प्रेतवाधा-ग्रसित व्यक्ति को नवार्ण-साधित हरिद्रा-प्रयोग से वाधा-मुक्त किया जा सकता है।इसके लिए शुभमुहूर्त में- शारदीय नवरात्रादि में- हरिद्रा-साधन करना विशेष महत्त्वपूर्ण होता है।इस प्रकार सिद्द हरिद्रा-ग्रन्थि को पीले कपड़े में बांध कर प्रभावित पुरुष की दांयी भुजा,एवं स्त्री की बायीं भुजा में बांध देने से काफी लाभ होता है। उक्त साधित हरिद्रा को पीस कर,जल में घोलकर प्रभावित व्यक्ति के कमरे,वस्त्र एवं विस्तर पर छिड़काव भी नित्य करते रहना चाहिए।साथ ही उसी हरिद्रा को कमरे में धूपित भी करें।कमरे की खिड़की-दरवाजों पर पीले कपड़ें में बांध कर साधित हरिद्रा की गांठों को स्थापित कर दें।इससे बारबार प्रभावित करने वाली प्रेतवाधा में काफी कमी

आयेगी।जल या दूध में घोल कर साधित हरिद्रा को पिलाने से भी काफी लाभ होता है।साधकों को शारदीय नवरात्र में विशेष मात्रा में हरिद्रा का अभिमंत्रण-पूजन लोक-कल्याणार्थ करके सुरक्षित रख लेना चाहिए।विशेष परिस्थिति में तत्काल साधना से भी काम हो सकता है- महत्त्व इस बात का है कि साधक का आत्मबल और उक्त विषयक साधना बल कितना-क्या-कैसा है।

❖ **हरिद्रा-ग्रन्थि-माला-** हल्दी की गाठों की माला का तन्त्र में काफी महत्त्व है।आजकल बनी-बनायी माला भी पूजन-सामग्री-विक्रेताओं के यहाँ उपलब्ध है,जो सूखी हल्दी की गाठों से बनायी जाती हैं।अन्य मालाओं की तरह इन्हें भी खरीद कर संस्कारित कर उपयोग किया जा सकता है।चूँकि माला अपने हाथ से गूँथने का निषेध रुद्राक्ष-प्रकरण में कर आये हैं,अतः उचित है कि बाजार से तैयार हरिद्रा माला ही खरीद लिया जाय।ऊपर वर्णित मुख्य तीन देवताओं- वृहस्पति,गणपति और बगला के किसी भी मंत्र-प्रयोग के लिए हल्दी की माला श्रेष्ठ मानी गयी है।हल्दी-निर्मित माला में एक महान दोष ये है कि यह अन्य मनकों की तरह दीर्घ स्थायी नहीं हैं- रुद्राक्ष,जीवितपुत्रिका,पद्माख आदि की तरह लम्बे समय तक इसे सहेज कर रखना बड़ा कठिन होता है- कीड़े लग जाते हैं,और संस्कार-श्रम व्यर्थ हो जाता है।फिर भी दो बातों का ध्यान रखेंगे तो अपेक्षाकृत दीर्घ-स्थायी हो सकता है- एक तो यह कि संस्कारित माला का नियमित

जप-प्रयोग हो,और दूसरी बात यह कि समय-समय पर मनकों में घृतलेप कर दिया करें।माला को अन्यान्य की दृष्टि से बचाने का भी नियम है- दृष्टिपात से माला का गुण नष्ट होता है- इसका ध्यान रखते हुए सम्भव हो तो कभी-कभी एकान्त में खुली घूप में रख दें। जपमालिका में कपूर के टुकड़े डालकर रखने से भी हल्दी की माला को दीर्घजीवन दिया जा सकता है।देवदार,गुग्गुल,धूना(लोहवान नहीं) आदि से समय-समय पर धूपित करने से भी काफी लाभ.होता है। एक सज्जन तो फेनाइल आदि रसायनों का प्रयोग कर देते थे- सुरक्षा के लिए,जो कि सर्वथा गलत है।

Ψ **कृष्णहरिद्रा-(विशिष्ट हरिद्रा)-** समान्यतया हल्दी का रंग पीला ही होता है,परन्तु एक खास तरह की हल्दी भी होती है,जो श्यामवर्णी होती है,और इसका गंध भी सामान्य हरिद्रा से किंचित भिन्न होता है- इसमें कपूर जैसी मादक गंन्ध होती है।इसका एक अन्य नाम **नरकचूर** भी है।तन्त्रशास्त्र में इसका विशेष महत्त्व है।साधना और प्रयोग की शेष विधियाँ पूर्ववत ही होती हैं।पीत हरिद्रा के सभी गुण इसमें विद्यमान हैं,इसके अतिरिक्त कुछ विशिष्ट गुण भी हैं-

➢ **उन्माद नाशक-** श्याम हरिद्रा को ताबीज में भरकर पीले धागे में गूंथकर रविवार को गले में धारण करा देने से उन्माद रोग का नाश होता

है।अनिद्रा,मिर्गी,योषापस्मार(हिस्टीरिया) आदि विभिन्न मानस व्याधियों में भी अद्भुत लाभ होता है।

- अदृश्य-बाधा-निवारण- श्याम हरिद्रा की सात,नौ,ग्यारह गांठों की माला बनाकर पुनः धूप-दीपादि संस्कार करके किसी रवि या मंगलवार को गले में धारण करा देने से समस्त वायव्यदोष- टोने-टोटके,ग्रह,भूत-प्रेतादि विघ्नों का शमन होता है।
- **सौन्दर्य प्रसाधन-** सामान्य हरिद्रा की तरह श्याम हरिद्रा का भी सौन्दर्य-प्रसाधनों में प्रयोग किया जाता है-उसके साथ भी या अकेले ही।जल या दूध के साथ लेपन अति गुणकारी होता है।

------()()()------

१०.नागकेसर

नागकेसर विशिष्ट वनस्पतियों की श्रेणी में है।यह चन्दन की तरह अति पवित्र और तदनुसार प्रभावशाली भी है।इसे नागेश्वर भी कहते हैं।रुप में कबाबचीनी से बहुत साम्य रखता है।दोनों में छोटी डंडी लगी होती है।अतः पहचान में भ्रम हो सकता है।कालीमिर्च के समान गोल-गोल दाने(किन्तु खुरदरे नहीं,चिकने) होते हैं।गुच्छेदार फूल बड़े ही खूबसूरत लगते हैं- मादक गंधयुक्त।परिपक्व फल का रंग थोड़ा गेरूआ होता है।पौधे का आकार मेंहदी से मिलता-जुलता है।वैसे यह कोई दुर्लभ वनस्पति नहीं है।जंगलों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। जड़ी-बूटी विक्रेताओं के यहाँ आसानी से उपलब्ध भी है।आयुर्वेद में इसके अनेक प्रयोग हैं।बल्य,कफघ्न,और सौन्दर्य-वर्धक भी है।

नागकेसर शिव को अतिशय प्रिय है।धतूर,विल्वपत्र और विजया(भांग) तो प्रायः व्यवहृत होता है, किन्तु शिवपूजन में नागकेसर भी उसी श्रेणी में है,भले ही अप्रचलित हो।उचित तो है कि पहचान कर सीधे जंगल से ही ताजेरुप में इसे ग्रहण किया जाय।शहरी रहन-सहन में सीधे पौधे से ग्रहण करना सम्भव न हो तो पंसारी के यहाँ से ही उचित काल में क्रय किया जा सकता है।हाँ,इतना ध्यान अवश्य रखा जाय कि देखने में स्वच्छ और ताजा हो।

इसका सम्बन्ध शिव से है,अतः सोमपुष्य योग यानी जिस सोमवार को चन्द्रमा का पुष्य नक्षत्र पड़े, उसी दिन खरीदकर घर लाना चाहिए।वर्ष में एकबार- चौदह-पन्द्रह दिनों के लिए आने वाले सूर्य के पुष्य नक्षत्र में जो सोमवार पड़े- वह सर्वोत्तम नागकेसर-ग्रहण-काल होता है।वैसे प्रायः किसी भी वनस्पति को ग्रहण करने का यह सर्वोत्तम काल है।एकबार ही यथेष्ट मात्रा में क्रयकर ले, ताकि वर्षभर चल सके।

नागकेसर-प्रयोग- विधिवत लायी गयी किसी शिवलिंग(अर्घ्या सहित) को प्राणप्रतिष्ठा-विधि से स्थापित करके अन्याय पूजन सामग्रियों सहित नागकेसर को भी अर्पित करे- चन्दनादि की तरह।ध्यातव्य है कि गृहस्थ के घर में आठ अंगुल से ऊँची कोई भी देवमूर्ति की स्थापना नहीं करनी चाहिए- बड़ी मूर्तियों की स्थापना घर से बाहर मन्दिरों में होती है।दोनों का स्थापना-विधान किंचित भिन्न होता है।अन्य नियम मर्यादाओं में भी काफी अन्तर होता है।इस विषय की विशेष जानकारी कर्मकाण्डी योग्य आचार्यों से करनी चाहिए।"प्रतिष्ठामयूष" आदि ग्रन्थों में इसका विशद वर्णन उपलब्ध है।पुराणों में भी देवादिमूर्ति-स्थापना का विशद विधान वर्णित है।

उक्त स्थापित शिवमूर्ति के पास बैठकर पंचोपचार पूजनोपरान्त ग्यारह हजार श्रीशिवपंचाक्षर मंत्र का जप करे।जप करते समय नागकेसर को पीतल या तांबे के पात्र में सामने रख ले और भावना करे कि मंत्र की विद्युत तरंगें नागकेसर में प्रविष्ट हो रही हैं।जप अपनी सुविधानुसार एक ही दिन में या कि विभाजित क्रम में भी किया जा सकता है।जप पूरा हो जाने पर तत्दशांश होमादि विधि भी सम्पन्न करें।

Ψ श्री-समृद्धि हेतु- इस प्रकार सिद्ध नागकेसर को नवीन पीत वस्त्र में रख कर साथ में हल्दी की एक गांठ,सुपारी,अक्षत, तांबे का सिक्का आदि डाल कर पोटली वनाकर,पुनः किसी पात्र में रखकर विधिवत पूजन करे- उस पोटली को ही शिवमूर्ति की भावना से।पूजनोंपरान्त तिजोरी,बक्से या आलमारी में स्थायी तौर पर स्थापित कर दे।आगे अन्य दिनों धूपादि निवेदन करते हुए हो सके तो कम से कम एक माला श्रीशिवपंचाक्षर मंत्र का जप वहीं बैठ या खड़े होकर कर लिया करे।शिव की कृपा से "श्री" की प्राप्ति का यह अद्भुत प्रयोग है।

Ψ वशीकरण- सोमपुष्य,रविपुष्य अथवा गुरुपुष्य योग में पूर्व विधि से सिद्ध नागकेसर के साथ चमेली पुष्प,कूठ,तगर,और कुमकुम मिलाकर महीन चूर्ण बना लें,और गोघृत के साथ मिलाकर लेप

तैयार कर ले।इस लेप को नित्य स्नान के पश्चात् चन्दन की तरह उपयोग करने से प्रयोगकर्ता में अद्भुत सम्मोहन क्षमता आजाती है।घनीभूत चेतना पूर्वक जिसपर दृष्टिपात करता है ,वह क्षणभर में ही वशीभूत हो जाता है- द्रष्टापर।किन्तु ध्यान रहे- स्वार्थ के वशीभूत होकर इस प्रयोग को किसी गलत इरादे

से न किया जाय,अन्यथा लाभ के वदले हानि की अधिक आशंका है।तन्त्र लोक-कल्याण के लिए है।लोक-कल्यार्थ इसे किसी को अभिमंत्रित कर(उभयपक्ष के नाम सहित) दिया भी जा सकता है।दुरुपयोग से दोनों की हानि है।

-----()()-----

११. कमल

कमल एक बहु प्रचलित जलज पुष्प है,जो तड़ागों में अपनी शोभा विखेरता है।लाल,गुलावी, सफेद, पीला,नीला,आदि इसके कई रंगभेद हैं।अम्वुज,अव्ज,जलज,वारिज,उत्पल,पद्म,कोकनद,सरसिज,तामरस,शतदल, सहस्रदल,राजीव, आदि कई नाम हैं इसके। लक्ष्मीनारायण का यह अतिशय प्रिय पुष्प है।कमल एक विशुद्ध सात्विक पुष्प है- सात्विकता का सहज प्रतीक।फलतः तन्त्रशास्त्रों में इसके सात्विक प्रयोगों पर ही बल दिया गया है।कतिपय तामसिक प्रयोग भी हैं,किन्तु उनकी चर्चा यहाँ करना अनुचित-अप्रासंगिक सा लग रहा है।

जैसा कि ऊपर कह चुके हैं- लक्ष्मीनारायण का प्रिय पुष्प है।अतः लक्ष्मीनारायण को वशीभूत करने की अद्भुत क्षमता है इसमें।एक पौराणिक प्रसंग है कि राजीव लोचन श्रीराम एकबार शिवाराधन में संलग्न थे। एक लाख कमल पुष्पों से साम्बसदाशिव को प्रसन्न करने का संकल्प था।निन्यानवे हजार नौ सौ निन्यानबे की संख्या पूरी हो चुकी थी,पर अभीष्ट पूर्ति हेतु अन्तिम पुष्प उपलब्ध नहीं था,जबकि सेवकों ने पूरी संख्या जुटायी थी।क्षणभर के लिए तो श्रीराम थोड़ा चिन्तित हुए,किन्तु

तभी उन्हें ध्यान आया कि लोग तो उन्हें राजीव नयन कहते हैं,और यह ध्यान आते ही, चट उठाया कृपाण,और अपनी दांयी आँख निकालकर शिव-चरणों में सपर्पित करने को उद्यत हुए; और तभी साम्बसदाशिव उपस्थित हो गये।यह है श्रीराम की भक्ति की शक्ति।

किसी अभीष्ट की सिद्धि में कमल का अद्भुत प्रयोग है।१०८,१०००८,१०००० ८-कमल पुष्पों का तदिष्ट मंत्र से समर्पण अद्भुत चमत्कारी होता है।लक्ष्मी-प्राप्ति हेतु- विशेषकर कार्तिक के महीने में वेदोक्त श्रीसूक्त का पाठ करते हुए प्रत्येक मंत्र से कमल-पुष्प श्रीचरणों में अर्पित करना चाहिए।नित्य क्रिया के पश्चात् गोघृत और काले तिल से उक्त संख्या पर्यन्त आहुति भी प्रदान करें।

श्रीविष्णु की प्रसन्नता हेतु वेदोक्त पुरुषसूक्त का पाठ करें,और प्रत्येक मंत्र पर एक कमलपुष्प समर्पित करें- विशेषकर वैशाख-अगहन-माघ के महीनों में।सोलह दिनों के अनुष्ठान के पश्चात् श्रीविष्णु के द्वादशाक्षर मंत्र से अष्टोत्तर शत वा अष्टोत्तरसहस्र आहुति घृततिलादि साकल्य से करनी चाहिए।

पद्माख-प्रयोग- कमल के बीजों को पद्मांख या कमलगटा कहते हैं।ताजी अवस्था में इन बीजों को छेदकर माला बनाया जा सकता है।सूख जाने पर बनाना बहुत कठिन हो जाता है।वैसे बाजार में कमलगटे की बनी-बनायी माला भी उपलब्ध है।सही ग्रन्थियुक्त माला खरीद कर पूर्व(रुद्राक्ष अध्याय में) वर्णित विधि से माला-संस्कार करके उपयोग किया जा सकता है।स्थिर लक्ष्मी की प्राप्ति हेतु यह अद्भुत प्रयोग है।लक्ष्मी के अनुष्ठान के लिए रुद्राक्ष की अपेक्षा पद्माख का प्रयोग उत्तम माना गया है।अपने नामराशि से गणना विचार करके किसी अनुकूल लक्ष्मी-मंत्र का

चुनाव करना चाहिए।मंत्र सुसाध्य हो इस बात का ध्यान रखना अति आवश्यक है।दुसाध्य,अरि आदि मंत्रों का चयन कदापि नहीं करना चाहिए।मंत्र-ग्रहण का विशद वर्णन मंत्र-शास्त्रों में उपलब्ध है।वैसे मेरी पुस्तक पुण्यार्कमंत्रप्रदीपिका में भी समयानुसार देखा जा सकता है।

कमल-मूल-प्रयोग- इसे पुष्करमूल भी कहते हैं।जड़ी-वूटियों की दुकान में इसी नाम से उपलब्ध है। इसका उपयोग विभिन्न आयुर्वेदिक औषधियों में किया जाता है।मानस व्याधियों में इसका विशेष प्रयोग है। तड़ाग से ताजा पुष्करमूल प्राप्त करना सम्भव न हो तो पंसारी की दुकान से खरीद कर प्रयोग किया जा सकता है।रविपुष्य या गुरुपुष्य योगों में विधिवत ग्रहण किया गया पुष्करमूल विशेष कारगर होता है।आयुर्वेद में विभिन्न औषधियों में इसका उपयोग होता है- खास कर मानस-व्याधियों में।स्त्रियों की खास व्याधि- योषापस्मार(हिस्टीरिया)में अतिलाभकारी है।समुचित मुहूर्त में ग्रहण किया गया पुष्करमूल पूर्व अध्याय में वर्णित विधि से स्थापित-पूजित करके,सुखाकर चूर्ण वनाकर, जौ के क्वाथ अथवा चावल से निकले मांड़ के साथ कम से कम तीन माह तक प्रातः-सायं एक-एक चम्मच प्रयोग करने से जटिल योषापस्मार भी साध्य होजाता है।आयुर्वेद ग्रन्थों में अपतन्त्रक चूर्ण का वर्णन है।इसमें पुष्करमूल का प्रयोग होता है।बाजार से तैयार अपतन्त्रक चूर्ण को भी नवार्ण मंत्र से अभिमंत्रित कर प्रयोग किया जा सकता है।पुष्करमूल फीट-दो फीट लम्बा एक-दो ईंच मोटाई लिए होता है।काटने पर भीतरी स्थिति ठीक वैसी ही होती है जैसा कि भिंडी को काटने पर दीखता है।मूल के छोटे टुकड़ों को धागे में गूंथकर माला बनाकर,सहस्र नवार्ण मंत्राभिषिक्त करके रोगी के गले में धारण कराने से अपस्मार(मृगी,मिरगी)रोग का शमन होता है।वौद्धिक और मानसिक विकास के लिए पुष्करमूल का औषधीय प्रयोग भी लाभदायक है।

-------0000------

१२ लवंग

"ललित लवंग लता परिशीलन,कोमल मलय समीरे..."- महाकवि जयदेव की अमृतवाणी लवंग के सम्बन्ध में काफी कुछ कह रही है।आर्यावर्त के दक्षिणी प्रान्तों में बहुतायत से पायी जाने वाली वनस्पतियों में लवंग लता भी एक है। सामान्य उपयोग में आनेवाला लौंग इसी लता का सुगन्धित पुष्प है। लौंग इसका पर्यायवाची है।लौंग पुष्प का प्रयोग औषधि,प्रसाधन,एवं मसाले के रुप में होता है।देव-पूजन कार्य में नैवेद्योपरान्त मुखशुद्ध्यर्थ ताम्बूलादि सहित लौंग का प्रयोग अनिवार्य रुप से किया जाता है।इसका एक नाम देवपुष्प भी है।पूजन-सामग्रियों में पुष्प का यदि अभाव हो तो निसंकोच लौंगपुष्प का उपयोग कर लेना चाहिए।शहरी सभ्यता में ताजे सुगन्धित पुष्पों का अत्यन्त अभाव है।वाटिका से ग्रहित पुष्प न जाने कब देवशीर्ष पर अर्पित होते हैं- यह विचित्र विडम्वना है।शास्त्रों का वचन है कि मालाकार गृह में पुष्प वासी नहीं होते,जब कि अपने घर में रात में(पूर्व दिन) ग्रहण किये गये पुष्पों का अगले दिन व्यवहार में लाना निषिद्ध है;किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि जैसे-तैसे,सड़े-गले कई दिनों के वासी फूल को देव-पूजन कार्य में व्यवहार कर लिया जाय।इससे अच्छा है कि बिना फूल के ही पूजन कर लिया जाय या सर्वोत्तम है देवपुष्प- लौंग का व्यवहार करना।

तन्त्रशास्त्रों में लौंग को काफी महत्त्वपूर्ण माना गया है।कुछ खास साधनाओं में- भुजयुग्म,जम्बुकी आदि में तो लौंग के बिना काम ही नहीं चलता।आयुर्वेद में भले ही लौंग महापित्तशामक माना गया हो,किन्तु तन्त्रशास्त्र का लौंग वायुशामक प्रधान है।हरप्रकार के वायव्य वाधाओं में

लौंग का तन्त्रात्मक प्रयोग किया जाता है।किसी प्रकार की अन्तरिक्ष वाधा हो- दो-चार अभिमंत्रित लौंग खिलाते ही सहज ही दूर हो जाता है- मेरा यह सहस्राधिक सफल प्रयोग रहा है। साधना और प्रयोग में अपेक्षाकृत आसान भी है।

लौंग पर भगवती चामुण्डा की विशेष कृपा है।तान्त्रिक उपयोग करने के लिए उचित है कि पंसारी की दुकान से किसी महीने में(खरमास छोड़कर) रविपुष्य वा गुरुपुष्य में खरीद कर ले आवे।उनमें से साबूत (जिनमें अग्रपुष्प भाग मौजूद हो) को तन्त्र-कार्य में उपयोग करें,शेष घर के अन्य कार्यों में प्रयोग किये जा सकते हैं। चुने-बिने स्वच्छ-साबूत लौंग को गंगाजल से शुद्ध करके नवीन लाल वस्त्र का आसन देकर ताम्रपात्र में सामने रख कर श्री शिवपंचाक्षर एवं देवी नवार्ण मंत्रों का कम से कम ग्यारह माला जप कर लें।ध्यातव्य है कि जप से पूर्व लौंग का सामान्य रुप से पंचोपचार पूजन करना न भूले,और जपान्त में दशांश होमादि भी अवश्य सम्पन्न करें- जैसा कि प्रत्येक वनस्पतियों के तान्त्रिक प्रयोग में पहले भी निर्देश कर आये हैं।मात्र इतनी क्रिया से ही आपका लौंग अभीष्ट कार्य के लिए सिद्ध हो गया।अभिमंत्रण-पूजन की यह क्रिया शारदीय वा वासंतिक नवरात्रियों में भी किया जा सकता है- उस बीच रविपुष्य-गुरुपुष्य योग भी मिल जाये तो सोने में सुगन्ध। इस प्रकार साधित लौंग-पुष्प को उसी वस्त्र में वेष्ठित कर किसी डब्बे में सुरक्षित रख लें।

लौंग के तान्त्रिक प्रयोग-

- प्रेतवाधा --किसी भी प्रेतवाधा ग्रसित व्यक्ति को उक्त साधित लौंग में से नौ नग निकाल कर पुनः नौवार पूर्व मंत्राभिषिक्त कर के पुरुष की दाहिनी,एवं स्त्री की वायीं

भुजा में, लाल कपड़ें में लपेटकर तीन लौंग बांध दें,एवं शेष छः को एक-एक करके सुवह-दोपहर-रात खाने का निर्देश देदें।दो दिनों के इस प्रयोग मात्र से ही सामान्य प्रेत-वाधायें दूर हो जायेंगी।मैंने वहुत वार तो ऐसा भी देखा है कि आवेशित व्यक्ति उस अभिमंत्रित लौंग को वंधवाने या खाने से घवराता है।वैसी स्थिति में वल प्रयोग करने की भी आवश्यकता पड़ती है।कुछ साधक इस कार्य के लिए श्री हनुमद् मंत्र का भी प्रयोग करते हैं।पिशाच-मोचन हेतु हनुमान जी की आराधना वहु सिद्ध है।अतः सुविधा और श्रद्धानुसार प्रयोग किया जाना चाहिए।

- वशीकरण- शुभ और लोक-कल्याण भावना से सम्मोहन-वशीकरण करने हेतु उक्त विधि से साधित लौंग का प्रयोग बड़ा ही कारगर होता है।इस कार्य की सिद्धि हेतु सम्मोहन-वशीकरण- मुहूर्त और काल-प्रहर ज्ञान सहित प्रयोग करने से अद्‌भुत लाभ होता है।
- श्री समृद्धि- धन की लालसा तो सभी को होती है।अतः इसकी सम्यक पूर्ति के लिए अपने इष्टदेव को लौंगपुष्प नियमित अर्पित करना चाहिए- ध्यातव्य है कि अर्पण के समय मन ही मन अपना अभीष्ट स्मरण करते हुए याचना करे।
- जम्वुकी साधना- आगे श्रृगालश्रिंगी अध्याय में इसका विशेष वर्णन है।

- भुजयुग्म-साधना- गत प्रसंग में हाथाजोड़ी की चर्चा हो चुकी है।हाथाजोड़ी की तान्त्रिक साधना में लौंग का प्रयोग विशेष रुप से करना चाहिए।पूर्व साधित हाथाजोड़ी को नित्य लौंग समर्पित करने से उसकी क्रिया-शक्ति में विकास होता है।
- दन्तपीड़ा,स्वरभंग आदि में लौंग का औषधीय प्रयोग बहुश्रुत है।दन्त-कान्ति हेतु मंजन में इसका उपयोग किया जाता है।लौंग के सुगन्धित तेल को थोड़ी मात्रा में रुई के फोये में लगा कर प्रभावित दांत में लगाना चाहिए।लौंग के प्रयोग से मुख एवं दांत की अनेक बीमारियाँ दूर होती हैं।

-----()()()-----

१३. कपूर

कपूर,कर्पूर,काफूर,कैम्फर(*Cinnamomum camphora*)- एक अति सुगन्धित, अति ज्वलनशील,उड़नशील, स्वेत-दानेदार पदार्थ है।वस्तुतः यह, एक विशालकाय,बहुवर्षायु लगभग सदावहार वृक्ष का रवादार सत्त्व है,जो वृक्ष के लगभग समग्र भाग से प्राप्त किया जाता है।इसका वृक्ष एशिया के विभिन्न भागों में पाया जाता है।भारत,श्रीलंका,चीन, जापान, मलेशिया,कोरिया,ताइवान,इन्डोनेशिया आदि देशों में बहुतायत से पाया जाता है।अन्य देशों में भी यहीं से ले जाया गया है।कपूर का वृक्ष 100 फीट से भी ऊँचे आकार का पाया जाता है।इसी तरह आयु में भी हजारों वर्ष पुराने वृक्ष पाये गये हैं।इसके सुन्दर अति सुगन्धित पुष्प और मनमोहक फल तथा पत्तियाँ बरबस ही अपनी ओर आकृष्ट करते हैं।यही कारण है कि कहीं-कहीं इसे श्रृंगारिक वृक्ष के रुप में भी

अपनाया गया है।पत्तियाँ बड़ी सुन्दर, चिकनी,मोमी,लालीमायुक्त हरापन लिए होती हैं,जो आकार में- आठ से पन्द्रह सें.मी. लम्बी और तीन से सात सें.मी.चौड़ी होती हैं।

कुछ पत्तियाँ किंचित गोलाकार भी होती हैं।वसन्त ऋतु में छोटे-छोटे अति सुगन्धित फूल लगते हैं।इसके फल भी बड़े मोहक होते हैं- बेरी की तरह,जिन्हें पक्षियों द्वारा खाने और यहाँ-वहाँ बिखेरने के कारण मूल वृक्ष से सुदूर इलाके तक बीजों का स्थानान्तरण और तदुपरान्त समय पर अंकुरण होता है। कपूर वृक्ष की लकड़ियाँ सुन्दर फर्नीचर के काम में भी लायी जाती हैं,जो काफी मजबूत और टिकाऊ होती हैं।प्रौढ़ पौधे से प्राप्त लकड़ियों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट कर,तेज ताप पर उबाला जाता है।फिर वाष्पीकरण और शीतलीकरण विधि से रवादार (crystalline substance) बनाया जाता है।इसके अलावे अर्क और तेल भी बनाया जाता है;जिसका प्रयोग प्रसाधन एवं औषधी कार्यों में बहुतायत से होता है।आयुर्वेद में इसके अनेक औषधीय प्रयोगों का वर्णन है।अंग्रेजी और होमियोपैथी दवाइयों में भी कपूर का प्रयोग होता है।कपूर उच्चकोटि का कीटाणुनाशक,व्रणरोपक,ज्वरघ्न,शोथ-कोथहर,अतिसारहर,दर्द निवारक पदार्थ है।यह शीतवीर्य है। यानी ताशीर ठंढा है।विशेष मात्रा में सेवन से किंचित विषाक्त भी है।भारतीय कर्मकांड और तन्त्र में तो कपूर रसाबसा है ही।आजकल मिलावटी सामानों का बोलबाला है।दुष्ट व्यापारी इसके दानों में मोम डाल कर मोटी पपड़ीदार बना कर बेचते हैं।मोम के मिलावट से इसकी गुणवत्ता में काफी कमी आजाती है।किन्तु एक लाभ यह होता है कि इसकी उड़नशीलता में कमी आजाती है।वैसे उचित है कि कपूर को निर्वात (airtite) डब्बे में रखा जाय,और साथ में लौंग या गोलमिर्च डाल दिया जाय।इससे उड़ने की क्षमता न के बराबर होजाती है। कपूर को जलाने पर भारी मात्रा में काला धुआं(कार्बन)निकलता है।स्त्रियाँ हल्दी-चूर्ण के साथ कपूर को मिलाकर स्वच्छ कपड़ें में लपेटकर वर्तिका बना,तिलतेल या घृत दीप प्रज्वलित कर कपूर-कज्जली को एकत्र कर लेती हैं।पुनः उस कज्जली

में यथेष्टमात्रा में शुद्ध घृत मिश्रित कर जलधार देकर बारम्बार लेपन कर विकार-मुक्त बनाकर आंखों में लगाने हेतु काजल बनाती हैं।हल्दी-कपूर-घृत निर्मित यह कज्जली आंखों के लिए बड़ा ही गुणकारी है।

- कपूर के विभिन्न प्रयोग-
- १) कपूर एक सात्त्विक पदार्थ है।तन्त्र-साधना में सात्त्विक कार्यों के लिए ही इसका विशेष प्रयोग किया जाता है।विभिन्न प्रकार के लेप और तिलक तैयार करने में कपूर का उपयोग होता है।आरती-दीप,हवनादि में भी उपयुक्त है।देवाराधन में अन्यान्य उपचारों के बाद घृतवर्तिका के बजाय कर्पूर की आरती अति महत्त्वपूर्ण माना जाता है।श्रीयन्त्र या अन्याय यंत्र-लेखन में(ध्यातव्य है कि अलग-अलग देवताओं के अष्टगन्ध भी अलग-अलग होते हैं) मसी (स्याही) निर्माण में कर्पूर का प्रयोग आवश्यक है।मसी निर्माण में कपूर मिला देने से क्रिया की गुणवत्ता बेहद बढ़ जाती है।वस्तु की तान्त्रिक गुणवत्ता में भी वढोत्तरी हो जाती है।किसी भी अनुष्ठान-पूजा-साधना में जैसे धूना या लोहवान का प्रयोग कहा गया है,वैसे ही मेरे विचार से पूजा-स्थान के आसपास कर्पूर प्रज्वलित कर देना अति लाभकारी होता है।कपूर को हाथों से मसलकर आसपास विखेर देने से भी वातावरण की शुद्धि हो जाती है। पूजा-क्रम में कई बार कपूर का प्रयोग किया जाना चाहिए- प्रारम्भिक स्थान शोधन,प्रज्वलन,तिलक और मसी निर्माण,जलपात्र शोधन,मुखशुद्दि ताम्बूलादि सहित,और अन्त में आरार्तिक अर्पण।
- २) वास्तु-दोष निवारण के लिए पीले वस्त्र में वेष्ठित कर कपूर की पोटली को घर के चारों कोनों और मध्य में समुचित स्थान पर टांग देना चाहिए।
- ३) आकर्षण-प्रयोगों के अन्तर्गत किसी मृतात्मा को आहूत करने के लिए सर्वप्रथम कक्ष में कपूर की धूल को विखेर देना चाहिए।तदुपरान्त कपूर का दीपक जला कर रख दें।कपूर के निकला धूम मृत प्राणियों को विशेष प्रिय है।ध्यातव्य है कि प्रेत-

आवेशित व्यक्ति को कपूर से कष्ट होता है।प्रतांशा-प्रभाव –जांच हेतु यह नुस्खा अपनाया जा सकता है।मृतात्मा को आहूत कर मनोवांछित वार्ता का विधान भी तन्त्र का विषय है।इस क्रिया को अलग से मैं अपने संग्रह में स्थान दूंगा।जिज्ञासुओं को वहीं से ग्रहण करना चाहिए।

४) यन्त्र-लेखन प्रायः भोजपत्र(वृक्ष विशेष की छाल) पर किया जाता है।यन्त्र-लेखन में प्रयुक्त मसी में कपूर का मिश्रण अवश्य करना चाहिए।कपूर को जलाकर उसकी कज्जली को घृत मिश्रित करके भी मसी तैयार की जाती है।शनि-यन्त्र-लेखन में कपूर-कज्जली का उपयोग विशेष प्रभावशाली होता है। स्थायित्व की दृष्टि से ताम्रादि धातुओं पर उत्कीर्ण विभिन्न यन्त्रों का विशेष महत्त्व है।यहाँ यन्त्र-लेखन की बात तो नहीं आती,किन्तु यन्त्र-पूजन में अष्टगन्ध निर्माण करते समय कपूर अवश्य उपयोग करना चाहिए।इससे यन्त्र की ऊर्जा में विकाश होता है। ५) हस्तरेखा विशेषज्ञों द्वारा कपूर-कज्जली का उपयोग किया जाता है। कपूर-कज्जली अथवा अष्टगन्ध निर्माण के लिए कोई भी आमावश्या(विशेष कर दीपावली) का शुभ मुहूर्त चयन करना चाहिए।रविपुष्य,गुरुपुष्यादि योग भी श्रेयष्कर हैं।विजय की कामना से देवी-अष्टगन्ध का निर्माण विजयादशमी को सायंकाल में करना उत्तम है।अन्य (या मिश्रित) उद्देश्य हेतु नवरात्रि के किसी दिनों में किया जा सकता है।

१४.नागदमनी

वनस्पति-जगत में अनेकानेक पौधे हैं,जिन सबका विस्तृत गुण-धर्म-संकलन किसी एक भाषा की पुस्तक में एकत्र क़र देना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। आयुर्वेद का निघण्टु संग्रह काफी हद तक इस क्षेत्र में काम किया है।आधुनिक वनस्पति विज्ञान भी नित नूतन शोध में जुटा है;किन्तु मुझे लगता है कि पुराने को ही नये अन्दाज में देखने भर-का जितना प्रयास किया जा रहा है- उतना किसी नये पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है।असंख्य वनस्पतियाँ अभी भी उपेक्षित हैं हमारे चारों ओर।नागदमनी भी कुछ वैसा ही वनस्पति है।

अपनी हरीतिमा और दण्डाकार संरचना में शोभायमान नागदमनी महज बाढ़ लगाने के काम तक सिमट कर रह गया है।कहीं-कहीं एकाध गमले में भी दीख पड़ता है।नागदमनी के पत्ते गहरे हरे रंग के,तनिक लंबाई वाले,तदनुसार चौड़ाई भी थोड़ी ही- ऊर्ध्वमुखी शाखाओं पर अल्प संख्या में ही होते हैं।कम जल और किसी भी वातावरण में जीवित रहने वाला नागदमनी के डंठल को तोड़-काट कर भी आसानी से लगाया जा सकता है।एक और विशेषता यह भी है कि पशु इसे खाते नहीं- यही कारण है कि घेरेवन्दी में सुरक्षित-उपयोग होता है।नागदमन, दर्पदमन, नागपुष्पी, वनकुमारी के साथ सर्पदमन नाम से भी जाना जाता है।मान्यता है कि इसके आसपास सर्प नहीं आते।यही कारण है कि जानकार लोग गमलों में सम्मान पूर्वक स्थान देते हैं।तन्त्र-ग्रन्थों में महायोगेश्वरी नाम से ख्यात है।

प्रायोगिकक्रिया- रविपुष्य योग में नागदमनी की जड़ विधिवत(पूर्व अध्यायों में कथित विधि से) ग्रहण कर जलादि शुद्धि-संस्कार करके नवीन लाल वस्त्र का आसन देकर पीठिका पर स्थापित कर यथोपचार पूजन करना चाहिए।पूजन के पश्चात् कम से कम ग्यारह माला श्री शिवपंचाक्षर

मंत्र एवं नौ माला देवी नवार्ण मंत्र का जप कर,पुनः पंचोपचार पूजन करना चाहिए।तथा सामान्य साकल्य(काला तिल,तदर्घ चावल,तदर्ध जौ,तदर्घ गूड़, तद़र्ध घृत) से कम से कम अष्टोत्तरशत तततत मंत्रो से होम भी अवश्य करें।इतनी क्रिया से तान्त्रिक प्रयोग के लिए नामदमनी तैयार हो गया।इसके प्रयोग अति सीमित हैं।यथा-

- मेधा-शक्ति-वर्धन- मन्दबुद्धि बालकों को साधित नामदमनी मूल को भद्रादि रहित किसी रविवार या मंगलवार को तावीज में भर कर लाल धागे में पिरोकर गले या बांह में बांध देने से अद्भुत लाभ होता है।सामान्य बालकों के बौद्धिक विकास हेतु भी यह प्रयोग किया जा सकता है।
- सम्मान-यश-विजय-प्राप्ति हेतु- आये दिन हम देखते हैं कि अकारण ही प्रायः लोगों को अयश और असम्मान का सामना करना पड़ता है।हालाकि उसके अनेक कारण हैं।कारण चाहे जो भी हों,ऐसी स्थिति में नामदमनी का प्रयोग बड़ा ही लाभकारक होता है।करना सिर्फ यही है जो ऊपर के प्रयोग में बतला आए हैं- यानी ताबीज में भर कर धारण मात्र।
- धन-वृद्धि हेतु- रविपुष्य योग में आमन्त्रण विधि से(पूर्व अध्यायों में वर्णित) नागदमनी का पौधा घर में ले आयें और नये गमले में रोपण करके,ऊपर बतलायी गयी विधि से स्थापन पूजन-जप-होमादि सम्पन्न करें।(ध्यातव्य है कि गमले में रोपण करने से पूर्व थोड़ा सा मूलभाग तोड़कर अलग रख लें,और सारी विधियाँ साथ-साथ उसके लिए भी करते जाएं)।इस प्रकार साधित नामदमनी के पौधे को घर के मध्योत्तर भाग में स्थापित कर दें और नित्य जलार्पण कर प्रणाम करके,कम से कम एक माला श्री महालक्ष्मी

मंत्र का जप सुविधानुसार खड़े या बैठ कर कर लिया करें।साधित जड़ को ताबीज में भर कर लाल धागे में पिरोकर गले या बांह में बांध लें।आप अनुभव करेंगे कि थोड़े ही दिनों में धनागम के नये स्रोत खुल रहे हैं,साथ ही पहले के होते आरहे धन का प्रतिकूल प्रवाह भी रुक गया है।

- ग्रह-दोष-निवारण- उक्त विधान से साधित नागदमनी की जड़ को ताबीज में भरकर धारण करन से विभिन्न ग्रहदोषों का निवारण होता है,साथ ही अन्तरिक्ष वाधाओं का भी शमन होता है।घर में पूर्व विधि से स्थापित करने से मकान पर पड़ने वाला ग्रहों का प्रतिकूल प्रभाव भी नष्ट होता है।ध्यातव्य है कि मकान की रक्षा के लिए नागदमनी का स्थापन-पूजन तो पूर्व विधि से ही होगा,किन्तु गमले का स्थान मुख्य द्वार की सीध में होना आवश्यक है।सुविधा हो तो मुख्य द्वार के दोनों ओर एक-एक गमले रख सकते हैं।दूसरी बात ध्यान में रखने योग्य है कि यदि पहले से आपका मकान भूत-प्रेत-वाधाओं से ग्रसित है,तो वैसी स्थिति में नागदमनी की स्थापना के पूर्व विशेष जानकार वास्तुशास्त्री से परीक्षण कराकर,शान्तिकर्म अवश्य करा लें,अन्यथा उलटा प्रभाव हो सकता है।इस बात को यों समझें कि घर में अवांक्षित का प्रवेश है यदि, तो पहले उसे बाहर करलें,तब दरवाजा बन्द करें।नामदमनी का सुरक्षा कवच अपनी स्थापना के बाद अवांछित को आने नहीं देगा,किन्तु पहले से जो घर में उपस्थित है उसे बाहर नहीं करेगा,और दूसरी ओर मुख्यद्वार नागदमनी-कवच से अवरुद्ध हो जाने के कारण अवांछित पदार्थ चाह कर भी बाहर नहीं निकल

पायेगा।परिणाम यह होगा कि वह घर के अन्दर ही उतपात मचाता रहेगा।अतः सावधानी से इसका प्रयोग करना चाहिए।

-------()()()-------

१५. विजया

विजया का प्रचलित नाम भांग(भंग) है।इसका एक व्यंगोक्ति नाम शिवप्रिया भी है- क्यों कि शिव को विशेष प्रिय है।शिवाराधन में अन्य पूजनोपचारों के साथ विल्वपत्र और विजया अनिवार्य है। विल्वपत्र का प्रयोग तो अन्य देवों के पूजन में भी होता है,किन्तु विजया एकमात्र शिवप्रिया ही है।प्रायः सर्व सुलभ क्षुप जातीय इस वनस्पति के रोपण हेतु सरकारी आज्ञापत्र की आवश्यकता होती है,क्यों कि इसके सर्वांग में मादकता गुण है।वैसे जंगली वूटियों की तरह प्रायः जहां-तहां अवांछित रुप से उग भी जाता है।भांग की पत्तियों को पीस कर गोली बनाकर या शर्बत के रुप में लोग पीते हैं।नशे के विभिन्न पदार्थों में विजया का नशा अपने आप में अनूठा ही है।वैसे यह शाही घरानों से जुड़ा रहा है।विजया का प्रयोग आयुर्वेद के विभिन्न औषधियों में होता है।इसके कुछ तान्त्रिक प्रयोग भी हैं,जो खासकर स्वास्थ्य से ही सम्बन्धित हैं। भांग को एक खास विधि से खास समय में प्रयोग करने से गुण में काफि वृद्धि हो जाती है।प्रयोग पूर्व की विधि अन्याय वनस्पतियों जैसी ही है।

वाजार से यथेष्ठ मात्रा में भांग की सूखी पत्तियाँ खरीद लायें।उतित होगा कि यह कार्य श्रावण महीने में किसी सोमवार को किया जाय।झाड़-पोंछ कर स्वच्छ करने के बाद नवीन लाल वस्त्र का आसन देकर स्थापित करें और कम से कम ग्यारह हजार शिव पंचाक्षर मंत्र का जप करें।जप के पूर्व शिव की पंचोपचार पूजन अवश्य कर लें।साथ ही भांग की पोटली की

भी पूजा करें- उसमें शिव को आवाहित करके।इस प्रकार प्रयोग के लिए बूटी तैयार हो गयी।

भांग के प्रयोग के लिए कुछ सहयोगी घटक भी अनिवार्य हैं, यथा- सौंफ,कागजी बादाम,काली मिर्च, छोटी इलाइची,गुलाब की पंखुड़ियां,केसर,दूध और शक्कर(मिश्री)। भांग की मात्रा (सामान्य जन के लिए) नित्य एक ग्राम से अधिक नहीं हो।वैसे नशे के आदि लोग तो पांच से दश ग्राम तक सेवन कर लेते हैं।पर यह उचित नहीं है।समुचित मात्रा में साधित विजया का नियमित प्रयोग मेधा शक्ति को बढ़ाने में काफी कारगर है। साल के बारह महीनों में विजया प्रयोग के लिए अलग-अलग अनुपान का महत्व तन्त्रात्मक आयुर्वेद में बतलाया गया है,जो निम्नलिखित हैं-

- चैत्र- ऊपर निर्दिष्ट घटकों के साथ प्रयोग करें। चिन्तन,धारणा,स्मरण-शक्ति को विजया से काफी बल मिलता है।
- वैशाख- ऊपर निर्दिष्ट घटकों के साथ प्रयोग करें। चिन्तन,धारणा,स्मरण-शक्ति के लिए गुणकारी है।स्नायु संस्थान के लिए अति उत्तम है।
- ज्येष्ठ- इस महीने में उक्त घटकों के साथ विजया-पेय तैयार कर, सूर्योदय के जितने समीप ग्रहण कर सके, उतना लाभदायी है- शारीरिक बल-कान्ति-सौन्दर्य के लिए।
- आषाढ़- इस महीने में विजया का नियमित सेवन केश-कल्प का कार्य करता है।प्रयोग की विधि बदल जाती है।उक्त महीनों की तरह पेय के रुप में न लेकर,चूर्ण के रुप में लेना चाहिए

साथ में चित्रक का चूर्ण भी समान मात्रा में मिलाकर धारोष्ण दूध या सामान्य गरम दूध के साथ लेना चाहिए।

- श्रावण- इस महीने में विजया-चूर्ण के साथ शिवलिंगी-वीज के चूर्ण को मिलाकर दूध या उक्त घटक के साथ पेय के रुप में सेवन करने से वल-वीर्य-कान्ति की वृद्धि होती है।(शिवलिंगी के सम्बन्ध में विशेष जानकारी शिवलिंगी अध्याय में देखें)।
- भादो- इस महीने में विजया-चूर्ण को रुदन्ती-फल-चूर्ण के साथ समान मात्रा में मिलाकर दूध के साथ सेवन करने से मानसिक अशान्ति दूर होकर चित्त की एकाग्रता में वृद्धि होती है।सुविधा के लिए इसे गोली बनाकर भी उपयोग किया जा सकता है।
- आश्विन- इस महीने में विजया के पत्तों को समान मात्रा में ज्योतिष्मति(मालकांगनी) के साथ चूर्ण बनाकर दुग्ध के साथ सेवन करने से तेजबल की वृद्धि होती है।
- क़ार्तिक- इस महीने में विजया के पत्तों को समान मात्रा में ज्योतिष्मति(मालकांगनी) के साथ चूर्ण बनाकर बकरी के दूध के साथ सेवन करने से तेजबल की वृद्धि होती है।यानी अन्य बातें वही रही जो आश्वन की थी,किन्तु अनुपान बदल गया।ध्यातव्य है कि आयुर्वेद में अनुपान-भेद से एक ही औषधि अनेक रोगों में प्रयुक्त होती है।तन्त्र में भी क्रिया भेद से प्रयोग और प्रभाव में अन्तर हो जाता है।
- अगहन- इस महीने में विजया-चूर्ण को घी और मिश्री के साथ सेवन करने से समस्त नेत्र रोगों में लाभ होता है।स्वस्थ व्यक्ति भी नेत्र-ज्योति की रक्षा के लिए इस प्रयोग को कर सकते हैं।

- पौष- इस महीने में विजया-चूर्ण को काले तिल के चूर्ण के साथ सेवन करने से नेत्र-ज्योति बढ़ती है।अनुपान गरम जल का होना चाहिए।कुछ लोग दूध का अनुपान सही बताते हैं,किन्तु मेरे विचार से काले तिल के साथ दूध सर्वथा वर्जित होना चाहिए।इससे एक लाभ तो हो जायेगा,पर अनेक हानि के द्वार भी खुलेंगे।अतः इस निषेध का ध्यान रखना जरुरी है।
- माघ- इस महीने में विजया-चूर्ण को नागरमोथा-चूर्ण के साथ मिलाकर दूध या गरम जल से सेवन करना चाहिए।इससे शरीर का भार बढ़ता है(मोटे लोग इसका प्रयोग न करें)।
- फाल्गुन- इस महीने में विजया को चार गुने आंवले के साथ मिलाकर चूर्ण बनाकर,गरम जल के साथ सेवन करने से अद्भुत स्फूर्ति आती है।वात,रक्त,नाड़ी सभी संस्थानों का शोधन होकर शरीर कान्ति-शक्तिवान होता है।

इस प्रकार साल के बारह महीनों में अलग-अलग घटकों और अनुपान भेद से विजया कल्प का प्रयोग किया जा सकता है।

------()()()-----

१६. सहदेई

सहदेई का एक और प्रचलित नाम सहदेवी भी है।क्षुप जातीय बलाचतुष्टय(बला,अतिबला,नागबला, और सहदेई) समूह की यह वनस्पति प्रायः ग्रामीण इलाकों में सर्व सुलभ है,भले ही अज्ञानता वस उपेक्षित प्रायः है।घास-फूस के श्रेणी में माना जाने वाला सहदेई आयुर्वेद और तन्त्र में बहुत ही उपयोगी है।अनेक प्रकार के लोकोपकारी प्रयोग हैं इसके।

ग्रहण विधि- सर्वप्रथम किसी रविपुष्य योग का चयन करें,जो भद्रादि रहित हो।अब उसके पूर्व संध्या यानी शनिवार की संध्या समय जल-अक्षत और सुपारी लेकर श्रद्धा पूर्वक उक्त वनस्पति के समीप जाकर निवेदन करें - " कल प्रातः लोक-कल्याणार्थ मैं आपको अपने घर ले चलूंगा।" और अगले दिन प्रातःकाल शुचिता पूर्वक उसे उखाड़ कर घर ले आयें।ध्यातव्य है कि ग्रहण से लेकर घर पहुंचने पर्यन्त निम्नांकित मन्त्र का सम्यक् उच्चारण करते रहना चाहिए।मार्ग में किसी से बातचीत न हो।एकाग्रता और उद्देश्य-स्मरण सतत जारी रहे।

मन्त्र- ऊँ नमो रूपावर्ती सर्वप्रोतेति श्री सर्वजनरंजनी सर्वलोक वशकरणी सर्वसुखरंजनी महामाईल घोल थी कुरुकुरु स्वाहा। (यह एक का साबर मंत्र है,अतः भाषायी विचार में न उलझें)

घर आकर सहदेई पंचाग को पवित्र जल से धो कर पुनः ंचामृत स्नान,एवं शुद्ध स्नानादि क्रिया सम्पन्न करें, तथा पंचोपचार वा षोडशोपचार पूजनोपरान्त उक्त मंत्र का अष्टोत्तर सहस्त्र जप भी सम्पन्न करें। पूरी क्रिया बिलकुल एकान्त में, और गोपनीय ढंग से सम्पन्न करने का हर सम्भव प्रयास करें।क्रियात्मक तन्मयता के साथ-साथ दृष्टि-दोष से भी बचना जरुरी है।

सूर्य-चन्द्रादि ग्रहण,विभिन्न नवरात्रियाँ, खरमास रहित किसी भी महीने की आमावश्या आदि काल में रविपुष्य योग मिल जाये तो अति उत्तम,या फिर सूर्य के पुष्य नक्षत्र में आने पर जो शुद्ध रविवार मिले उसे भी सहदेई-साधना के लिए ग्रहण किया जा सकता है।

साधित सहदेई के विभिन्न तान्त्रिक प्रयोग-

- सहदेई के मूल भाग को लाल वस्त्र में वेष्ठित कर तिजोरी,आलमीरे या अन्नागार में स्थापित करने से

अन्न-धनादि की वृद्धि होती है।पुराणों में विभिन्न अक्षय पात्रों की चर्चायें मिलती हैं। वहां भी कुछ ऐसा ही चमत्कार-योग है।

- ❖ सहदेई के मूल को गंगाजल में घिसकर नेत्रों में अञ्जन करने से प्रयोगकर्ता की दृष्टि में सम्मोहन-क्षमता आ जाती है।
- ❖ सहदेई के मूल को तिल तेल में घिस कर प्रसव-वेदना-ग्रस्त स्त्री की योनि पर लेप करने से शीघ्र ही प्रसव-पीड़ा सुख-प्रसव में बदल जाती है,यानी प्रसव हो जाता है।
- ❖ सहदेई के मूल को लाल धागे में बांध कर प्रसव-वेदना-ग्रस्त स्त्री के कमर में बांध देने से शीघ्र ही प्रसव-पीड़ा सुख-प्रसव में वदल जाती है,यानी प्रसव हो जाता है।ध्यातव्य है कि प्रसव होते ही कमर में बंधा मूल यथाशीघ्र खोल कर रख दें,और बाद में कहीं विसर्जित कर दें।
- ❖ साधित सहदेई-पंचाग को चूर्ण करके गोघृत के साथ मासिक धर्म से पांच दिन पूर्व से प्रारम्भ कर पांच दिन बाद तक(पांच-छः महीने तक) सेवन करने से सन्तान-सुख प्राप्त होता है।
- ❖ साधित सहदेई-पंचाग को चूर्ण करके पान में डाल कर गुप्त रुप से सेवन करा देने से अभीष्ट व्यक्ति साधक के वशीभूत हो जाता है।

- साधित सहदेई-पंचाग को चूर्ण करके जल-मिश्रित तिलक लगाने से प्रयोगकर्ता के मान-प्रतिष्ठा की वृद्धि होती है।सामाजिक-प्रतिष्ठा-लाभ के लिए यह अद्भुत प्रयोग है।
- साधित सहदेई-मूल को लाल धागे में बांध कर बालक के गले में तावीज की तरह पहना देने से थोड़े ही दिनों में गण्डमाला रोग नष्ट हो जाता है।
- सहदेई को विधिवत ग्रहण कर घर के वायव्य वा ईशान क्षेत्र में जमीन वा गमले में स्थापित कर नित्य पूजन कर कम से कम एक माला पूर्व कथित मन्त्र का जप करते रहने से गृह-कलहादि की शान्ति होती है,और वास्तु दोषों का निवारण होता है।
- साधित सहदेई-पंचाग को चूर्ण करके गोदुग्ध अथवा जल के साथ नित्य सेवन करने से स्त्रियों के श्वेत प्रदर एवं रक्त प्रदर में अद्भुत लाभ होता है।
- सहदेई के अन्य आयुर्वेदिक प्रयोगों को आयुर्वेद-ग्रन्थों में देखना चाहिए।बस सिर्फ इस बात का ध्यान रखना है कि प्रयोग करने के लिए साधित सहदेई का ही उपयोग हो ताकि अधिक लाभार्जन हो।

------()()()()--------

१७. अपामार्ग

अपामार्ग का प्रचलित नाम चिड़चिड़ी है।लटजीरा,चिरचिटा,और ओंगा आदि नामों से भी इसे जाना जाता है।क्षुप जातिय यह एक सर्वसुलभ

वनस्पति है,जिसका अंकुरण बरसात के प्रारम्भ में होता है,और कई वर्षों तक पुष्पित-पल्लवित होते रहता है।अंकुरण के दो-ढाई महीने बाद पुष्पित होता है,और जाड़ा आते-आते सभी फूल परिपक्व फल में परिणत हो जाते हैं।फलों के तुष भाग को रगड़ कर अलग करने पर सावां की कन्नी की तरह छोटे-छोटे चावल निकलते हैं,जिनका आयुर्वेद और तन्त्र में विशेष प्रयोग होता है।साधु-संतो के बीच इसका बड़ा ही महत्त्व है,क्यों कि क्षुधा-तृषा पर नियंत्रण रखने में बहुत ही कारगर है। गहरे हरे रंग की एक ईंच गोलाई वाली चिकनी पत्तियां वड़ी मनोहर लगती हैं।ज्योतिष शास्त्र में बुध ग्रह की यह संमिधा माना गया है।रंग-भेद से अपामार्ग प्रायः दो प्रकार का होता है- श्वेत और रक्त।सामान्य तौर पर यह भेद स्पष्ट नहीं होता,किन्तु गौर से देखने पर पत्तियों और डंठल में किंचित रंगभेद दीख पड़ता है।इसके पौधे प्रायः एक वर्ष में ही सूख जाते हैं,किन्तु कुछ पौधे कई वर्षों तक पुष्पित-पल्लवित होते हुए भी देखे गये हैं। ये पौधे बड़े और पुराने होने पर झाड़ीनुमा हो जाते हैं ।आयुर्वेद और तन्त्र में इसके पंचागों का अलग-अलग प्रयोग है।

अपामार्ग को किसी रविपुष्य योग में(भद्रादि रहित) ग्रहण किया जा सकता है,किन्तु सूर्य जब पुष्य नक्षत्र में हों,स वक्त मिलने वाले रवि या सोमवार को ग्रहम करना विशेष लाभदायक माना गया है।कुछ लोग सौर्यपुष्य के बुधवार को भी ग्रहण करना उचित समझते हैं।अन्य वनस्पतियों की तरह (जो पुस्तक के प्रारम्भिक अध्यायों में स्पष्ट है) ही इसे भी पूर्व संध्या को आमंत्रण सहित अगले दिन विधिवत पंचोपचार पूजन कर घर लाना चाहिए। पूरे पौधे को जड़ सहित उखाड़ कर ,घर लाकर हरे रंग के नवीन कपड़े पर आसन देकर पंचोपचार पूजन करना चाहिए।तदुपरान्त श्री शिवपंचाक्षर,सोम पंचाक्षर,एवं बुध पंचाक्षर मंत्रों

का कम से कम एक-एक हजार जप- दशांश होमादि सहित सम्पन्न करें।इस प्रकार अब अपामार्ग प्रयोग के योग्य तैयार हो गया।

अपामार्ग के कतिपय प्रयोगः-

- रक्त अपामार्ग के डंठल से नियमित दातुन करने से वाणी में अद्भुत चमत्कार उत्पन्न हो जाता है। प्रयोग-कर्ता की वाचा-सिद्धि हो जाती है।
- लाल ओंगा की जड़ को भस्म करके, नियमित गो दुग्ध के साथ एक-एक ग्राम सेवन करने वाले दम्पति को सन्तान सुख की प्राप्ति होती है।
- अपामार्ग के बीजो को साफ करके चावल निकाल लें।उन चावलों के दश ग्राम की मात्रा लेकर आठ गुने गोदुग्ध में पूर्णिमा की रात को मिट्टी के नवीन पात्र में पकावे।पूरी पाक-प्रक्रिया में सोमपंचाक्षर का जप मानसिक रुप से चलता रहे।तैयार पाक को चन्द्रमा को नैवेद्य अर्पण करके श्रद्धा-प्रेम सहित ग्रहण करें।इस पाक में अद्भुत क्षमता है।क्षय,दमा जैसी फेफड़े की विभिन्न वीमारियां दो-चार बार के प्रयोग से समूल नष्ट हो जाती हैं।
- उक्त विधि से तैयार पाक को ग्रहण करने से बल-वीर्य की बृद्धि के साथ क्षुधा-तृषा पर चमत्कारिक रुप से नियंत्रण होता है।किसी लम्बे अनुष्ठान में इस पाक का प्रयोग किया जा सकता है।एक सुपुष्ट विस्तृत पौधे से दो-सौ ग्राम तक चावल प्राप्त किया जा सकता है,जो की बार प्रयोग करने हेतु पर्याप्त है।

- साधित श्वेत अपामार्ग-मूल को पास में(पर्स आदि में) रखने से अप्रत्याशित धनागम के स्रोत बनते हैं।अन्य कल्याणकारी लाभ भी होते हैं।
- साधित श्वेत अपामार्ग-मूल को तावीज में भर कर लाल,पीले या हरे धागे मे गूथकर गले वा वाह में धारण करने से शत्रु,शस्त्र,अन्तरिक्ष आदि से रक्षा होती है।
- साधित श्वेत अपामार्ग-मूल को जल में घिस कर तिलक लगाने से प्रयोग कर्ता में सम्मोहन और आकर्षण गुण आ जाता है।
- साधित श्वेत अपामार्ग-मूल को चूर्ण करके हरे रंग के नवीन कपड़े में लपेट कर वर्तिका बना,तिल तेल का दीपक प्रज्ज्वलित करे।उस दीपक को एकान्त में रखकर उसकी लौ पर ध्यान केन्द्रित करने से वांछित दृश्य देखे जा सकते हैं।मान लिया किसी चोरी गई वस्तु की,अथवा गुमशुदा व्यक्ति के बारे में हम जानना चाहते हैं,तो इस प्रयोग को किया जा सकता है।आपका ध्यान जितना केन्द्रित होगा, दृश्य और आभास उतना ही स्पष्ट होगा।
- साधित श्वेत अपामार्ग-मूल को उक्त विधि से दीपक तैयार कर, दीपक के लौ पर कज्जली(काजल) तैयार करे। हांथ के अंगूठे के नाखून पर लेप करके किसी वालक को आहूत करे,और वांछित प्रश्न का उत्तर जानने का प्रयास करे।अंगूठे पर लगे काजल में झांककर वालक दूरदर्शन के पर्दे की तरह दृश्य देख कर बता सकता है, जो काफी सटीक होता है।इस क्रिया को करने के लिए साबर तन्त्र के कज्जली मंत्र को साध लेना भी आवश्यक है,तभी सही लाभ मिलेगा।वैसे सामान्य आभास इतने मात्र से ही हो जायेगा।

- साधित श्वेत अपामार्ग-मूल को जल में पीस कर शरीर पर लेप करने से शस्त्राघात का प्रभाव न के बरावर होता है।
- साधित श्वेत अपामार्ग की पत्तियों को जल के साथ पीस कर दंशित स्थान पर लेप करने से विच्छु- दंश का कष्ट निवारण होता है।इस प्रयोग में साधित श्वेत अपामार्ग-मूल को भी ग्रहण करना चाहिए- इसे आतुर को सुंघाते रहना चाहिए।दोनों प्रयोग एक साथ करने से शीघ्र लाभ होता है।
- साधित श्वेत अपामार्ग-मूल और पत्तियों को जल के साथ पीस कर ,अथवा चूर्ण बनाकर एक-एक चम्मच की मात्रा में ग्रहण करने से विभिन्न पितज व्याधियां नष्ट होती हैं।
- साधित श्वेत अपामार्ग पंचाग को आठ गुने जल में डाल कर अष्टमांश क्वाथ बनावे।फिर उस क्वाथ को तैलपाक विधि से तिल तेल में पका कर,सिद्ध तेल को छान कर सुरक्षित रख ले।इसके लेपन का प्रयोग शरीर के अंगों के जल जाने पर ,या अन्य व्रणों के रोपण में करने से आशातीत लाभ होता है।मैंने इस प्रयोग को सैंकड़ों बार किया है- जलने का दाग तक मिट जाता है।त्वचा के अन्याय रोगों में भी इस अपामार्ग तेल का प्रयोग किया जा सकता है।
- साधित श्वेत अपामार्ग पंचाग के भस्म को दंत-मंजन की तरह प्रयोग करने से दन्त,जिह्वा,तालु,कंठ-स्वर मंडल आदि के विभिन्न रोगों का नाश होता है।
- साधित श्वेत अपामार्ग-मूल को लाल धागे में बांध कर प्रसव-वेदना पीड़िता के कमर में बांध देने से सुख प्रसव हो जाता है।कुछ लोग इस मूल को सीधे योनी में रखने का सुझाव देते

हैं,किन्तु व्यवहारिक रुप से यह उचित नहीं प्रतीत होता।मूल को कमर में ही बांधे और ध्यान रहे कि प्रसव होते के साथ,(तत्क्षण) ही कमर से खोल दे,अन्यथा अपनी तीव्र शक्ति के प्रभाव से गर्भाशय को भी वाहर खींच सकता है।

-------()()()()------

१८. गोरखमुण्डी

गोरखमुण्डी एक सुलभप्राप्य वनस्पति है।इसके छोटे-छोटे पौधे गेहूं,जौ,रब्बी आदि के खेतों में बहुतायत से पाये जाते हैं।प्रायः जाड़े में स्वतः उत्पन्न होने वाले ये बड़े घासनुमा पौधे गर्मी आते-आते परिपक्व होजाते हैं।दो-तीन ईंच लम्बी दांतेदार पत्तियों के ऊपरी भाग में, गुच्छों में छोटे-छोटे घुण्डीदार फल लगते हैं,जो वस्तुतः फूल के ही सघन परिवर्तित रुप हैं।ये पौधे यदाकदा जलाशयों के जल सूखजाने के बाद वहाँ भी स्वतः उत्पन्न हो जाते हैं।आयुर्वेद में रक्तशोधक औषधी के रुप में इसका उपयोग होता है।

ऐसी मान्यता है कि इसके तान्त्रिक प्रयोगों के जनक तन्त्र गुरू गोरखनाथजी हैं,और उनके नाम पर ही सामान्य मुण्डी गोरखमुण्डी हो गया।पूर्व अध्यायों में वर्णित विधि से इसे ग्रहण करके उपयोग करने से कई लाभ मिलते हैं।

Ψ तन्त्र-सिद्ध गोरखमुण्डी को (पंचाग) सुखा कर चूर्ण बनालें।इसे शहद के साथ नित्य प्रातः-सायं एक-एक चम्मच की मात्रा में खाने

से बल-वीर्य,स्मरण-क्षमता,चिन्तन और धारणा तथा वाचा-शक्ति का विकास होता है।

- Ψ इसके चूर्ण को रात भर भिगोकर,सुबह उस जल से सिर धोने से केश-कल्प का कार्य करता है।
- Ψ गोरखमुण्डी के ताजे स्वरस को शरीर पर लेप करने से ताजगी और स्फूर्ति आती है।त्वचा की सुन्दरता बढ़ती है।
- Ψ गोरखमुण्डी के चूर्ण को जौ के आटे में मिलाकर(चार-एक की मात्रा में),रोटी बनाकर,गोघृत चुपड़ कर खाने से बल-वीर्य की बृद्धि होकर वुढ़ापे की झुर्रियां मिटती हैं।शरीर कान्तिवान होता है।
- Ψ गोरखमुण्डी का सेवन दूषित रक्त को स्वच्छ करता है।विभिन्न रक्तविकारों में इसे सेवन करना चाहिए।

उक्त सभी प्रयोग सामान्य औषधि के रुप में भी किये जा सकते हैं,किन्तु तान्त्रिक विधान से ग्रहण करके,साधित करके उपयोग में लाया जाय तो लाभ अधिक होगा यह निश्चित है।

-----0-----

१९. बहेड़ा

त्रिफला समूह का एक घटक – बहेड़ा का संस्कृत नाम विभीतक है।हिन्दी में इसे बहेरा कहते हैं। इसका एक तान्त्रिक नाम भूतवृक्ष भी है।मान्यता है कि बहेरा के वृक्ष पर आरुढ़ होकर,अथवा इसके तल में आसन लगाकर साधना करने से विशेष लाभ होता है- क्रिया शीघ्र फलीभूत

होती है।इसके विशालकाय वृक्ष जंगलों में बहुतायत से पाये जाते हैं।बहेड़ा के फलों के त्वक भाग को विभिन्न आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयोग किया जाता है।बड़े मटर सदृश कठोर बीज के अन्दर की गिरि का भी औषधीय उपयोग होता है।खाने में कुछ-कुछ चिनियां बादाम जैसा स्वाद होता है इस अन्तः मज्जा का।तन्त्र शास्त्र में बहेड़ा के मूल,त्वक और पत्र भाग का उपयोग किया जाता है।मंत्र शास्त्र में साधना के योग्य निर्दिष्ट अन्य स्थानों के साथ बहेड़े की भी चर्चा है।किसी जलाशय(नदी-तालाब) के समीप बहेड़ा का वृक्ष हो तो रात्रि में उसके नीचे बैठ कर तान्त्रिक क्रियायें(जपादि) करने से आशातीत सफलता मिलती है।योगिनी और यक्षिणी साधना में बहेड़े की शाखा पर आरुढ़ होकर जप करने का विधान है।समान्य आसन और स्थान की तुलना में विभीतक-शाखारुढ़ साधना अनन्त गुना फलदायी होती है।सीधे विभीतक-साधना भी करने का विधान है- इसमें चयनित विभीतक वृक्ष को ही तान्त्रिक क्रिया द्वारा साधित कर लिया जाता है,जिसका उपयोग साधक अपनी आवश्यकतानुसार करता है।इस प्रकार एक साधित विभीतक वृक्ष से सौकड़ों-हजारों लोगों का कल्याण किया जा सकता है।किन्तु उस साधित वृक्ष की मर्यादा की सुरक्षा एक बहुत बड़ी जिम्मेवारी हो जाती है- उस साधक के लिए।क्यों कि जाने-अनजाने यदि किसी अन्य व्यक्ति ने उसका प्रयोग कर लिया तो भारी परेशानियों का सामना करना पड़ सकता है।मेरे एक सम्बन्धी सज्जन ने अपने घर के समीप विधिवत तालाब खुदवाया।उसके पिंड पर चारोंओर विभिन्न उपयोगिः वनस्पतियों को स्थापित किया।नैऋत्य कोण पर विभीतक वृक्ष लगाये।समुचित विकास के बाद उसकी विधिवत साधना सम्पन्न की।जीवन भर काफी लाभ उठाये- नाम,यश,कीर्ति,लोक कल्याण – सब कुछ बटोरा,किन्तु शरीर थकने पर वृक्ष की मर्यादा का घोर उलंघन

हुआ,भारी दुरुपयोग भी;और इसका परिणाम भी सामने आया- रहा न कुल में रोअन हारा।अस्तु।

किसी भी वनस्पति का सीधे उपयोग करने से उसके औषधीय गुण तो प्राप्त होते ही हैं,किन्तु ग्रहण- मुहूर्त और अन्य विधान के साथ उपयोग करने पर चमत्कारिक रुप से गुणों में वृद्धि हो जाती है- ऐसा हमारे मनीषाओं का अनुभव रहा है।पुराने समय में आयुर्वेदज्ञ इस बात को जानते थे,और सम्यक् रुप से पालन भी करते थे,यही कारण था कि औषधियां बलवती होती थी;किन्तु आज हर वस्तु का वाजारीकरण हो गया है, जिससे मांग वढ़ गयी है,और पूर्ति के लिए नियमों की धज्जियां ऊड़ायी जा रही है।फलतः अविश्वास का बोलबाला है।दूसरी बात है कि लोभ-मोहादि दुर्गुणों का बाहुल्य हो गया है।अनाधिकारियों के हाथ लग कर

वस्तु हो या शास्त्र- अपनी मर्यादा खो चुका है।अतः इन बातों का सदा ध्यान रखना चाहिए।

बहेड़ा के वृक्ष की साधना विभिन्न(बारहो महीने के शुक्ल पक्ष प्रतिपदा से नवमी पर्यन्त) नवरात्रियों में करनी चाहिए।किसी खास अंग(मूल,पत्र,फल,त्वकादि) का प्रयोग करना हो तो किसी रविपुष्य,सोमपुष्य का चयन कर लेना चाहिए,जो भद्रादि कुयोग रहित हो।

विशिष्ट मंत्र- ॐ नमः सर्व भूताधिपतये ग्रस-ग्रस शोषय-शोषय भैरवीं चाज्ञायति स्वाहा।

पूर्व संध्या को जलाक्षतादि सहित निमंत्रण देकर आगामी प्रातः पंचोपचार पूजन करके प्रयोज्यांग ग्रहण करें। अंग-ग्रहण करते समय उक्त

मंत्र का निरंतर मानसिक जप चलता रहे।घर लाकर विधिवत- पीत या रक्त नवीन वस्त्र का आसन देकर पुनः पंचोपचार पूजन करे,तदुपरान्त श्री शिवपंचाक्षर मंत्र तथा सोम पंचाक्षर मंत्रों का कम से कम ग्यारह-ग्यारह माला जप करें।पूरे वृक्ष की साधना करनी हो तो उक्त मंत्रों के जप के बाद लागातार चौआलिस दिनों तक देवी नवार्ण मंत्र का जप दशांश होमादि सहित सम्पन्न करना चाहिए।इस प्रकार सिद्ध विभीतक के ऊपर आरुढ़ होकर,अथवा तल में आसन लगाकर यथेष्ट योगिनी मंत्र का जप करना चाहिए।योगिनी साधना के सम्बन्ध में विशेष बातें फिर कभी किसी अन्य पुस्तक में करने का प्रयास करूंगा।

प्रयोगः-

- Ψ साधित बहेड़ा का पत्ता और जड़ भण्डार,तिजोरी,बक्से आदि में रखने से धन-धान्य की वृद्धि होती है। यह निश्चित प्रभावशाली और सरल प्रयोग है।पांच-सात-नौ पत्ते और थोड़े से मूल भाग पर साधना करके यह प्रयोग किया जा सकता है।
- Ψ उदर-विकारों- मन्दाग्नि,अपच,उदर-शूल,कोष्टवद्धता, आदि के निवारण में साधित बहेड़ा-मूल का चमत्कारिक लाभ लिया जा सकता है।प्रयोग के लिए अन्य औषधियों की तरह इसे खाना नहीं है,बल्कि खाते समय पवित्र आसन(पीढ़ा,कम्बल आदि)पर बैठ जाये और पुरूष अपनी दायीं जंघा के नीचे,तथा स्त्रियां अपनी वायीं जंघा के नीचे इसके साधित मूल को दबा कर बैठ जायें।भोजन के बाद मूल और आसन दोनों को मर्यादा पूर्वक उठाकर रख दें।पुनः भोजन के वक्त उसका उसी प्रकार उपयोग करें।ऐसा कम से कम सात-नौ या ग्यारह दिन लागातार करना

चाहिए।विशेष परिस्थिति में इक्कीश दिन तक भी करना पड़ सकता है।तन्त्र-प्रभाव से भोजन सुपाच्य हो जाता है।प्रभावित अंग की क्रिया-विकृति में शनैः-शनैः सुधार हो जाता है।

Ψ धातु क्षीणता के रोगी ताजे बहेड़ा के फलों को एकत्र करें अथवा लाचारी में बाजार से खरीद कर ही लायें।उक्त विधि से साधना सम्पन्न करें।अब तोड़कर फल के त्वक भाग को अलग करलें,और चूर्ण
या क्वाथ के रुप में उसका प्रयोग इक्कीश दिनों तक करें।साथ ही कठोर बीज को भी पुनः फोड़ कर अन्दर की मज्जा को बाहर निकालें।चार-छः मज्जा नित्य प्रातः-सायं गोदुग्ध के साथ सेवन करें।अद्भुत लाभ होगा।

-----()()()-----

२०. लक्ष्मणा

लक्ष्मणा एक सुपरिचित वनस्पति है,जो कटेरी की तरह होता है।डाल,पत्ते,फल सभी वैसे ही होते है।अन्तर सिर्फ फूलों के रंग का है- इसके फूल नीले के वजाय सफेद होते हैं।रेगनी,कंटकारी आदि इसके अन्य प्रचलित नाम हैं।आयुर्वेद में कफ-पित्त शामक औषधियों में इसका उपयोग होता है।आकार भिन्नता से इसके दो प्रकार हैं- बड़ी कटेरी और छोटी कटेरी।कुछ लोगों का विचार है कि लक्ष्मणा इन चारों से भिन्न,विलकुल ही अलग प्रकार की वनस्पति है।आयुर्वेद का प्रसिद्ध औषध- फलघृत का यह विशिष्ट घटक है।

तान्त्रिक प्रयोग हेतु लक्ष्मणा को ग्रहण करने का विधान अन्य वनस्पतियों की तुलना में थोड़ा निराला है- रविपुष्य(विशेष कर

सूर्य के पुष्य नक्षत्र में पड़ने वाले रविवार) योग की पूर्व संध्या को विधिवत जलाक्षतादि से आमंत्रण दे आना चाहिए।फिर अगले दिन(मुहूर्त वाले दिन) ब्रह्ममुहूर्त में अन्य पूजन सामग्रियों के साथ एक सहयोगी और खनन-उपकरण लेकर उस स्थान पर पहुंचे।स्वाभाविक है कि उस वक्त अन्धेरा रहेगा,अतः साथ में रौशनी का साधन भी जरूरी है।पौधे के समीप पहुंच कर पूजन सामग्री पास में रख दें,और स्वयं विलकुल निर्वस्त्र हो जाए।इसी अवस्था में पौधे की पंचोपचार पूजा करें।

पूजन-मन्त्र- ॐ नमो भगवते रुद्राय सर्ववदनी त्रैलोक्य कास्त्तरणी ह्रूँ फट् स्वाहा ।

इस मंत्र को बोलते हुए सभी सामग्री अर्पित करें,और पूजा समाप्ति के पश्चात् मम कार्यं सिद्धिं कुरु- कुरु स्वाहा- कहते हुए पौधे को समूल ऊखाड़ लें। घर लाकर अन्य वनस्पतियों की तरह ही इसे भी शुद्ध जल,गंगाजल आदि से शोधन करके,नवीन पीले वस्त्र के आसन पर रख कर प्राण-प्रतिष्ठा पूर्वक पंचोपचार पूजन करें।पुनः पूर्वोक्त मंत्र का सहस्र जप करें,दशांश होमादि विधान सहित।इस प्रकार प्रयोग के योग्य सिद्ध लक्ष्मणा को सुरक्षित रख दें।

इस वनस्पति को दीपावली,नवरात्रि आदि विशेष अवसरों पर भी सिद्ध किया जा सकता है।मंत्र और विधान समान ही होगा।हां,विशेषकर दीपावली के अवसर पर सिद्ध किये जाने वाले लक्ष्मणा का प्रयोग काफी महत्त्वपूर्ण होता है। दीपावली की रात्रि में उक्त विधि से पूर्व साधित लक्ष्मणा को पुनः एक अन्य मंत्र से जागृत करना चाहिए- देवी नवार्ण के तीसरे बीज से।इस मंत्र का

कम से कम तीन हजार या अधिक से अधिक नौ हजार जप कर लें।इस क्रिया से उसमें अद्‌भुत शक्ति आजाती है।

तान्त्रिक प्रयोग-

- ❖ साधित लक्ष्मणा का पंचाग जल में पीस कर गोलियां बना लें।इन गोलियों का प्रयोग आकर्षण और वशीकरण के लिए किया जा सकता है।प्रयोग के समय अमुकं आकर्षय आकर्षय को तीसरे बीज से सम्पुटित कर सात बार उच्चारण करते हुए एक गोली अभीष्ट व्यक्ति को खिला देना चाहिए।
- ❖ सन्तान की इच्छा वाली स्त्री मासिक स्नान के पांचवें दिन से प्रारम्भ कर इक्कीश दिन तक नित्य प्रातः-सायं दो-दो गोली उक्त लक्ष्मणा वटी को गोदुग्ध के साथ सेवन करे तो निश्चित ही सुन्दर,सुपुष्ट सन्तान की प्राप्ति होती है।हां यदि पुरुष में भी कोई कमी हो तो उसकी चिकित्सा भी अनिवार्य है।उसे भी यही गोली चौआलिस दिनों तक सेवन कराना चाहिए,साथ ही रोग-लक्षणानुसार इस पुस्तक के अन्य प्रसंग में बतलायी गई तन्त्रौषधियों का प्रयोग भी करना चाहिए।
- ❖ साधित लक्ष्मणा-पंचांग के साथ अन्य विशिष्ट वनस्पतियों के मिश्रण से घृतपाक विधान से फलघृत तैयार कर सेवन करने से विभिन्न वन्ध्यत्व दोषों का निवारण होकर सन्तान-सुख प्राप्त होता है।फलघृत की सामग्री-सूची भैषज्यसंग्रग में देखना चाहिए।बाजार में उपलब्ध फलघृत

खरीद कर उसे भी नवार्ण एवं मन्मथ मंत्र से साधित कर प्रयोग किया जा सकता है।

- स्वस्थ-सामान्य स्त्री-पुरुष भी साधित लक्ष्मणा पंचांग को चूर्ण या वटी रुप में उक्त विधि से सेवन कर अत्यधिक कामानन्द की प्राप्ति कर सकते हैं।सहवास-सुख में वृद्धि(स्तम्भन,वाजीकरण)
लक्ष्मणा का विशिष्ट गुण है।

----000---

२१.शिवलिंगी

शिवलिंगी- एक यथा नाम तथा रुप वनस्पति है।एक समय था जब इसके लिए मुझे बहुत भटकना पड़ा था।काफी खोज के बाद कहीं से इसके कुछ बीज उपलब्ध हुए।बीज क्या,मानों साक्षात शिव ही विराजमान हों अर्घ्य में।जी हां, शिवलिंगी के सुपुष्ट बीज को गौर से देखें तो पायेंगे कि प्रत्येक अर्घ्यनुमा बीज एक छोटा सा शिवलिंग समाहित किये हुए हैं अपने अन्दर।बरसात के प्रारम्भ में इन बीजों में अंकुरण होता है,और जाड़ा आते-आते त्रिकोल सी पत्तियां और बेलें घेर लेती हैं आसपास के पौधों को।इसका विस्तार बड़ा ही तीव्र होता है।बड़े मटर की तरह हरे-हरे,किन्तु सफेद धारीदार फल काफी मात्रा में लगते हैं- गुच्छे के गुच्छे।फाल्गुन आते-आते ये फल परिपक्व होकर किंचित लालिमायुक्त हो जाते हैं,और फिर लाली इतनी गहरी हो जाती है कि कालिमा का भ्रम होता है।सफेद धारियों की सुन्दरता और निखर आती है। एक परिपक्व फल में आठ-दस बीज प्राप्त हो जाते हैं।लाल गुद्दों के बीच काले बीज बड़े ही सुन्दर लगते हैं।चुंकि इसके फल का

स्वाद थोड़ा तीता होता है,इस कारण पक्षियों से फल की वरवादी भी नहीं होती।पके फलों को तोड़ कर सुखा लेते हैं- सुखाने से पहले उन्हें फोड़-मसल देना जरुरी होता है,अन्यथा पूरे फल को सूखने में काफी समय लगता है।उपरी तुष भाग को हटाकर स्वच्छ बीजों का संग्रह कर लिया जाता है।वर्तमान समय में इन बीजों का बाजार मूल्य पांच सौ से हजार रुपये प्रति किलोग्राम है।किन्तु इसकी खेती विलकुल आसान है।कहीं भी व्यर्थ सी जमीन पर मौसम में बीज वो दें।विना श्रम के लता तैयार हो जायेगी।

शिवलिगीं को फाल्गुन मास की महाशिवरात्रि(कृष्ण त्रयोदशी-चतुर्दशी) को पूर्व संध्या के विधिवत निमंत्रण पूर्वक ग्रहण करना चाहिए।धो-पोंछ साफ करके लाल या पीले नवीन वस्त्र का आसन देकर अन्य वनस्पतियों में बतलाये गये विधान से पंचोपचार पूजन करके श्री शिवपंचाक्षर एवं देवी नवार्ण तथा कामदेव मंत्रों का कम से कम एक-एक हजार जर कर लेना चाहिए।इस प्रकार उस दिन की क्रिया पूर्ण हो गयी।आगे प्रयोग के समय पुनः संकल्प पूर्वक(जिसे उपयोग के लिए देना हो उसके नाम सहित) उक्त तीनों मंत्रों का क्रमशः एक-एक हजार जप करना चाहिए,तभी सम्यक् रुप से प्रयोग के योग्य होता है।

शिवलिंगी का सर्वाधिक प्रयोग सन्तानेच्छु के लिए है।इसके सेवन से हर प्रकार का बन्ध्यत्त्व दोष नष्ट होकर सुन्दर-सुपुष्ट सन्तान की प्राप्ति होती है।सन्तान की कामना वाली स्त्री को उक्त प्रकार से अभिमंत्रित शिवलिंगी बीज यथेष्ट मात्रा में दे दें।ऋतु स्नान के पांचवे दिन से प्रारम्भ कर पुनः ऋतु आने तक(लगभग सताइस दिनों तक)सेवन कराना चाहिए- ताजो गोदुग्ध के साथ सात-सात दाने नित्य प्रातः-सायं।सेवन की इस क्रिया को पुनः अगले महीने भी उसी तरह जारी रखे।इस प्रकार कम से कम छः महीने यह

क्रम जारी रहे।विशेष लाभ के लिए इसके साथ इसी विधि से साधित जीयापोता(जिऊत्पुत्रिका)बीज को भी चूर्ण कर मिला लेना चाहिए।

शिवलिंगी के बीजों को पवित्रता पूर्वक घर में रख कर नित्य पूजन भी किया जा सकता है।इससे शिव की प्रसन्नता प्राप्त होकर सर्वसुख-प्राप्ति होती है।एक बार का संग्रहित बीज दो-तीन बर्षों तक उपयोगी हो सकता है।आगे उन्हें विसर्जित कर पुनः नवीन बीज ग्रहण कर लेना चाहिए।

------()()()-------

चतुर्थ परिच्छेद

किंचित अन्य- स्थावर-जांगम द्रव्यों का तान्त्रिक प्रयोग

१. शंख

शंख कोई वानस्पतिक द्रव्य नहीं,प्रत्युत जांगम द्रव्य है।इसकी उत्पति "शंख" नामक एक कठोर काय समुद्री जीव से होती है।वस्तुतः यह उसका ऊपरी कवच है,या कहें – उपयोग में आनेवाला शंख- शंख नामक कीट का आवास है;किन्तु वैसा आवास जैसा कि आत्मा का आवास यह शरीर है। कछुआ,घोंघा,सीपी, कौड़ी आदि जीव इसी वर्ग में आते हैं,और सब शंख की भांति ही अपना कवच छोड़ते हैं।आकार भेद से शंख जौ-गेहूं के दाने से लेकर तीन-चार सौ वर्गईंच तक के पाये जाते हैं।साथ ही गोलाकार,लम्बोतरा,चपटा आदि कई आकारों में दीख पड़ता है। वर्ण-भेद से यह चार प्रकार का होता है- विलकुल सफेद,किंचित लालिमा युक्त, पीताभ और श्याम आभा वाला(विलकुल काला नहीं)।शंख के रंग-भेद को सामाजिक वर्ण-व्यवस्था से भी जोड़ कर देखा जाता है। क्रमशः, ब्राह्मणों के लिए श्वेत वर्णी शंख को उत्तम माना जाता है;क्षत्रियों के लिए रक्त वर्ण, वैश्यों के लिए पीत,एवं शूद्रों के लिए श्याम आभावाला शंख उपयुक्त है।

पौराणिक प्रसंगानुसार शंख और लक्ष्मी दोनों ही समुद्र से उत्पन्न हुए हैं,अतः इन्हें भाई-बहन कहा गया है।शंख भगवान बिष्णु की पूजा में अनिवार्य है।इससे उनकी प्रिया- लक्ष्मी अति प्रसन्न होती हैं।***वासामि पद्मोत्पल शंख मध्ये,वसामि चन्द्रे च महेश्वरे च.....*** लक्ष्मी के पौराणिक

वचन हैं।शंख की स्वतन्त्र रुप से पूजा भी की जाती है। भेदाभेद वर्णन क्रम में तो यहां तक कहा गया है कि शंख और विष्णु में अभेद है।

विभिन्न पूजाओं में शंखध्वनि का बड़ा ही महत्त्व है।वैसे एक पौराणिक गाथानुसार शिव-मन्दिर में शंखध्वनि वर्जित है,ठीक वैसे ही जैसे कि देवी मन्दिर में घंटा वर्जित है।किन्तु आजकल अज्ञानता वश इन दोनों बातों का उलंघन होता हुआ देखा जाता है।शंख शुभारम्भ और विजय का प्रतीक है।यही कारण है कि किसी भी उत्सव,पर्व,पूजा-पाठ,हवन,प्रयाण,आगमन,युद्धारम्भ,विवाह,राज्याभिषेक आदि अवसरों पर अनिवार्य रुप से शंखध्वनि की जाती है।शंख-घोष से वायुमंडल की शुद्धि होती है।दैविक और भौतिक वाधाओं का शमन होता है।शंख ओज,तेज,साहस,पराक्रम,चैतन्यता,आशा,स्फूर्ति आदि की वृद्धि करता है।कोई अज्ञानी(जिज्ञासु) यह प्रश्न उठा सकते हैं कि शंख तो एक समुद्री कीट की अस्थि है,फिर पूजादि पवित्र कर्मों में इसे कैसे रखा जाय?

ज्ञात्व्य है कि शास्त्रों में कई ऐसी वस्तुओं को पवित्र ही नहीं अति पावेत्र की श्रेणी में रखा गया है, भले ही वो जांगम(जीव-जन्तुओं से प्राप्त)क्यों न हों।दूध,दही,घी,मक्खन,मधु,मृगमद(कस्तूरी),गजमद,गोरोचन, मृगचर्म, गोचर्म, व्याघ्रचर्म,हस्तिचर्म,हस्तिदंत,मोती,मूंगा,गजमुक्ता,मयूरपिच्छ आदि अनेक ऐसे पदार्थ हैं, जिन्हें शास्त्रों ने मर्यादित किया है।शर्त सिर्फ यही है कि इन्हें स्वाभाविक रुप से प्राप्त किया जाय।यानी जीवों की हत्या कर या कृत्रिम विधि से नहीं।जैसा कि आजकल धनलोलुप व्यापारी किया करते हैं।ग्वाला वछड़े को जान-बूझ कर मार देता है(दूध वचाने के लोभ से)और हार्मोनिक इन्जेक्शन देकर दूध निकालता है।इस प्रकार निकाला

गया दूध कदापि ग्रहण योग्य नहीं है।गाय को मार कर गोपित्त प्राप्त किया जाय- यह कतयी ग्राह्य नहीं। मरी हुयी गाय से प्राप्त गोपित्त,गोचर्म सर्वदा पवित्र है।इसी भांति सभी जांगम द्रव्यों के साथ नियम लागू होता है। किन्तु कुछ अज्ञानी कुतार्किक एक ओर दूध को रक्त तुल्य मानते हैं तो दूसरी ओर अण्डे को मांसाहार की श्रेणी से मुक्त करने का तर्क देते हैं।

सच्चाई यह है कि शंख सर्वथा अति पवित्र है- कुछ खास वर्जनाओं को छोड़कर।यथा-

- किसी कारण से शंख यदि टूट-फूट गया हो तो उसे त्याग देना चाहिए।
- शंख में दरार आ गयी हो तो वह ग्रहण-योग्य नहीं है।
- बजाते समय असावधानी से यदि हाथ से छूट कर गिर जाय(खंडित ना भी हो,तो भी)उसे त्याग देना चाहिए।
- रुपाकृति दूषित हो तो उसे ग्रहण न करें।
- निप्रभ(आभाहीन) शंख ग्राह्य नहीं है।
- कीड़ों से क्षतिग्रस्त शंख ग्राह्य नहीं है।
- किसी प्रकार का दाग-धब्बा वाला शंख भी शुभ कार्यों में वर्जित है।
- शंख के शिखर सुरक्षित हों तभी ग्रहण करें।भग्न शिखर शंख त्याज्य है।
- शास्त्र की मान्यता है कि दो या तीन शंख एक घर में न रखे जायें।शेष संख्या वर्जित नहीं है।यानी एक,चार,और उससे आगे की संख्यायें ग्राह्य हैं।यह नियम किसी भी अन्यान्य देव-प्रतिमाओं – शिव, गणेश, शालग्राम आदि के लिए भी लागू होता है।

संरचना के विचार से शंख मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं- १.वामावर्त,और २. दक्षिणावर्त। शंख में जो आन्तरिक आवर्तन और मुख होता है, उसी के आधार पर यह विभाजन किया गया है।आमतौर पर प्राप्त शंख को सीधे नोक भाग को आगे कर हाथ में लेंगे तो पायेंगे कि उसका मुख आपकी वांयी ओर है।अन्दर के आवर्तन भी वांयी ओर ही होंगे।कुछ विशिष्ट प्रकार के शंख में ये दोनों बातें विलकुल विपरीत होती हैं- यानी दायीं ओर होती हैं। इन्हें ही दक्षिणावर्त शंख कहा जाता है।ये शंख की अति दुर्लभ प्रजाति है।रामेश्वरम्,और कन्याकुमारी में यदाकदा असली दक्षिणावर्त शंख सौभाग्य से प्राप्त हो जाता है।सामान्यतः यह श्वेत वर्ण का ही होता है, किन्तु गौर से देखने पर इन पर लाल-पीली या काली आभयुक्त धारियां नजर आयेंगी।शुद्ध श्वेत-दूधिया वर्ण- जिस पर अन्य आभायें न हों- सर्वोत्तम माना जाता है।वस्तुतः यह बहुत ही दुर्लभ है। वैसे आजकल टीवी प्रचार का युग है। वस्तुओं की महत्ता और दुर्लभता का लाभ धनलोलुप व्यक्ति पहले से अधिक उठाने लगे हैं।अनेक महंगी और दुर्लभ वस्तुओं का नकली निर्माण धड़ल्ले से हो रहा है।नकली दक्षिणावर्त शंख भी बाजार में प्रचुर संख्या में मिल जायेगा। अतः सावधान- ठगी के शिकार न हों।

शंख के प्रकारों में एक हीरा शंख भी है।यह अति दुर्लभ है।हीरे जैसी इन्द्रधनुषी किरणें निकलती रहती हैं,जिस कारण इसे यह नाम दिया गया है।यह भीतर से ठोस होता है,यानी न तो इसमें जल भर सकते हैं, और न बजा सकते हैं।मूल शंख जीव के मृत(नष्ट)हो जाने पर इसके उदर के रिक्त भाग में कुछ जीवाश्म आ बैठते हैं,जिसके कारण यह अपेक्षाकृत वजनी भी हो जाता है।देखने में ऐसा लगेगा मानों शंख के उदर में मिश्री का ढेला आ फंसा है।यह स्थिति प्राकृतिक रुप से लम्बे समय में होता है।

शंख का एक और प्रकार है- मोती-शंख।यह सर्वांग सप्तवर्णी आभा विखेरते रहता है।इसकी आकृति भी सामान्य शंख से थोड़ी भिन्न होती है- मुंह की ओर अति संकीर्ण,और पूंछ की ओर क्रमशः गोलाई में विस्तृत होकर लगभग छत्राकार और गोल होता है।मजबूत और भारयुक्त भी होता है।इसे बजाया भी जा सकता है। देखने में यह बड़ा मनोहर लगता है।

किसी भी दुर्लभ वस्तु की प्राप्ति हेतु शुभ मुहूर्त की बात बेमानी है- वस्तु का प्राप्त हो जाना ही शुभत्व- सूचक है।दक्षिणावर्त शंख भी उसी तरह है।प्राप्त हो गया- यही सौभाग्य है।हां,घर लाकर स्थापित-पूजित करने के लिए भद्रादि रहित रविपुष्य योग का विचार अवश्य करेंगे,जैसा कि किसी भी वस्तु के तांत्रिक प्रयोग के लिए किया जाता है।सम्भव हो तो चांदी के पात्र में,या फिर तांवा,पीतल जो भी पात्र सम्भव हो उसमें नवीन वस्त्र बिछाकर,धो-पोंछ कर दक्षिणावर्त शंख(या अन्य शंख)को स्थापित कर विधिवत पंचोपचार पूजन करें।

पूजन के लिए निम्नांकित मंत्रों में किसी एक का चुनाव कर सकते हैं-

- ऊँ श्री लक्ष्मी सहोदराय नमः
- ऊँ श्री पयोनिधि जाताय नमः
- ऊँ श्री दक्षिणावर्त शंखाय नमः
- ऊँ श्रीं ह्रीं क्लीं श्रीधर करस्थायपयोनिधि जाताय,लक्ष्मी सहोदराय,दक्षिणावर्त शंखाय नमः
- ऊँ ह्रीं श्रीधर करस्थायलक्ष्मीप्रियायं,दक्षिणावर्त शंखाय मम चिन्तित फलं प्राप्त्यर्थाय नमः

चयनित मंत्र से पंचोपचार/षोडशोपचार पूजन सम्पन्न करने के पश्चात् उक्त मंत्र का कम से कम सोलह माला जप भी अवश्य करें- विधिवत दशांश होमादि कर्म सहित।इसके बाद ब्राह्मण एवं भिक्षु भोजन यथाशक्ति

दक्षिणा सहित सम्पन्न करके,पूजित शंख को आदर पूर्वक स्थायी स्थान पर सुरक्षित रख दें,और नित्य यथासम्भव पंचोपचार पूजन और एक माला जप करते रहें।

वैसे यह नियम किसी भी ग्राह्य शंख के साथ लागू होता है,विशेष कर दक्षिणावर्त के बारे में कहना ही क्या? एक और बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी शंख को खासकर जब सीधी अवस्था में रखते हों तो रिक्त न रहे,बल्कि जलपूरित रहे,और उसके लिए शंखासन भी अनिवार्य है।क्यों कि शंखासन पर उसे जलपूरित सुरक्षित रखा जा सकता है।पीतल या तांबे के बने-बनाये शंखासन पूजा सामग्री या बरतन की दुकानों में मिल जाते हैं।खाली रहने पर उल्टा(औंधे मुंह) रख सकते हैं।किन्तु सही प्रभाव के लिए सीधे मुंह और जलपूरित रहना अनिवार्य है।

- पूजित दक्षिणावर्त शंख जहां कहीं भी रहेगा- अक्षय लक्ष्मी का वास होगा।
- किसी भी पूजित शंख में जल भरकर व्यक्ति,वस्तु,स्थान पर छिड़क देने मात्र से दुर्भाग्य, अभिशाप,अभिचार,और दुर्ग्रह के प्रभाव समाप्त हो जाते हैं।
- ब्रह्म-हत्यादि महापातक दोषों से मुक्ति मिलती है- यदि दक्षिणावर्त शंख का जलपान कर लिया जाय।अभाव में सामान्य(वामावर्त शंख-जल का प्रयोग भी श्रीविष्णुमंत्र से अभिमंत्रित करके कुछ दिन तक करना चाहिए।
- शंख जल-पान से जादू-टोना-नजरदोष आदि का निवारण होता है।बच्चों के लिए यह बड़ा ही लाभदायक प्रयोग है।प्रयोग कर्ता की साधना में यदि गायत्री समाहित हो तो

उसी मंत्र का प्रयोग करना श्रेयष्कर है।अन्य इष्ट मंत्र(नवार्णादि) का प्रयोग भी किया जा सकता है।

- दरिद्रता निवारण के लिए अभाव में किसी भी उपलब्ध शंख का नियमित पूजन किया जा सकता है।समय लगेगा,किन्तु लाभ अवश्य होगा।दक्षिणावर्त की तो वात ही और है।
- शंख को हाथ में लेकर अभीष्ट शत्रु का नामोच्चारण करते हुए संकल्प पूर्वक जोर से बजाया जाय तो शत्रु की गति-मति का स्तम्भन होता है।
- शंख को हाथ में लेकर अभीष्ट संकल्प करते हुए वादन करने से हिंसक जीव-जन्तुओं (व्याघ्र, सर्पादि) से रक्षा होती है।
- रात्रि में सोने से पूर्व संकल्प पूर्वक शंख-ध्वनि की जाय(पांच-सात बार)तो चोर-डाकू-लुटेरों की गति-मति का भी स्तम्भन होता है।
- जलपूरित शंख को हाथ में लेकर संकल्प पूर्वक किसी बालक को नियमित रुप से थोड़े दिनों तक पिलाया जाय तो स्वरमंडल का शोधन होकर बालक शीघ्र बोलने लगता है।यह प्रयोग जन्मजात स्वर-विकृति में भी लाभदायक है।मैंने इस प्रयोग को कई बार किया है,और आशातीत सफलता भी मिली है।
- उक्त विधि से दूध भी नियमित दिया जा सकता है(जल और दूध वैकल्पिक क्रम से),किन्तु यह प्रयोग करने से पूर्व बालक की कुण्डली में चन्द्रमा की स्थिति का विचार

अवश्य कर लेना चाहिए- कहीं चन्द्रमा नीच राशि,अथवा शत्रुभाव गत तो नहीं हैं,अन्यथा लाभ के वजाय हानि हो सकती है।

- आयुर्वेद में शंख का भस्म बना कर अत्यल्प मात्रा में सेवन करने का विधान है।शंख-भस्म या शंख-वटी के नाम से दवा की दुकान से इसे प्राप्त किया जा सकता है।अनेक उदर रोगों में इसका प्रयोग होता है।बाजार से खरीद कर उक्त औषधी को *ॐ श्री महावृकोदराय नमः* मंत्र से अभिमंत्रित कर सेवन करने से जटिल उदर रोगों में चमत्कारिक लाभ होता है।

------()()()------

२.गोरोचन

जांगम द्रव्यों में गोरोचन आज के जमाने में एक दुर्लभ वस्तु हो गया है।वैसे नकली गोरोचन पूजा-पाठ की दुकानों में भरे पड़े हैं।छोटी-छोटी प्लास्टिक की शीशियों में उपलब्ध होने वाले पीले से पदार्थ को गोरोचन से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है।

गोरोचन मरी हुयी गाय के शरीर से प्राप्त होता है।कुछ विद्वान का मत है कि यह गाय के मस्तक में पाया जाता है,किन्तु वस्तुतः इसका नाम "गोपित्त" है,यानी कि गाय का पित्त। शरीर में सर्वव्यापी पित्त का मूल स्थान पित्ताशय(Gallbladar) होता है।पित्ताशय की पथरी आजकल की

आम बीमारी जैसी है।मनुष्यों में इसे शल्यक्रिया द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है।गाय की इसी बीमारी से गोरोचन प्राप्त होता है।वैसे स्वस्थ गाय में भी किंचित मात्रा में पित्त तो होगा ही- उसके पित्ताशय में,जिसे आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। मस्तक के एक खास भाग पर भी यह पदार्थ- गोल,चपटे,तिकोने,लम्बे,चौकोर- विभिन्न आकारों में एकत्र हो जाता है,जिसे चीर कर निकाला जा सकता है।हल्की लालिमायुक्त पीले रंग का यह एक अति सुगन्धित पदार्थ है,जो मोम की तरह जमा हुआ सा होता है।ताजी अवस्था में लस्सेदार,और सूख जाने पर कड़ा- कंकड़ जैसा हो जाता है।

गोपित्त,शिवा,मंगला,मेध्या,भूत-निवारिणी,वन्द्य आदि इसके अनेक नाम हैं,किन्तु सर्वाधिक प्रचलित नाम गोरोचन ही है।शेष नाम साहित्यिक रुप से गुणों पर आधारित हैं।गाय का पित्त- गोपित्त।शिवा- कल्याणकारी।मंगला- मंगलकारी।मेध्या- मेधाशक्ति बढ़ाने वाला।भूत-निवारिणी- भूत से त्राण दिलाने वाला।वन्द्य- पूजादि अति वन्द्य- आदरणीय।

आयुर्वेद और तन्त्र शास्त्र में इसका विशद प्रयोग-वर्णन है।अनेक औषधियों में इसका प्रयोग होता है। यन्त्र-लेखन,तन्त्र-साधना,तथा सामान्य पूजा में भी अष्टगन्ध-चन्दन-निर्माण में गोरोचन की अहम् भूमिका है। हालाकि विभिन्न देवताओं के लिए अलग-अलग प्रकार के अष्टगन्ध होते हैं,किन्तु गोरोचन का प्रयोग लगभग प्रत्येक अष्टगन्ध में विहित है।

गोरोचन को रविपुष्य योग में साधित करना चाहिए।सुविधानुसार कभी भी प्राप्त हो जाय,किन्तु साधना हेतु शुद्ध योग की अनिवार्यता है।साधना अति सरल है- विहित योग में सोने या चांदी,अभाव में तांबे के

ताबीज में शुद्ध गोरोचन को भर कर यथोपलब्ध पंचोपचार/षोडशोपचार पूजन करें।तदुपरान्त अपने इष्टदेव का सहस्र जप करें,साथ ही शिव / शिवा के मंत्रो का भी एक-एक हजार जप अवश्य कर लें।इस प्रकार साधित गोरोचन युक्त ताबीज को धारण करने मात्र से ही सभी मनोरथ पूरे होते है- षटकर्म-दशकर्म आदि सहज ही सम्पन्न होते हैं।गोरोचन में अद्भुत कार्य क्षमता है।सामान्य मसी-लिखित यन्त्र की तुलना में असली गोरोचन द्वारा तैयार की गयी मसी से कोई भी यन्त्र-लेखन का आनन्द ही कुछ और है।ध्यातव्य है कि कर्म शुद्धि,भाव शुद्धि को साथ द्रव्य शुद्धि भी अनिवार्य है।

गोरोचन के कतिपय तान्त्रिक प्रयोग-

- साधित गोरोचन युक्त ताबीज को घर के किसी पवित्र स्थान में रख दें,और नियमित रुप से,देव-प्रतिमा की तरह उसकी पूजा-अर्चना करते रहें।इससे समस्त वास्तु दोषों का निवारण होकर घर में सुख-शान्ति-समृद्धि आती है।
- नवग्रहों की कृपा और प्रकोप से सभी अवगत हैं।इनक प्रसन्नता हेतु जप-होमादि उपचार किये जाते हैं। किन्तु गोरोचन के प्रयोग से भी इन्हें प्रसन्न किया जा सकता है।साधित गोरोचन को ताबीज रुप में धारण करने, और गोरोचन का नियमित तिलक लगाने से समस्त ग्रहदोष नष्ट होते हैं।
- प्रेतवाधा युक्त व्यक्ति को गुरुपुष्य योग में साधित गोरोचन से भोजपत्र पर सप्तशती का "द्वितीय बीज" लिख कर ताबीज की तरह धारण करा देने से विकट से विकट प्रेतवाधा का भी निवारण हो जाता है।

- मृगी,हिस्टीरिया आदि मानस व्याधियों में गोरोचन(रविपुष्य योग साधित) मिश्रित अष्टगन्ध से नवार्ण मंत्र लिख कर धारण कर देने से काफी लाभ होता है।
- उक्त बीमारियों में गोरोचन को गुलाबजल में थोड़ा घिसकर तीन दिनों तक लागातार तीन-तीन बार पिलाने से अद्भुत लाभ होता है।यह कार्य किसी रवि या मंगलवार से ही प्रारम्भ करना चाहिए।
- षटकर्म के सभी कर्मों में तत् तत् यंत्रों का लेखन गोरोचन मिश्रित मसी से करने से चमत्कारी लाभ होता है।
- धनागम की कामना से गुरुपुष्य योग में विधिवत साधित गोरोचन का चांदी या सोने के कवच में आवेष्ठित कर नित्य पूजा-अर्चना करने से अक्षय लक्ष्मी का वास होता है।
- विभिन्न सौदर्य प्रसाधनों में भी गोरोचन का प्रयोग अति लाभकारी है।हल्दी,मलयागिरी चन्दन,केसर, कपूर,मंजीठ और थोड़ी मात्रा में गोरोचन मिलाकर गुलाबजल में पीसकर तैयार किया गया लेप सौन्दर्य कान्ति में अद्भुत विकास लाता है।इस लेप को चेहरे पर लगाने के बाद घंटे भर अवश्य छोड़ दिया जाय ताकि शरीर की उष्मा से स्वतः सूखे।

-----()()()------

३.श्रृगालश्रृंगी

जांगम द्रव्यों में श्रृगालश्रृंगी एक अद्भुत और अलभ्य पदार्थ है।सियार के सभी पर्यायवाची शब्दों- जम्बुक,गीदड़ आदि से जोड़कर इसके भी पर्याय प्रचलित हैं;किन्तु सियारसिंगी सर्वाधिक प्रचलित नाम है।

आमलोग तो इसके होने पर ही संदेह व्यक्त करते हैं- कुत्ते-सियार के भी कहीं सींग होते हैं? किन्तु तन्त्र शास्त्र का सामान्य ज्ञान रखने वाला भी जानता है कि सियारसिंगी कितना महत्त्वपूर्ण तान्त्रिक वस्तु है। शहरी सभ्यता और पश्चिमीकरण ने नयी पीढ़ी के लिए बहुत सी चीजें अलभ्य बना दी हैं।बहुत सी जानकारियां अब मात्र किताबों तक ही सिमट कर रह गयी हैं,अपना अनुभव और प्रत्यक्ष ज्ञान अति संकीर्ण हो गया है।चांद और मंगल की बातें भले कर लें,जमीनी अनुभव के लिए भी "विकीपीडिया" तलाशना पड़ता है।

बहुत लोगों ने तो सियार देखा भी नहीं होगा।चिड़ियाघर में शेर की तरह इन बेचारों को स्थान भी शायद ही मिला हो,फिर शहरी बच्चे देखें तो कहां? सियार काफी हद तक कुत्ते से मिलता-जुलता प्राणी है,किन्तु कुत्ते से स्वभाव में काफी भिन्न।एक कुत्ता दूसरे कुत्ते को देखकर गुरगुरायेगा,क्यों कि उसमें थोड़ी बादशाहियत है, शेखी है।कुत्ता बहुत समूह में रहना पसन्द नहीं करता,जब कि सियार बिना समूह के रह ही नहीं सकता। उसकी पूरी जीवन-चर्या ही सामूहिक है।देहात से जुड़े लोगों को सियार का समूहगान सुनने का अवसर अवश्य मिला होगा।वन्य-झाड़ियों में मौंद(छोटा खोहनुमा)बनाकर ये रहते हैं।दिन में प्रायः छिपे रहते हैं,और शाम होते ही बाहर निकल कर "हुआ...हुआ" का कर्कश कोलाहल शुरु कर देते हैं।सियारों के इस समूह में ही एक विशेष प्रकार का नर सियार होता जो सामान्य सियारों से थोड़ा हट्ठा-कट्ठा होता है।अपने समूह में इसकी पहचान मुखिया की तरह होती है,आहार-विहार-व्यवहार भी वैसा ही।फलतः डील-डौल में विशिष्ट होना स्वाभाविक है।अन्य सियारों की तुलना में यह थोड़ा आलसी भी होता है- बैठे भोजन मिल जाय तो आलसी होने में आश्चर्य ही क्या?खास कर रात्रि के प्रथम प्रहर में यह अपने मौंद से निकलता

है।विशेष रुप से कर्कश संकेत-ध्वनि करता है,जिसे सुनते ही आसपास के मांदों में छिपे अन्य सियार भी बाहर आ जाते हैं,और थोड़ी देर तक सामूहिक गान करते हैं- वस्तुतः भोजन की तलाश में निकलने की उनकी योजना, और आह्वानगीत है यह। सामूहिक गायन समाप्त होने के बाद सभी सियार अपने-अपने गन्तव्य पर दो-चार की टोली में निकल पड़ते हैं,किन्तु यह महन्थ(मुखिया)यथास्थान पूर्ववत हुँकार भरते ही रह जाता है।यहां तक कि प्रायः मूर्छित होकर गिर पड़ता है।

इसी महन्थ के सिर पर (दोनों कानों के बीच) एक विशिष्ट जटा सी होती है,जिसे सियारसिंगी कहते हैं। गोल गांठ को ठीक से टटोलने पर उसमें एक छोटी कील जैसी नोक मिलेगी,जो असलियत की पहचान है। भेंड़-बकरे की नाभी भी कुछ-कुछ वैसी ही होती है,पर उसके अन्दर यह नोकदार भाग नहीं होता।जानकार शिकारी वैसे समय में घात लगाये बैठे रहते हैं- पास के झुरमुटों में कि कब वह मूर्छित हो।जैसे ही मौका मिलता है,झटके से उसकी जटा उखाड़ लेते हैं।चारों ओर से रोयें से घिरा गहरे भूरे (कुछ छींटेदार) रंग का,करीब एक ईंच व्यास का गोल गांठ – देखने में बड़ा ही सुन्दर लगता है।एक सींग का वजन करीब पच्चीस से पचास ग्राम तक हो सकता है।तान्त्रिक सामग्री बेचने वाले मनमाने कीमत में इसे बेचते हैं।वैसे पांच सौ रुपये तक भी असली सियारसिंगी मिल जाय तो लेने में कोई हर्ज नहीं।ध्यातव्य है कि ठगी के बाजार में सौ-पचास रुपये में भी नकली सियारसिंगी काफी मात्रा में मिल जायेगा।रोयें,रेशे,वजन, सब कुछ बिलकुल असली जैसा होगा,असली वाला दुर्गन्ध भी होगा,सुगन्ध भी।वस्तुतः सियार की चमड़ी में लपेट कर सुलेसन से गांठदार बनाया हुआ, मिट्टी-पत्थर भरा होगा।कस्तूरी और सियारसिंगी के नाम से आसानी

से बाजार में बिक जाता है।सच्चाई ये है कि कस्तूरी तो और भी दुर्लभ वस्तु है,जो मूलतः, मृग की नाभि से प्राप्त होता है।अतः धोखे से सावधान।

असली सियारसिगीं जब कभी भी प्राप्त हो जाय,उसे सुरक्षित रख दें,और शारदीय नवरात्र की प्रतीक्षा करें।वैसे अन्य नवरात्रों में भी साधा जा सकता है।गंगाजल से सामान्य शोधन करने के पश्चात् नवीन पीले वस्त्र का आसन देकर यथोपलब्ध पंचोपचार/षोडशोपचार पूजन करें।तत्पश्चात् श्रीशिवपंचाक्षर एवं देवी नवार्ण मन्त्रों का कम से कम एक-एक हजार जप कर लें।इतने से ही आपका सियारसिंगी प्रयोग-योग्य हो गया। प्रयोग के नाम पर तो "वहुत और व्यापक" शव्द लगा हुआ है,किन्तु गिनने पर कुछ खास मिलता नहीं।बस एक ही मूल प्रयोग की पुनरावृत्ति होती है।सियारसिंगी बहुत ही शक्ति और प्रभाव वाली वस्तु है।पूजन-साधन के बाद इसे एक डिबिया में(चांदी की हो तो अति उत्तम) सुरक्षित रख देना चाहिये।रखने का तरीका है कि डिबिया में पीला कपड़ा बिछा दे।उसमें सिन्दूर भर दें,और साधित सियारसिंगी को स्थापित करके,पुनः ऊपर से सिन्दूर भर दें।नित्य पंचोपचार पूजन किया करें।पूजन में सिन्दूर अवश्य रहे।इस प्रकार सियारसिगीं सदा जागृत रहेगा।जहां भी रहेगा,वास्तुदोष,ग्रहदोष आदि को स्वयमेव नष्ट करता रहेगा।किसी प्रकार की विघ्न-वाधाओं से सदा रक्षा करता रहेगा।सियारसिंगी की उस डिबिया से निकाल कर थोड़ा सा सिन्दुर अपेक्षित व्यक्ति को अपेक्षित उद्देश्य(तन्त्र के षटकर्म) से दे दिया जाय तो अचूक निशाने की तरह कार्य सिद्ध करेगा- यही इसकी सवसे बड़ी विशेषता है।प्रयोग करते समय चुटकी में उस खास सिन्दूर को लेकर बस पांच बार पूर्व साधित दोनों मंत्रों का मानसिक उच्चारण भर कर लेना है- प्रयोग के उद्देश्य और प्रयुक्त के नामोच्चारण के साथ-साथ। किन्तु ध्यान रहे- इस दुर्निवार वस्तु का दुरुपयोग बिना सोचे

समझे(नादानी और स्वार्थवश) न कर दे,अन्यथा एक ओर तो कार्य-सिद्धि नहीं होगी,और दूसरी ओर वह साधित सियारसिंगी सदा के निर्बीज(शक्तिहीन)हो जायेगी।शक्तिहीनता का पहचान है कि उसमें से अजीब सा दुर्गन्ध निकलने लगेगा- सड़े मांस की तरह,जब कि पहले उस साधित सियारसिंगी में एक आकर्षक मदकारी-मोदकारी सुगन्ध निकला करता था- देवी-मन्दिरों के गर्भगृह जैसा सुगन्ध।अतः सावधान- स्वार्थ के वशीभूत न हों।

प्रसंगवश यहां एक बात और स्पष्ट कर दूं कि सियारसिंगी की साधना में जो सिन्दूर प्रयोग किया जाय वह असली सिन्दूर ही हो,क्यों कि आजकल कृत्रिम पदार्थों से तरह-तरह के सस्ते और महंगे सिन्दूर बनने लगे हैं,जो शोभा की दृष्टि से भले ही महत्वपूर्ण हों,किन्तु पूजा-साधना में उनका कोई महत्व नहीं है।नकली सिन्दूर के प्रयोग से साधना निष्फल होगी- इसमें जरा भी संदेह नहीं।इस सम्बन्ध में इसी पुस्तक में आगे आठवें प्रकरण में- सिन्दुर अध्याय में देख सकते हैं।

------()()()------

४. कस्तूरी

अष्टगन्ध में कस्तूरी सर्वाधिक मूल्यवान और महत्त्वपूर्ण पदार्थ है।आयुर्वेद,कर्मकांड, और तन्त्र में इसका विशेष प्रयोग होता है,किन्तु सुलभ प्राप्य नहीं होने के कारण नकल का व्यापार भी व्यापक है। उपलब्धि-स्रोत के विचार से कस्तूरी तीन प्रकार का होता है-

1. मृगा कस्तूरी- जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है- मृग के शरीर से प्राप्त होने वाला यह एक जांगम द्रव्य है।ध्यातव्य है कि यह सभी मृगों में नहीं पाया जाता,प्रत्युत एक विशेष जाति के मृगों में ही पाया जाता है।उन विशिष्ट मृगों में भी सभी में हो ही- यह आवश्यक नहीं।इस प्रकार, विशिष्ट में भी विशिष्ट की श्रेणी में है।मृग की नाभि में एक विशेष प्रकार का अन्तःस्राव क्रमशः एकत्र होने लगता है,जिसका सुगन्ध धीरे-धीरे बाहर भी प्रस्फुटित होने लगता है।यहां तक कि उस सुगन्ध की अनुभूति उस अभागे मृग को होती तो है,किन्तु उसे यह ज्ञात नहीं होता कि सुगन्ध का स्रोत क्या है।उसे वह कोई बाहरी सुगन्ध समझ कर,उसकी खोज में इधर-उधर अति व्यग्र होकर भटकता है,और, यहां तक कि व्यग्रता में दौड़ लगाते-लगाते मूर्छित होकर गिर पड़ता है।प्रायः उस अवस्था में उसकी मृत्यु भी हो जाती है। "कस्तूरी कुण्डली बसे, मृग ढूढे वन माहीं..." की उक्ति इस बात का उदाहरण है।मृत मृग की नाभि को काट कर उससे वह गांठ प्राप्त कर लिया जाता है।ऊपर के चर्म-कवच को काट कर भीतर भरे कस्तूरी(महीन रवादार पदार्थ)को निकाल लिया जाता है।धन-लोलुप शिकारी(वनजारे) सुगन्ध के आभास से मृगों का टोह लेते रहते हैं,और उन्हें मार कर नाभि निकाल लेते हैं।वैसे भी नाभि-ग्रन्थि के काट लेने पर किसी प्राणी का बचना असम्भव है।आजकल इन मृगों की प्रजाति

लगभग नष्ट की स्थिति में है।भेड़-बकरे की नाभि को काटकर,उसमें कृत्रिम सुगन्धित पदार्थ भर कर धड़ल्ले से नकली कस्तूरी का व्यापार होता है।अनजाने लोग ठगी के शिकार होते हैं,और द्रव्य-शुद्धि के अभाव में साधित क्रिया फलदायी नहीं होने पर साधक के साथ-साथ तन्त्रशास्त्र की भी बदनामी होती है।

2. विडाल कस्तूरी- नाम से ही स्पष्ट है- विडाल(बिल्ली) के शरीर से प्राप्त होने वाला एक जांगम द्रव्य।वस्तुतः नरविलाव के अण्डकोश में एकत्र एक विशेष प्रकार का अन्तःस्राव(शुक्रकीटों के पोषणार्थ निर्मित)घनीभूत होकर एक सुगन्धित पदार्थ का सृजन करता है,जो काफी हद तक मृगाकस्तूरी से गुण-धर्म-साम्य रखता है।यह प्रायः प्रत्येक नरविडाल के अण्डकोश से प्राप्त किया जा सकता है।इस प्रकार प्राप्ति का सबसे सुलभ और सस्ता स्रोत है।अरबी विद्वानों ने इसे **ज़ुन्दवदस्तर** नाम दिया है।हकीमी दवाइयों में इसका काफी उपयोग होता है।तन्त्र शास्त्र में जहां कहीं भी कस्तूरी की चर्चा है, मुख्य रूप से मृगाकस्तूरी ही प्रयुक्त होता है।पवित्र जांगम द्रव्यों में वही मर्यादित है सिर्फ,न कि विडाल कस्तूरी।वैसे तामसिक तन्त्र साधक इसका प्रयोग धड़ल्ले से करते हैं,और लाभ भी होता है,किन्तु सात्विक साधकों के लिए यह सर्वदा वर्जित है।

3. लता कस्तूरी- यह एक वानस्पतिक द्रव्य है,जिसे किंचित गुण-धर्म के कारण कस्तूरी की संज्ञा दी गयी है।वैसे नाम

है लता कस्तूरी,किन्तु इसका पौधा,फूल,पत्तियां सबकुछ भिण्डी(रामतुरई)के समान होता है,बल्कि उससे भी थोड़ा बड़ा ही।फल की बनावट भी भिण्डी जैसी ही होती होती है,परन्तु विलकुल ठिगना ही रह जाता है-लम्बाई में विकास न होकर,सिर्फ मोटाई में विकास होता है,और फल लगने के दो-चार दिनों में ही पुष्ट(कड़ा) हो जाता है।पुष्ट होने से पहले यदि तोड़ लिया जाय तो ठीक भिण्डी की तरह ही सब्जी बनायी जा सकती है।वैसे सब्जी की तुलना में इसका भुजिया अधिक अच्छा होता है।प्रत्येक पौधे में फल की मात्रा भी भिण्डी की तुलना में काफी अधिक होता है। इसकी एक और विशेषता है कि यह बहुवर्षायु वनस्पति है।छोड़ देने पर काफी बड़ा(अमरुद, अनार जैसा) हो जाता है,और लागातार बारहों महीने फल देते रहता है।एक बात का ध्यान रखना पड़ता है कि हर वर्ष कार्तिक से फाल्गुन महीने के बीच सुविधानुसार यदि थोड़ी छंटाई कर दी जाय तो नये डंठल निकल कर पौधे का सम्यक् विकास होकर फल की गुणवत्ता में वृद्धि होती है।खेती की दृष्टि से यदि रोपण करना हो तो हर तीसरे वर्ष नये बीज डाल देने चाहिए।मैंने अपनी गृहवाटिका में इसे लगाकर काफी उपयोग किया है।इसका फल बहुत ही पौष्टिक होता है।पौष्टिकता में जड़ों की भी अपनी विशेषता है।इसे सुखा कर चूर्ण बनाकर,एक-एक चम्मच प्रातः-सायं मधु के साथ सेवन करने से बल-वीर्य की वृद्धि

होती है।पुष्ट-परिपक्व फलों से प्राप्त बीजों को चूर्ण कर कस्तूरी की तरह उपयोग किया जा सकता है,जो किंचित सुगन्ध युक्त होता है।गुण-धर्म में मृगाकस्तूरी जैसा तो नहीं,फिर भी काफी हद कर कारगर है।

आयुर्वेद में स्थिति के अनुसार उक्त तीनों प्रकार के कस्तूरी का उपयोग किया जाता है।कर्मकाण्ड और

तन्त्र में मुख्य घटक के साथ-साथ "योगवाही" रुप में भी प्रयुक्त होता है।कस्तूरी में सम्मोहन और स्तम्भन शक्ति अद्‌भुत रुप में विद्यमान है,चाहे वह शरीर के वीर्य(शुक्र) का स्तम्भन हो या कि बाहरी (शत्रु,शस्त्रादि) स्तम्भन।यह एक विकट रुप से उत्तेजक द्रव्य भी है।शरीर में ऊष्मा के संतुलन में भी इसका महद् योगदान है। कस्तूरी अष्टगन्ध का एक प्रमुख घटक है।इसके बिना अष्टगन्ध की कल्पना ही व्यर्थ है।साधित कस्तूरी के तिलक प्रयोग से संकल्पानुसार षट्कर्मों की सम्यक् सिद्धि होती है।अन्य आवश्यक द्रव्य मिश्रित कर दिये जायें,फिर कहना ही क्या।सौभाग्य से असली कस्तूरी प्राप्त हो जाय तो सोने या चांदी की डिबिया में रख कर पंचोपचार पूजन करने के बाद श्री शिवपंचाक्षर,और देवी नवार्ण मन्त्रों का एक-एक हजार जप (दशांश होमादि सहित) सम्पन्न करके डिबिया को सुरक्षित रख लें।इसे लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।प्रयोग की मात्रा बहुत ही कम होती है- सूई के नोक पर जितना आ सके- एक बार के उपयोग के लिए काफी है।जैसा कि ऊपर भी कह आये हैं- सात्विक साधक सिर्फ मृगाकस्तूरी का ही प्रयोग करें।अभाव में आठ गुणा बल(साधना) देकर लता कस्तूरी का प्रयोग किया जा सकता है,किन्तु विडालकस्तूरी(जुन्दवदस्तर) का प्रयोग कदापि न करें।

----()()----

५. मयूरपिच्छ

मयूरपिच्छ यानी मोर का पंख- एक अति पवित्र जांगम द्रव्य है।भगवान श्रीकृष्ण के प्यारे मोर-मुकुट से सभी अवगत हैं।मोर को राष्ट्रीय पक्षी का दर्जा प्राप्त है।वास्तु नियमानुसार भी मोर बड़ा ही महत्त्वपूर्ण पक्षी है।तोते की तरह इसे पालने की प्रथा तो नहीं है।पिंजरे में इसे कैद भी नहीं रखा जा सकता है। उन्मुक्तता और विस्तार ही इसका जीवन-दर्शन है।पिंजरे में कैद करते ही थोड़े ही दिनों में रूग्ण होकर प्राण त्याग कर देता है।फिर भी चिड़ियाघरों में बड़े पिंजरों में रखने की धृष्टता तो हम करते ही हैं।शौक और सुविधा हो तो मोर को पालें,किन्तु मुक्त रहने की सुविधा-सहित।

समय-समय पर मोर के पंख अन्य पक्षियों की तरह ही स्वतः झड़ते रहते हैं।इन्हें एकत्र कर तरह-तरह के उपयोगी सामान- पंखे,चंवर,मंजूषा आदि बनाये जाते हैं।मोर के पंख को भस्म बनाकर विभिन्न आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयोग किया जाता है।मोर के पंख को हमारे ऋषि-महर्षि लेखनी के रुप में प्रयोग करते थे।यहां वैसे ही कुछ विशिष्ट प्रयोगों की चर्चा की जा रही है।

पूजा सामग्री विक्रेताओं के यहां मयूरपिच्छ सुलभ प्राप्य है।रविपुष्य या गुरुपुष्य योग(भद्रादि रहित)का विचार कर, इसे आदर पूर्वक क्रय कर,घर ले आयें।उपयोग और प्रयोग के अनुसार बने-बनाये मोर-पंखे भी खरीद सकते हैं।घर लाकर गंगाजल से शुद्ध करके, पीले या नीले नवीन वस्त्र का आसन देकर छोटी चौकी/पीठिका पर आसीन कर दें।पंचोपचार/षोडशोपचार पूजनोपरान्त श्री कृष्ण पंचाक्षर या सिर्फ

सप्तशती का तृतीय बीज का सहस्र जप,दशांश होमादि सहित सम्पन्न कर लें।साधित मयूरपिच्छ का पंखा(चंवर)एक साधक के लिए अद्भुत कल्याणकारी अस्त्र है।इसी प्रकार मोर के पंख को बीस-पचीस के गुच्छे में भी रखकर उक्त विधि से साध सकते हैं।दोनों के प्रयोग भिन्न-भिन्न हैं।

प्रयोग-

- साधित मोरपंख से बने चंवर से साधित मंत्रोच्चारण(मानसिक)पूर्वक झाड़ देने से समस्त ग्रह वाधायें शान्त हो जाती हैं।प्रेतादि विभिन्न वायव्य विघ्न भी शमित होते हैं।
- साधित मोरपंख जिस घर में समादर पूर्वक रहता है,वहां किसी प्रकार के वास्तु दोष,ग्रह दोष, वायव्य दोष प्रभावी नहीं होते।
- दोषग्रस्त वास्तु को वाधित(खंडित)करने,रक्षित करने आदि कार्यों में साधित मोरपंख का उपयोग किया जा सकता है।जैसे,मान लिया किसी के रसोई घर से सटे(एक ही दीवार)शौचालय है,और रसोईघर अपने सही स्थान(अग्निकोण) पर है,तो ऐसी स्थिति में मध्य दीवार पर पांच-सात की संख्या में साधित मोरपंख का प्रयोग कर लाभान्वित हुआ जा सकता है।ध्यातव्य है कि रसोईघर की दिशा सही होनी चाहिए।ऐसा नहीं कि नैऋत्य कोण पर बने रसोईघर में भी मोरपंख स्थापित कर लाभ हो ही जायेगा।
- मकान के भीतर चारो कोनों{हो सके तो दसों दिशाओं-पूरब,अग्नि कोण,दक्षिण,नैऋत्य कोण, नैऋत्य और पश्चिम

के मध्य(पाताल खण्ड),पश्चिम,वायव्य कोण,उत्तर,ईशान कोण,ईशान और पूरब के मध्य(आकाश खण्ड)}में साधित मयूरपिच्छ को स्थापित करने से विभिन्न प्रकार के वास्तु दोषों का शमन हो जाता है।हां,पंख की स्थापना के बाद संक्षिप्त रीति से वास्तु होम अवश्य कर दें।इसके लिए किसी योग्य वास्तुशास्त्री से सहयोग लेना चाहिए।

- मयूरपिच्छ के कठोर भाग को लेखनी की तरह प्रयोग किया जा सकता है।सरस्वती की साधना में इसका बड़ा महत्त्व है।इस लेखनी से भोजपत्र पर यन्त्र लेखन से यन्त्र में अद्भुत गुण-वृद्धि होती है।
- मयूरपिच्छ के बीच एक स्वेत वर्णी मयूर-चांद होता है।एक पंख में यह चांद एक ही होता है। साधित सात पंखों में से इस भाग को कैंची से बिलकुल बारीकी से काटें,ताकि अन्य वर्णों का समावेश न हो।फिर उस कटे अंश के अति महीन टुकड़े करें(जितना महीन हो सके),और थोड़े गीले गूड़ के साथ मिलाकर सात छोटी-छोटी गोलियां बना लें।गोलियों का आकार ऐसा हो कि बिना चबाये आसानी से निगला जा सके।गोलियां बन जाने पर कांसे की कटोरी में पीले वस्त्र

का आसन देकर स्थापित कर,पंचोपचार पूजन करें।फिर वहीं बैठकर एक हजार मन्मथ(कामदेव) मंत्र का जप करें।यह सारा कार्य फाल्गुन पूर्णिमा(जिस रात होलिका दहन होता है) को करना सर्वाधिक लाभप्रद होगा।वैसे अन्य पूर्णिमा को भी किया जा सकता है,जिसमें भद्रा और अन्य अशुभ योगादि न

हों।इस प्रकार पुनर्साधित "मयूरशिखाचन्द्रवटी" को रजोस्नान के बाद, पांचवें दिन से लागातार सात दिनों तक, प्रातः स्नान के बाद गोदुग्ध के अनुपान से(बिना चवाये,तोड़े) सेवन करे तो विभिन्न प्रकार के वन्ध्यत्व दोषों का निवारण होकर सन्तान सुख की प्राप्ति होती है।

- उक्त मयूरशिखाचन्द्र को जारित कर मधु के साथ थोड़ी मात्रा(सूई के नोक पर जितना आ सके) में कुछ दिनों तक सेवन कराने से समस्त वालारिष्ट का शमन होता है।
- उक्त प्रयोग को सामान्य स्थिति में भी बालकों के कल्याण(खास कर दन्तोद्भेद के समय की पीड़ा)के लिए प्रयोग किया जा सकता है।
- बालकों के झाड़-फूंक में साधित मयूरपिच्छ विशेष कारगर हैं।
- जिन बालकों को बार-बार नजर-दोष प्रभावित करता है,उन्हें मयूरशिखाचन्द्र को ताबीज में भर कर गले में धारण कराने से चमत्कारी लाभ होता है।

-----()()()----

६.साहीकंटक

साही एक जंतु का नाम है,जो बड़े विलाव जैसा होता है,किन्तु इसका मुंह(थुथने)कुत्ते की तरह होता है,और पैर विल्ली से भी कुछ ठिगने कद का- ठीक विलायती कुत्ते जैसा।साही सियारों की तरह मांद में रहना पसंद करता है,भले ही वह उसका खुद का बनाया हुआ न हो।देहातों में,

जहां आसपास जंगली वातावरण की भी सुविधा है,ईंट के पुराने भट्ठों में या भवन के खण्डहरों में इसे देखा जा सकता है।मूलतः मांसाहारी होते हुए भी, शाकाहार इसे काफी पसन्द है; यही कारण है कि ककड़ी-खरबूजे आदि इसे बहुत भाते हैं।वनजारे इसका शिकार करना खूब पसन्द करते हैं।किन्तु प्राकृतिक संरचना इसकी ऐसी है कि डंडे के लाख चोट भी इसे जरा भी घायल नहीं कर सकते।इसके शरीर पर दो अंगुल से लेकर बित्ते भर तक के लम्बे, मोटे-पतले, कलमनुमा गोलाई वाले,काफी मजबूत असंख्य कांटे होते हैं,जो आपातकाल की स्थिति भांपते ही सीधे तन कर खड़े हो जाते हैं,और वार बचा लेते हैं।सामान्य स्थिति में ये सुप्त रोयें जैसे पड़े रहते हैं- ठीक वैसे ही जैसे भय या ठंढ की स्थिति में हमारे शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं,और सामान्य अवस्था में शरीर पर चिपके से रहते हैं।

प्राचीन काल में,जब आज का फाउन्टेनपेन नहीं था,मोर के पंख, या फिर इस साही नामक पशु के कांटों का उपयोग लेखनी के रुप में होता था।मोटे-पतले, अलग-अलग लिखावट के लिए अलग-अलग आकार के कांटों का उपयोग किया जाता था।ये कांटे प्राकृतिक रुप से काले-सफेद, दोनों ओर से नोकदार हुआ करते हैं,जो देखने में बड़े सुन्दर लगते हैं।

यज्ञोपवीत-संस्कार में अब तो लोग भूलते जा रहे हैं,किन्तु बटुक के शिखा-क्षौर में शिखाक्षेत्र को पांच खण्डों में विभाजित करने हेतु कुशा और साही-कंटक का अनिवार्य रुप से प्रयोग का विधान है।इसी साही-कंटक से खण्ड करते हुए,बीच में कुशा बांध दिया जाता है,जिसे तत्काल पिता/गुरु द्वारा छिंदित किया जाता है।

साही के कांटे जड़ी-बूटी की दुकानों पर आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं- बहुत ही कम कीमत में।किसी भी नवरात्रि के पूर्व(आमावश्या की रात्रि या संध्या काल में) इसे क्रय कर घर ले आयें।गंगाजल से शुद्ध कर आदर

पूर्वक नवीन लाल वस्त्र का आसन देकर रख दें।अगले दिन से अन्य तान्त्रिक पदार्थों की तरह इसे पंचोपचार पूजन करें- पूरे नवरात्रि भर।साथ ही देवी-नवार्ण मंत्र का ग्यारह माला जप भी नित्य करते रहें। दिन में आपका जो भी नवरात्रि सम्बन्धी योजना हो करते रहें,कोई हर्ज नहीं।इस साही-कंटक-क्रिया को रात्रि में ही करें(निशीथ काल में) तो ज्यादा अच्छा है।एक साथ एक,तीन,पांच,सात,या नौ कांटों को साधित कर सकते हैं।नौ दिनों के पूजन और जप,होमादि से क्रिया सम्पन्न हो जायेगी।कांटा प्रयोग के योग्य हो जायेगा। आगे प्रयोग के समय पुनः कुछ मंत्रजप(प्रयोज्य नाम सहित) करना पड़ेगा।

साधित साही-कंटक-लेखनी से किसी भी षटकर्म-यन्त्र को लिखने से अद्भुत लाभ होता है।सामान्य लेखनी, अनार की लेखनी, मयूर पिच्छ लेखनी आदि की तुलना में साही-कंटक-लेखनी का अपना अलग महत्त्व है।

इसका सबसे महत्वपूर्ण कार्य है- विद्वेषण और उच्चाटन।इसमें इसे महारथ हासिल है।पुराने लोग तो डर से साही का कांटा अपने घर में रखना भी नहीं चाहते थे,कि परिवार में लड़ाई-झगड़े होंगे।वैसे काफी हद तक यह सच भी है।सामान्य तया किसी को साही-कांटा अपने घर में रखने का सुझाव तो नहीं ही दूंगा- क्यों कि विद्वेषण इसका द्राव्यिक गुण है।साधित हो जाने पर तो कहना ही क्या।हां,साधकगण- जो विभिन्न तान्त्रिक वस्तुओं को सदा अपने पास रखा करते हैं,उनकी बात कुछ और है।अपनी साधना-बल से रक्षित रहते हैं।

पुनश्च,सावधान करना चाहूंगा कि कोई भी प्रयोग स्वार्थ और लोभ के वशीभूत होकर न करें। अन्यथा
भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। शास्त्र का सदुपयोग लोक कल्याण के लिए हो।

-----()()()-----

७. हरताल

हरताल न वानस्पतिक है, और न जांगम।यह स्थावर द्रव्यों की श्रेणी में आता है। यानी एक खनिज द्रव्य है।हरताल दो तरह का होता है- स्वेत और पीत।स्वेत को गोदन्ती हरताल भी कहते हैं,और पीत को हल्दिया हरताल के नाम से जाना जाता है।यह अभ्रक की तरह चमकीला और किंचित परतदार होता है। अपेक्षाकृत वजनी भी होता है। इसमें संखिया(Arcenic)का अंश पाया जाता है,इस कारण जहरीला भी है। सामान्य अवस्था(बिना शोधन के)में इसका भक्षण जानलेवा है।आयुर्वेद के साथ-साथ तन्त्र में इसका विशेष प्रयोग है।यन्त्र लेखन में इसे स्याही की तरह उपयोग किया जाता है।कुछ विशिष्ट होम कार्यों में भी इसका उपयोग होता है।भगवती पीताम्बरा बगला की साधना में हल्दिया हरताल के बिना तो काम ही नहीं हो सकता। तात्पर्य यह कि इनकी साधना में अत्यावश्यक है।चन्दन के रुप में और होम में भी।अन्य विभिन्न अष्टगन्धों के निर्माण में हरताल का उपयोग किया जाता है।

जड़ी-बूटी विक्रेताओं के यहां आसानी से उपलब्ध है।वर्तमान में(सन् 2014) इसका बाजार भाव एक से डेढ़ हजार रुपये प्रति किलोग्राम है।जल में आसानी से घुलनशील है।अतः चन्दन की तरह घिस कर उपयोग किया जा सकता है।

गुरुपुष्य योग में बाजार से खरीद कर इसे घर ले आयें,और गंगाजल से शुद्ध कर, पीले नवीन वस्त्र
का आसन देकर पीतल की कटोरी में पीठिका पर रख कर, पंचोपचार पूजन करें।पूजनोपरान्त श्री शिवपंचाक्षर मंत्र का ग्यारह माला जप करने के बाद, प्रथम दिन ही ग्यारह माला पीताम्बरा मंत्र का भी जप

करें।ध्यातव्य है कि शिवपचंचाक्षर मंत्र-जप रुद्राक्ष के माला पर,और पीताम्बरा मंत्र-जप हल्दी के माला पर करना चाहिए। आगे छत्तीश दिनों तक पूर्ण अनुष्ठानिक विधि से उक्त दोनों जप होना चाहिए,यानी लगभग ढाई घंटे नित्य का कार्यक्रम रहेगा।एक बार में स्वार्थवश "बहुत अधिक मात्रा पर" प्रयोग न करें।सौ ग्राम की मात्रा पर्याप्त है- एक बार के प्रयोग के लिए।

भगवती बगला की उपासना में विभिन्न प्रयोग बतलाये गये हैं।सभी में इसका उपयोग किया जा सकता है।हल्दी के चूर्ण के साथ दशांश मात्रा में मिलाकर हवन करने से सभी प्रकार के अभीष्ट की सिद्धि होती है।

इस प्रकार विधिवत साधित हल्दिया हरताल को मर्यादा पूर्वक काफी दिनों तक सुरक्षित रख कर प्रयोग में लाया जा सकता है।षटकर्म के सभी कार्य इससे बड़े ही सहज रुप में सिद्ध होते हैं।जल में थोड़ा घिसकर नित्य तिलक लगायें- इस साधित हरताल का।विश्वविमोहन का अमोघ अस्त्र है यह।किन्तु ध्यान रहे- साधना का दुरुपयोग न हो,और न व्यापार हो तान्त्रिक वस्तुओं का।दुरुपयोग का सीधा परिणाम है- गलितकुष्ट। दुरुपयोग से- साधित ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन अवरुद्ध होकर,अन्तः क्षरण का कार्य होने लगता है। परिणामतः रस-रक्तादि सप्तधातुओं से निर्मित शरीर के सभी धातुओं का हठात् क्षरण होने लगता है,और अन्त में गलित कुष्ट के रुप में लक्षित होता है।

----()()----

८. फिटकिरी

फिटकिरी एक सुपरिचित स्थावर द्रव्य है,सुलभ और सस्ता भी।इसका शास्त्रीय नाम कांक्षी है।रक्त-रोधन,रक्त-शोधन,व्रण-रोपण आदि में इसका प्रचुर प्रयोग होता है।दाढ़ी वनाने के बाद फिटकिरी को पानी में डुबोकर चेहरे पर रगड़ने में नाई बड़ी फुर्ती दिखाता है- क्यों कि कटे भाग पर कुछ विशेष जलन पैदा करता है।आयुर्वेद और होमियोपैथी में इसके औषधीय प्रयोग से लोग अवगत हैं।यहां कुछ अन्य लोकोपयोगी प्रयोगों की चर्चा की जा रही है-

- किसी भी रविवार को फिटकिरी का बड़ा टुकड़ा(सवा किलो करीब- एक ही खण्ड) खरीद कर लायें, और जल से शुद्ध कर नवीन लाल वस्त्र का आसन देकर पीठिका पर रख दें।फिर पंचोपचार पूजन करने के बाद सूर्य पंचाक्षर मंत्र से आरम्भ कर क्रमशः केतु पंचाक्षर मंत्र तक (ग्रहों के सही क्रम में)एक-एक हजार जप कर लें।जप के बाद सुविधानुसार कुछ संख्या में तिलादि साकल्य से होम भी अवश्य करें।इस प्रकार साधित कांक्षी को उसी लाल टकड़े में बांध कर वास्तुदोष प्रभावित क्षेत्र में लटका दें।हो सके तो वास्तुमण्डल के मध्य खण्ड में इस भांति लटकावें ताकि हवा के हल्के झोंके में भी दोलायमान हो।दोलन इसकी गुणवत्ता में वृद्धि करता है।थोड़े ही दिनों में आसपास के समस्त वास्तुदोषों को आत्मसात कर लेगा।तीन से छः माह बाद उसे सम्मान पूर्वक उतार कर वस्त्र सहित कहीं जाकर जल में विसर्जित कर दें,और घर आकर किसी योग्य वास्तुशास्त्री से वास्तुवन्धन करा लें। एक बार की यह क्रिया

दस-बारह वर्षों तक कारगर रहेगी,वशर्ते कि भवन में कोई विशेष वास्तुदोष जाने-अनजाने पैदा न कर दिया जाय।जैसे कि, किसी ने ब्रह्म स्थान को ही छेड़ दिया, दूषित कर दिया,नैऋत्य में गड्ढा खोद दिया,ईशान में अग्नि स्थापित कर दिया- इस प्रकार सीधे पंचतत्वों को छेड़ दिया गया,वैसी स्थिति में आपका पूर्व वन्धन स्वयमेव शिथिल-खण्डित हो जायेगा।

- सामान्य रुप से साधित करके छोटे (सौ-दो सौ ग्राम) के टुकडें को भी घर के किसी भाग में रखने से आसपास के वास्तुदोषों का निवारण होता है।
- फिटकिरी को सीधे गरम तवे पर डाल दें।थोड़ी देर में पिघलने लगेगा,और कुछ देर छोड़ देने पर हल्के लावे की तरह हो जायेगा,मानों मकई का लावा हो।अब उसे उतार कर सहेज लें।यह क्रिया किसी सोमवार को स्नानादि शुद्धि के बाद करें।लावा तैयार हो जाने के बाद कांसे के कटोरे में रख कर पंचोपचार पूजन और कम से कम एक हजार श्री शिवपंचाक्षर मंत्र का जप कर लें।इस प्रकार साधित कांक्षी-भस्म की रत्तीभर (१२५ मि.ग्रा.) मात्रा नित्य प्रातः-सायं मधु के साथ,तीन महीने तक सेवन करने से स्त्रियों का प्रदररोग समूल नष्ट होता है।
- उक्त विधि से वनायी गयी कांक्षी भस्म को विभिन्न जीर्ण-ज्वरों में भी सेवन किया जा सकता है।साथ में गिलोय-सत्व मिलाकर सेवन करने से लाभ अधिक और शीघ्र होगा।

----()()()----

९. सिन्दूर

सिन्दूर किसी विशेष परिचय का मोहताज़ नहीं है- खास कर भारत जैसे देश में,जहां स्त्रियों के सुहागरज के रुप में मान्यता है इसे।सधवा और विधवा की निशानी है - उसके मांग का सिन्दूर। कुआंरी कन्यायें माँग तो नहीं भरती,पर कंठ में या भ्रूमध्य में लगाने से परहेज भी नहीं करती।आजकल तरह-तरह के रंगों में सिन्दूर मिलते हैं,और अनजाने में स्त्रियां उन्हें अंगीकार भी करती हैं- उसी मर्यादा पूर्वक;किन्तु यह जान लें कि असली सिन्दूर सिर्फ दो ही रंगों का हो सकता है- पीला और लाल।इसके सिवा और कोई रंग नहीं।

थोड़ा पीछे झांक कर अपनी संस्कृति को ढूढ़ने-देखने का प्रयास करें तो पायेंगे कि जिस सिन्दूर का व्यवहार करने का अधिकार पति द्वारा विवाह-मंडप में दिया जाता है,वह सिन्दूर सिर्फ पीले रंग का ही होता है (लाल भी नहीं),और वजन में भी अन्य सिन्दूर की अपेक्षा भारी होता है।

ज्ञातव्य है कि असली सिन्दूर का निर्माण हिंगुल(सिमरिख) नामक एक स्थावर पदार्थ से होता है, जिसका रंग पीला और चमकीला होता है।चमक का मुख्य कारण है- इसके अन्दर पारद की उपस्थिति।इसी सिसरिख से उर्ध्वपातन क्रिया द्वारा पारा(Mercury) निकलता है।पारद के पातन के बाद जो अवशेष रहता है, उसी से सिन्दूर बनता है।इसका महंगा होना भी स्वाभाविक ही है।

गुण-धर्म से सिन्दूर रक्तशोधक,रक्तरोधक,और व्रणरोपक है।आयुर्वेद के विभिन्न औषधियों में भी इसका प्रयोग होता है।कर्मकांड-पूजा-पाठ का विशिष्ट उपादान है सिन्दूर।सभी देवियों को सिन्दूर अर्पित

किया जाता है। सिन्दूर के वगैर जैसे सुहागिन का श्रृंगार अधूरा है,उसी प्रकार देवी-पूजन भी अधूरा है।अपवाद स्वरुप, पुरुष देवताओं में हनुमानजी और गणेशजी की पूजा में भी सिन्दूर अत्यावश्यक है।गणेश जी का शिव द्वारा शिरोच्छेदन हुआ था, तव आतुर अवस्था में माता पार्वती सिन्दूर लेपन कर उन्हें रक्षित की थी।राम-दरवार में मुक्ता- माला को खंडित करने पर हँसी के पात्र बने हनुमान ने अपना वक्षस्थल चीर कर सभासदों को चकित कर दिया था- उर में राम-दरवार-दर्शन करा कर।तब सीता माता ने सिन्दूर-लेपन कर उन्हें रक्षित किया था।एक और पौराणिक प्रसंग में सीता के सिन्दूर लगाने के औचित्य और महत्व पर हनुमान द्वारा जिज्ञासा प्रकट की गयी। सीता के यह कहने पर कि "इससे स्वामी की आयु बढ़ती है",श्री हनुमान अपने सर्वांग में सिन्दूर पोत कर दरबार में पुनः हँसी के पात्र बने थे।उनका तर्क था कि सिर्फ शरीर के उध्र्वांग में थोड़ी मात्रा में भरा गया सिन्दूर जब स्वामी की आयु में वृद्धि कर सकता है, तो क्यों न पूरे शरीर को सिन्दूर से भर लिया जाय।

बात कुछ और नहीं, ये कथानक सिर्फ सिन्दूर की गरिमा को दर्शाते हैं।

विवाह काल में वारात जब कन्या के द्वार पर पहुंचती है,उस समय मां-बेटी एकान्त कुलदेवी-कक्ष में बैठ कर गोवर के गौरी-गणेश पर निरन्तर पीला सिन्दूर चढ़ाती रहती हैं- जव तक कि मंडप से कन्या का बुलावा न आजाय।भले ही आज इस अति महत्वपूर्ण क्रिया को लोग महत्वहीन करार देकर पालन करने में भूल कर रहे हों,किन्तु है, यह एक रहस्यमय तान्त्रिक क्रिया,जिसका सम्वन्ध सीधे अक्षुण्ण सुहाग से है।

सिन्दूर का तान्त्रिक महत्व अमोघ है।यहां कुछ विशिष्ट प्रयोगों की चर्चा की जा रही है-

✓ कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को हनुमान जी का जन्मोत्सव होता है।दक्षिणात्य मत से चैत्र पूर्णिमा की मान्यता है।किसी अन्य मत से अन्य मास-तिथि भी मान्य है।उक्त दोनों दिन हनुमान जी की आराधना का विशेष महत्त्व है।आठ अंगुल प्रमाण के पत्थर की सुन्दर मूर्ति खरीद कर घर लायें।सामान्य प्राणप्रतिष्ठा-विधान से उसे प्रतिष्ठित करें।यथोपलब्ध पंचोपचार/षोडशोपचार पूजन सम्पन्न करें।नैवेद्य में अन्य सामाग्री हो न हो,भुना हुआ चना और गूड़ अत्यावश्यक है। अब,एक पीतल, कांसा,या तांबा के पात्र में शुद्ध घी और शुद्ध सिन्दूर का मधुनुमा लेप तैयार करें,और उस प्रतिष्ठित मूर्ति की आंखें छोड़कर,शेष सर्वांग में लेपन कर दें।तत्पश्चात् **ऊँ हैं हनुमतये नमः** का ग्यारह माला जप रुद्राक्ष के साधित माला पर कर लें।यह क्रिया इक्कीश दिनों तक नित्यक्रम से,नियत समय पर करते रहें। इक्कीशवें दिन अन्य प्रसाद के साथ शुद्ध घी में बना गूड़-आंटे का चूरमा(ठेकुआं) अर्पित करें।कम से कम एक माला से उक्त मंत्र पूर्वक-तिलादि साकल्य-होम भी कर लें।इस क्रिया से हनुमान जी अति प्रसन्न होते हैं।समस्त मनोकामनाओं की सिद्धि होती है।उक्त क्रिया को अन्य शुभ मुहूर्त में भी प्रारम्भ किया जा सकता है।

प्रत्येक महीने के कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को संकष्टी गणेश चतुर्थी कहते हैं।अगहन महीने में उक्त तिथि से संकट निवारण के लिए गणपति की साधना प्रारम्भ की जा सकती है।सुविधानुसार कुछ पूर्व में सारी तैयारी कर लें- आठ अंगुल प्रमाण की गणेश की सफेद पत्थर की मूर्ति खरीद लें। सामान्य प्राणप्रतिष्ठा-विधान से उसे प्रतिष्ठित कर लें।यथोपलब्ध पंचोपचार/षोडशोपचार पूजन

सम्पन्न करें।नैवेद्य में अन्य सामग्रियों के साथ-साथ मोदक(लड्डु) अवश्य हो।उधर दूर्वा भी अनिवार्य ही है- गणेश-पूजन में- इसे न भूलें। अब,एक पीतल, कांसा,या तांबा के पात्र में शुद्ध घी और शुद्ध सिन्दूर का मधुनुमा लेप तैयार करें,और उस प्रतिष्ठित मूर्ति की आंखें छोड़कर,शेष सर्वांग में लेपन कर दें।तत्पश्चात् पूर्व साधित रुद्राक्ष के माला पर **ऊँ गं गणपतये नमः** मंत्र का ग्यारह माला जप करें।जप समाप्ति के बाद एक माला से उक्त मंत्रोच्चारण पूर्वक तिलादि साक्लय-होम भी अवश्य कर लें।इस क्रिया को पूरे वर्ष भर इसी विधि से करते रहें- महीने में सिर्फ एक दिन की विशेष क्रिया है,शेष दिनों में सामान्य पूजन और घृत मिश्रित सिन्दूर लेपन तथा एक माला जप भी करते रहें।यह संकष्टी गणेश चतुर्थी व्रत समस्त विघ्नों को समाप्त कर मनोकामना की पूर्ति करने में सक्षम है।

✓ अक्षय सौभाग्य की कामना प्रत्येक स्त्री को होती है।अतः इस कामना से सभी सौभाग्यकांक्षी स्त्रियां इस तान्त्रिक प्रयोग को कर सकती हैं,खास कर उन स्त्रियों को तो अवश्य ही करना चाहिए, जिनकी कुण्डली में मंगल,शनि,राहु आदि का दोष हो,तथा पति स्थान दुर्बल हो।किसी भी कारण से पति पर आये संकट को दूर करने में भी यह क्रिया सक्षम है।क्रिया विधि- गाय के गोबर से अंगुली के आकार की दो मूर्तियां पीले नवीन कपड़े पर स्थापित करें,और उन्हें गौरी और गणेश के रुप में प्रतिष्ठित कर सामान्य पंचोपचार पूजन करें।पूजन के पश्चात् आम या पान के पत्ते से ऊँ महागौर्यै नमः,ऊँ श्री गणेशाय नमः का उच्चारण करते हुए एक सौ आठ बार पीला सिन्दूर अर्पित करें।संख्या पूरी हो जाने पर कपूर

की आरती दिखावें,और अपनी मनोवांछा निवेदन करें।तत्पश्चात् अक्षत छिड़क कर विसर्जन कर दें।यह क्रिया नित्य की है,कम से कम वर्ष भर तक करें।सामान्य स्थिति में तो अगहन महीने के शुक्ल पक्ष की नवमी से प्रारम्भ करनी चाहिए।विशेष संकट की घड़ी में सामान्य पंचांग शुद्धि देख कर कभी भी किया जा सकता है।क्रिया थोड़ा उबाऊ जैसा प्रतीत हो रहा है,किन्तु है अद्भुत और अमोघ। मुख्य रहस्य है- गोबर के गौरी-गणेश को नियमित सुहागरज अर्पित करना।किसी अन्य पदार्थ की मूर्ति पर यही क्रिया उतनी करगर नहीं होगी- इसका ध्यान रखें।

✓ शुद्ध सिमरिख से बने पीले सिन्दूर को पीले नवीन वस्त्र का आसन देकर,पंचोपचार पूजन करके,उसके समक्ष देवी नवार्ण का कम से कम नौ हजार जप कर सिद्ध कर लें- सुविधानुसार किसी नवरात्र या अन्य शुभ मुहूर्त में,और सुरक्षित रख लें।इस मन्त्राभिषिक्त सिन्दूर की एक चुटकी पुनः अभीष्ट नाम और मंत्र का मानसिक उच्चारण करते हुए जिसे प्रदान किया जायेगा वह वशीभूत होगा,किन्तु ध्यान रहे- किसी बुरे उद्देश्य से यह प्रयोग कदापि न करें।इस प्रकार साधित सिन्दूर का स्वयं भी तिलक के रुप में उपयोग कर, द्रष्टा को वशीभूत किया जा सकता है।

------()()()----

पञ्चम् परिच्छेद

ग्रह-नक्षत्र-राश्यादि-वनस्पति-मन्त्र-सारणी

हमारे मनीपियों ने लोक-कल्याणार्थ अनेक अद्‌भुत ज्ञान,अनुभव और जानकारियों का संग्रह किया है। ज्योतिष और तन्त्र शास्त्र का वनस्पति-वर्णन भी उन्हीं में एक है।पिछले अध्यायों में आपने देखा कि किस प्रकार विभिन्न वनस्पतियों का औषधीय उपयोग न करके, सिर्फ धारण-रक्षण-पूजनादि करने मात्र से ही मानव की मनोवाछांयें पूरी होती हैं,और विभिन्न आपदाओं का निवारण होता है। स्रष्टा ने लोककल्याण के लिए ही विभिन्न वनस्पतियों का सृजन किया है।उसी संदर्भ को आगे बढ़ाते हुए, अव यहां कुछ विशिष्ट वनस्पतियों का ज्योतिषीय विचार पूर्वक उपयोग पर प्रकाश डाला जा रहा है।

ज्योतिष-शास्त्र हमें बतलाता है कि आकाश में नौ ग्रह,बारह राशियां,और सत्ताइस नक्षत्र हैं।इनके आपसी सामंजस्य से सृष्टिमात्र का क्रियाकलाप प्रभावित होता है।जीवन में होने वाली प्रत्येक अच्छी-बुरी घटनाओं का पूर्वानुमान और समाधान इन ग्रह-नक्षत्र-राश्यादिओं से नियंत्रित-प्रभावित होता है। सृष्टि का कण-कण प्रभावित है एक दूसरे से।वनस्पतियां भी इससे अछूती नहीं हैं।

प्रधानत्व की दृष्टि से ग्रहों में चन्द्रमा को औषधीश कहा गया है- यानी सभी वनस्पतियों पर उनका आधिपत्य और नियंत्रण है।पुनः सभी ग्रहों को एक-एक वनस्पति का स्वामी विशेष (संरक्षक) बतलाया गया है।ग्रहों की तुष्टि हेतु(मंत्र-जपादि के पश्चात्,या बिना जप के भी) उनकी विहित संमिधा से यथासंख्या (निर्धारित) आज्य(घृत) युक्त होम करने का निर्देश

है- मनीषियों का।इस क्रिया से अद्भुत लाभ होता है।कुछ अन्य वनस्पतियों की स्वतन्त्र सारणी भी है- जिन्हें मात्र धारण करने से ही तत्-तत् ग्रहों की तुष्टि हो जाती है। उसी भांति बारह राशियों, और सत्ताइस नक्षत्रों के लिए भी सुझावादेश दिया है मनीषाओं ने।जिस राशि वा नक्षत्र सम्बन्धी परेशानी हो, उससे सम्बन्धित वनस्पति का प्रयोग- होम,धारण,एवं जलाक्षेपण स्नान आदि का विधान बतलाया गया है। कोई भी प्रयोग करने से पहले,पूर्व अध्यायों में वर्णित विधि से(मुहूर्त विचार करके)आमंत्रण पूर्वक सम्बन्धित वनस्पति को ग्रहण करें।जहां तक सम्भव हो ताजी वनस्पति ही प्रयोग में लायी जाय।असम्भव की स्थिति में जड़ी-बूटी की दुकान से क्रय करना मजबूरी है।किन्तु ध्यान रहे- गुणवत्ता की दृष्टि से ताजगी अनिवार्य है।ग्रहण करने के पश्चात् ,यथोचित जलादि(जल-वायु-आतप) शुद्धि करें। तत्पश्चात् पंचोपचार पूजन एवं औषधीश पंचाक्षर, शिव पंचाक्षर,तथा देवी नवार्ण मंत्रो का यथासम्भव एकाधिक माला जप करना चाहिए।इसके बाद जिस ग्रह,राशि या नक्षत्र की वनस्पति का प्रयोग किया जा रहा है,उससे सम्बन्धित पंचाक्षर मंत्र का भी यथोचित जप होना चाहिए,तभी सम्यक् लाभकारी होगा।

नवग्रह -	मन्त्र ---	संमिधा –	धारणार्थ वनस्पति
सूर्य-	ऊँ ह्रीं ह्रौं सूर्याय नमः –	अकवन -	विल्वमूल
चन्द्रमा-	ऊँ ऐं क्लीँ सोमाय नमः-	पलास -	खिरनीमूल
मगल-	ऊँ हूं श्रीं भौमाय नमः -	खदिर -	अनन्तमूल
बुध -	ऊँ ऐं श्रीं श्रीं बुधाय नमः -	अपामार्ग -	विधारामूल

वृहस्पति-	ॐ ह्रींक्लींहूँ वृहस्पतये नमः	पीपल	भृङ्गराज
शुक्र -	ॐ ह्रीं श्रीं शुक्राय नमः	उदुम्बर	मञ्जिष्ठ
शनि -	ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शनैश्चराय नमः	शमी	शमीमूल
राहु -	ॐ ऐं ह्रीं राहवे नमः	दूर्वा	श्वेतचन्दन
केतु -	ॐ ह्रीं ऐं केतवे नमः	कुशा	अश्वगन्धमूल

उक्त सारणी में दिये गये ग्रह-समिधा-सूची के स्मरण हेतु एक बहुश्रुत श्लोक है- अर्कः,पलाशः,खदिरोऽह्यपामार्गोऽथ पिप्पलः।उदुम्बरः शमी दूर्वाः कुशाश्च समिधः क्रमात्।।

बारह राशियां- स्वामी ग्रह और उनकी वनस्पतियां-

(१) मेष राशि -- मंगल -- रक्त चन्दन

(२) वृष राशि -- शुक्र --- छतिवन(गुलैची सदृश)

(३) मिथुन राशि -- बुध -- कटहल

(४) कर्क राशि -- चन्द्रमा -- पलास(ढाक)

(५) सिंह राशि -- सूर्य -- वरगद(वट)

(६) कन्या राशि -- बुध -- आम

(७) तुला राशि -- शुक्र -- मौलश्री(वकुल)

(८) वृश्चिकराशि --मंगल -खदिर(खैर)जिससे कत्था बनता है

(९) धनु राशि -- वृहस्पति -- पीपल(अश्वत्थ)

(१०) मकर राशि -- शनि -- शीशम(विशेष कर काला शीशम)

(११) कुम्भ राशि -- शनि -- शमी

(१२) मीन राशि -- वृहस्पति -- वरगद(वट)

सताइस नक्षत्र- अधिदेवता -- वनस्पतियां-

(१) अश्विनी - अश्विनीकुमार -- आंवला

(२) भरणी - यमराज -- वरगद और पाकड़(युग्म)

(३) कृत्तिका - अग्नि -- उदुम्बर(गूलर)

(४) रोहिणी - ब्रह्मा -- जम्बु(जामुन)

(५) मृगशिरा- चन्द्रमा -- खदिर(खैर)

(६) आर्द्रा - शिव -- प्लक्ष(पाकड़)

(७) पुनर्वसु - अदिति -- वंश(वांस)

(८) पुष्य - वृहस्पति --- अश्वत्थ(पीपल)

(९) श्लेषा - सर्प --- नागकेसर(नागेसर)

(१०) मघा - पितृ(पितर)- वट(वरगद)

(११) पूर्वाफाल्गुनी- भगदेव- पलास(ढाक)

(१२) उत्तराफाल्गुनी- अर्यमा(सूर्य नहीं)रूद्राक्ष

(१३) हस्ता -- सूर्य- अरिष्ठा(रीठा)

(१४) चित्रा -- त्वष्टा — बेल

(१५) स्वाती -- वायु-- अर्जुन(कहुवा)

(१६) विशाखा -इन्द्र और अग्नि – विकंकत

(१७) अनुराधा -- मित्र- वकुल(मौलश्री)

(१८) ज्येष्ठा -- इन्द्र --- चीड़

(१९) मूल --- राक्षस -- साल

(२०) पूर्वाषाढ़ -जल(वरुण नहीं) –
सीताअशोक(रक्ताशोक)

(२१) उत्तराषाढ़ -- विश्वेदेवा --- कटहल

(२२) श्रवण -- विष्णु-- अकवन(अर्क)

(२३) धनिष्ठा -- वसु --- शमी

(२४) शतभिष -- वरुण --कदम्ब(कदम)

(२५) पूर्वभाद्रपद-- अजैकच --- आम

(२६) उत्तरभाद्रपद- अहिर्बुध--निम्ब(नीम)

(२७) रेवती -- पूषा --- मधूक(महुआ)

ज्ञातव्य है कि सभी नक्षत्र दक्षप्रजापति की पुत्री एवं चन्द्रमा की पत्नियां हैं।मंत्र प्रयोग में आद्य प्रणव-युक्त पंचाक्षर(स्त्रीलिंगी),अन्त्ये नमः युक्त- जैसे - **ऊँ अश्विन्यै नमः,ऊँ भरण्यै नमः** – का यथोचित प्रयोग करना चाहिए।विशेष परिस्थिति में सबके वैदिक मंत्र भी प्रयोग किये जा सकते हैं।

-----()()-----

षष्ठम् परिच्छेद

सप्तौषधि- दशौषधि-सर्वौषधि-शतौषधि-सूची

सृष्टि में स्थावर-जांगम-उद्भिज-अंडज-स्वेदज(स्थूल-सूक्ष्म,दृश्य-अदृश्य) जो भी हैं,किसी विशिष्ट उद्देश्य से स्रजक ने इनकी सर्जना की है।उन्हीं सर्जनाओं में से कुछ विशिष्ट द्रव्यों से पिछले अध्यायों में परिचय कराने का एक क्षुद्र प्रयास किया गया।विभिन्न द्रव्यों का सिर्फ तान्त्रिक ही नहीं,अपितु ज्योतिषीय और कर्मकांडीय उपयोग भी हुआ करता है। पूजा सामग्री की दुकानों पर यदि ढूढने जायें तो प्रायः देखते हैं कि दुकान का कूड़ा-करकट एकत्र कर सर्वौषधि के नाम पर दे दिया जाता है।इसका मुख्य वजह है कि न तो बिक्रेता को पता है ,और न क्रेता को ही कि सर्वौधियां क्या होती हैं।उधर कर्मकांडी ब्राह्मण को भी शायद ही पता हो,और हो भी यदि तो जांचने-परखने का समय कहां है उनके पास।यानी व्यावहारिक जानकारी का अभाव है। प्राचीन समय में हम जंगलों से जुड़े हुए थे।अब कंकरीट के जंगलों और कोलतार की क्यारियों ने हमें आधुनिक बना दिया है। "सर्वौषधि" शब्द का अर्थ हम सीधे लगाते हैं- सभी प्रकार की औषधियां,किन्तु बात ऐसी नहीं है।

अस्तु,पाठकों की सुविधा और जानकारी के लिए यहां इसकी सूची प्रमाणिक श्लोक सहित दी जा रही हैं-

मुरा मॉंसी वचा कुष्ठं शैलेयं रजनीद्वयम्। सठी चम्पकमुस्ता च सर्वौषधिगणः स्मृतः॥

अग्निपुराण १७७-१७ के अनुसार मुरामांसी,जटामांसी,वच, कुठ, शिलाजीत, हल्दी,दारुहल्दी,सठी,चम्पक और नागरमोथा-इन दस ओषधियों को ग्रहण किया गया है।अन्यत्र एक प्रमाण में कहा गया है-

कुष्ठं मांसी हरिद्रे द्वे मुरा शैलेय चन्दनम्।वचा चम्पक मुस्ता च सर्व्वौषध्यो दश स्मृताः।।

यानी कुठ,जटामांसी,हल्दी,दारुहल्दी,मुरामांसी,शिलाजीत,श्वेत चन्दन,वच,चम्पा,और नागरमोथा इन दस औषधियों को ही सर्वौषधि कहा गया है।एक अन्य सूची में ऊपरोक्त सभी द्रव्य तो यथावत हैं,किन्तु चम्पक के स्थान पर आंवला लिया गया है।जटामांसी के सम्बन्ध में ज्ञातव्य है कि कहीं-कहीं इसके नाम पर छड़ीला दे दिया जाता है,जबकि असली जटामांसी ठीक जटा की तरह,और अति तीक्ष्ण गंधी होता है।अतः उसे ही प्रयोग करना चाहिए।

एक और सूची है – सप्तौषधि की- मुरामांसी,जटामांसी,वच, कूठ, शिलाजीत,दारुहल्दी और आंवला।ध्यातव्य है कि हल्दी,चन्दन और नागरमोथा नहीं है इसमें,तथा चम्पा की जगह आंवला को ग्रहण किया गया है।

0 इससे ऊपर की सूची शतौषधि और उससे ऊपर की सूची सहस्रौषधी कहलाती हैं । वैदिक,तान्त्रिक,पौराणिक कार्यों में इनका प्रचुर प्रयोग होता है। यज्ञीय वनस्पतियों के सम्बन्ध में एक श्लोक है-

शमीपलासन्यग्रोधप्लक्षवैकङ्कतोद्भवाः।अश्वत्थोदुम्बरौ बिल्वश्चन्दनः सरलस्तथा।शालश्च देवदारुश्च खादिरश्चेति याज्ञिकाः ।।

आगे शतौषधियों की सूची दी जा रही है:-

(१) विष्णुक्रानता

(२) मयूरशिखा

(३) सहदेई

(४) पुनर्नवा

(५) शरपुंखा

(६) वाराहीकन्द

(७) विदारीकन्द

(८) चित्रक(चितउर)

(९) काकजंघा

(१०) लक्ष्मणा

(११) तुम्बिका

(१२) बदरीपत्र

(१३) कर्पूरी

(१४) करेल

(१५) कर्कोटिका

(१६) चक्रांक

(१७) श्वेतार्क

(१८) व्याघ्रपत्री

(१९) रुदन्ती

(२०) अश्वगन्धा

(२१) श्वेतमुसली

(२२) श्याममुसली

(२३) गिरिकर्णिका

(२४) इन्द्रवारुणी

(२५) अपामार्ग

(२६) शंखपुष्पी

(२७) घृतकुमारी

(२८) शल्लकी

(२९)	गन्धप्रसारणी
(३०)	निर्गुण्डी
(३१)	देवदाली
(३२)	वट
(३३)	शमी
(३४)	प्लक्ष(पाकड़)
(३५)	पलास
(३६)	अश्वत्थ(पीपल)
(३७)	आम्र
(३८)	उदुम्बर(गूलर)
(३९)	जम्वु(जामुन)
(४०)	घनवहेरा
(४१)	वेतस(वेंत)
(४२)	अम्लवेंत
(४३)	नागकेशर
(४४)	अर्जुन(कहवा)
(४५)	अशोक
(४६)	मौलश्री(वकुल)
(४७)	पाषाणभेद(पत्थरचूर)
(४८)	शाल
(४९)	तमाल

(५०)	ताड़
(५१)	पाटला
(५२)	सेवती
(५३)	महुआ(मधूक)
(५४)	सीरस(सिरिष)
(५५)	बिल्व(बेल)
(५६)	कंटकारी(रेगनी)बड़ी
(५७)	कंटकारी(रेगनी)छोटी
(५८)	खरेंटी
(५९)	अतिबला
(६०)	सोनापाठा
(६१)	नागबला
(६२)	जावित्री
(६३)	जयपाल(जायफल)
(६४)	केतकी(केवड़ा)
(६५)	कदली(केला)
(६६)	बिजौरा(नीम्बू की एक जाति)
(६७)	अरणी
(६८)	अगर
(६९)	तगर
(७०)	अजवाइन

(७१)	पुण्ड्रिका
(७२)	द्रोणपुष्पी(गूमा)
(७३)	कुम्भी
(७४)	श्रीपर्णी(शालपर्णी)
(७५)	पृष्टपर्णी
(७६)	मदन
(७७)	चम्पक(चम्पा)
(७८)	पद्माख(कमलगटा)
(७९)	स्वर्णपुष्पी(कटैला)
(८०)	सिद्धेश्वरी
(८१)	किरमाला
(८२)	धव(धवई)धाय
(८३)	कुन्द
(८४)	मुचकुन्द
(८५)	दाडिम(अनार)
(८६)	ब्राह्मी
(८७)	आंवला
(८८)	भृंगराज(भेंगरिया)
(८९)	अधोपुष्पी
(९०)	मीनाक्षी
(९१)	अडूसा(वासा)

(९२)	तरंगिनी
(९३)	गिलोय(गुरीच)
(९४)	शतावरी
(९५)	वावची(वाकुची)
(९६)	वनतुलसी
(९७)	तुलसी
(९८)	कुशा
(९९)	इक्षुमूल
(१००)	सर्षपमूल

उक्त सौ वनस्पतियों की सूची में विद्वानों में किंचित मतभेद भी है।कुछ विद्वान एक ही वनस्पति के दो अंगों को अलग-अलग ग्रहण कर लिए हैं- संख्या पूर्ति हेतु- जैसे वदरी(बेर) के पत्ते और वेर की जड़। कई पुस्तकों का अवलोकन करने के वाद मैंने स्वविवेक से सूची में किंचित परिवर्तन किया है।इसमें द्रव्यों की महत्ता का ध्यान रखा गया है।कुछ नामों का क्षेत्रीय नाम भी सुविधा के लिए डाल दिया गया है।सतत प्रयास के पश्चात् भी कुछ वनस्पतियों के नाम,रुप पर भ्रम बना हुआ है।विद्वानों से आग्रह है कि कृपया यथोचित संकेत करने का कष्ट करेंगे।इस सम्बन्ध में मैं भी प्रयासरत हूँ- नयी जानकारी मिलने पर पुनः यहां संशोधित करुंगा।

-------()()()-------

सप्तम् परिच्छेद

सर्वाभावे शतावरी

जैसा कि शीर्षक से ही स्पष्ट है- सर्वाभावे शतावरी- सबके अभाव में शतावरी,यानी शतावरी कोई उत्कृष्ट वनस्पति का नाम है,जो सबके अभाव का पूरक है।जी हां,शास्त्रों का ऐसा ही आदेश है- कर्मकांडीय वनस्पति प्रयोग में यदि कुछ न मिले तो शतावरी का प्रयोग करना चाहिए,लेकिन इसका यह आशय नहीं है कि कुछ ढूढ़ा ही न जाय।ढूढ़ने का प्रयास न करना- कर्म(व्यवहार) की त्रुटि कही जायगी,अतः खोज तो करना ही है- अन्यान्य उपलब्ध वनस्पतियों का।

शतावरी का एक नाम शतावर भी है।यह एक जंगली लता है,जिसकी पत्तियां गहरे हरे रंग की,बहुत ही महीन-महीन होती हैं- शमी से कुछ मिलती-जुलती।शमी की तरह शतावर में भी कांटे होते हैं- बल्कि उससे भी बड़े-बड़े कांटे।दूसरी ओर, शमी का पौधा होता है,और शतावर की लता।आजकल बहुत जगह अनजाने में ही शो-प्लान्ट के रुप में लोग गमले में लगाते भी हैं।नये वृन्त पर हल्के पीलें- परागकणों से भरपूर छोटे-छोटे फूल लगते हैं,जो प्रौढ़ होकर छोटी गोलमिर्च की तरह फलों में परिणत हो जाते हैं।इन्हीं बीजों से स्वतः ही आसपास नयी लतायें अंकुरित हो आती हैं।

प्रयोग में आने वाला शतावर इसी लता का मूल है,जो बित्ते भर से लेकर हाथ भर तक के लंबे हुआ करते हैं।इन जड़ों की विशेषता है कि प्रत्येक नया जड़ सीधे मूसला जड़ के ईर्द-गिर्द से ही निकलता है- यानी जड़ों से पुनः पतली जड़ें बिलकुल नहीं निकलती।इस प्रकार सभी जड़े लगभग समान आकार वाली होती है।सुविधानुसार साल में एक या दो बार आसपास की मिट्टी को करीने से खोद कर (ताकि पौधे को क्षति न

पहुंचे और मुसला जड़ की भी रक्षा हो)मूसला जड़ के अतिरिक्त कुछ और जड़ों को छोड़ कर शेष को एक-एक कर तोड़ लेते हैं,और फिर मिट्टी को यथावत पाट देते हैं।इस प्रकार एक बार की लगायी हुयी लता से लम्वे समय तक आवश्यक शतावर प्राप्त किया जा सकता है।एक परिपुष्ट लता से पांच-दश किलो जड़ प्रतिवर्ष प्राप्त किया जा सकता है।धो,स्वच्छ कर इन जड़ों को हल्का उवाल देते हैं,ताकि आसानी से सूख सके,अन्यथा सूखने में बहुत समय लग सकता है।

आयुर्वेद में वाजीकरण औषधियों की श्रेणी में इसे रखा गया है।यह बहुत ही पौष्टिक द्रव्य है।इसकी एक और विशेषता है कि दूध बढ़ाने में चमत्कारिक कार्य करता है।जिन महिलाओं की दुग्ध-ग्रन्थियां सम्यक कार्य नहीं करतीं,उन्हें इसका क्षीरपाक बनाकर दिया जाता है।जानकार ग्वाले इस जड़ी का प्रयोग अपने दुधारु पशुओं के दुग्ध-वर्धन के लिए करते हैं।किन्तु ध्यान रहे अधिक मात्रा में सेवन हानिकारक भी है।पूजापाठ में इसे सर्वश्रेष्ट औषधि की सूची में रखा गया है।

-----()()()----

अष्टम् परिच्छेद
उपसंहार

विभिन्न तन्त्र एवं आयुर्वेद-ग्रन्थों का अवलोकन करने के पश्चात् आपके समक्ष मेरा यह क्षुद्र प्रयास- पुण्यार्कवनस्पतितन्त्रम् प्रस्तुत है।इसके अन्तर्गत जो भी प्रयोग बतलाये गये हैं पूर्णतः श्रद्धा और विश्वास के योग्य हैं।प्राक्कथन में ही निवेदन कर चुका हूँ कि मैं कोई महान साधक नहीं हूँ- वस यदाकदा प्रयोग-साधना करते रहता हूँ।विभिन्न विषयों को नियमित पढ़ते रहने की ललक है,और साथ ही अपने अनुभव को सुधी जनों तक साझा करने की भी।यही कारण है कि आवाध रुप से मेरी लेखनी प्रायः चलते रहती है- बहुविषयों की क्यारियों में।

तन्त्र जैसे गूढ़ विषय में गुरु बनने की न तो मुझमें क्षमता है,और न लालसा। फिर भी एक अनुभवी प्रयोगकर्ता के नाते यदि आपको मुझसे कुछ अपेक्षायें हों,तो स्वागत है।मैं अहर्निश प्रस्तुत हूँ आपके मार्ग-दर्शन हेतु- जहां तक मार्ग मुझे दीख रहा है।

एक आग्रह पुनः करना चाहूंगा कि पूरी श्रद्धा,विश्वास और लगन के साथ इस मार्ग में आगे बढ़ सकते हैं।महज कुतूहल से कुछ नहीं होता।

इन वनस्पतियों पर किये गये किसी भी प्रयोग का कतई दुरुपयोग करने की चेष्टा न करें,अन्यथा लाभ के बदले हानि की अधिक आशंका है- निस्फलता तो निश्चित ही ।किसी के प्राण संकट में हों,किसी की आबरु पर

आ बनी हो, वैसी स्थिति में उक्त प्रयोगों को करें।अवांछित यश और धन-लोलुपता के शिकार न हों।

आपका सामान्य जीवन एक साधक का जीवन हो- एक भटके हुए पथिक का जीवन हो- जिसे व्यग्रता हो – घर वापसी की।वस्तुतः हम सभी अपनी मंजिल से विछड़े हुए इनसान ही तो हैं।परम पिता परमेश्वर ने दश इन्द्रियों के साथ एक मन दिया है,उसके ऊपर बुद्धि का वर्चस्व है,और उससे भी ऊपर विवेक की "परियानी"।इन सबका सतर्कता पूर्वक प्रयोग करें।यह दुनियां एक सराय है- किसी का घर नहीं।कुछ लेकर नहीं आये थे।जाते वक्त भी कुछ लेकर जाना सम्भव नहीं। अकेले आये हैं।जाते वक्त भी किसी का साथ नहीं मिलने वाला है।अकेले यात्रा करनी है- अपने घर पहुँचने का प्रयास करना है।अस्तु।

हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

तन्त्रशास्त्र-ग्रन्थाः

काकचण्डीश्वरकल्पतन्त्रम् । 'हरि' हिन्दी व्याख्योपेतम्
सम्पा० एवं व्याख्याकार— पं० हरिहरप्रसाद त्रिपाठी ७५.००

कालीतन्त्रम् । हिन्दीव्याख्यासंवलितम् ।
संपा. एवं टीकाकार— प्रो. लक्ष्मीदत्तशास्त्री मालवीय ५०.००

श्रीकालीपटलपञ्चाङ्ग । कालीकवच, महाकाली सहस्रनामस्तोत्र
श्रीकर्पूरादिस्तुति सहितः ४५.००

कालीपूजापद्धतिः। हिन्दी अनुवाद सहित।
संपा.+व्याख्या श्री कपिलदेव नारायण ३७५.००

कालीरहस्यम् । 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित । (कालीपञ्चाङ्ग-
कालीतन्त्र-कालीउपासना-कालीपूजापद्धतिरूपात्मकम्)।
सम्पादक— पण्डित शिवदत्त मिश्र शास्त्री ७५.००

गन्धर्वतन्त्रम् । 'ज्ञानवती' हिन्दी टीका एवं श्लोकानुक्रमणिका सहित।
व्याख्याकार—डॉ० राधेश्याम चतुर्वेदी ६७५.००

दुर्गासप्तशती। (सचित्र) 'सर्वमङ्गला' हिन्दी व्याख्या, पूजाविधान सहित ।
व्याख्याकार— पण्डित श्री हरेकांत मिश्र ।
सप्तशत्यङ्गष्टक पूजाविधि, मन्त्रकोश, नवचण्डी, शतचण्डी,
सहस्रचण्डी विधानादि सहित । सोधपूर्ण नवीन संस्करण ९५.००

बगलामुखीसाधना पद्धति । (बगलामुखी सहस्रनामावली सहित)
हिन्दी टीका सहित । टीकाकार पं. हरिहरप्रसाद त्रिपाठी ७५.००

भारतीय तन्त्रशास्त्र सिद्धान्त और साधना। प्रस्तुत ग्रन्थ चार खण्डों में विभक्त है—
प्रथमखण्ड तत्त्वमीमांसा (सिद्धान्त) पक्ष, द्वितीयखण्ड आचारमीमांसा,
तृतीयखण्ड सृष्टिमीमांसा, चतुर्थखण्ड प्रमुख तान्त्रिक दृष्टियाँ
—डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द' ७००.००

लक्ष्मीतन्त्रम् । पाञ्चरात्रागमान्तर्गतं । 'सुधा' हिन्दी व्याख्योपेतम् ।
सम्पादक एवं व्याख्याकार–डॉ. सुधाकर मालवीय ५७५.००

ललितोपाख्यानम्। ब्रह्माण्डपुराणान्तर्गतम्। 'निर्मला' हिन्दी
व्याख्या सहित। संपा.+अनु. डॉ. प्रो. दलवीर सिंह चौहान ५५०.००

शरभ-तन्त्रम् (पक्षिराज तन्त्रम्) आकाशभैरव कल्पोक्तम्। साधनात्मक
हिन्दी व्याख्या सहितम्। व्याख्याकारः–श्रीकपिलदेव नारायण। ३८५.००

Also can be had from : **Chowkhamba Sanskrit Series Office,** Varanasi.

ISBN 978-81-218-0377-9 ₹ 125.00